Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कैरली वैभव

डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

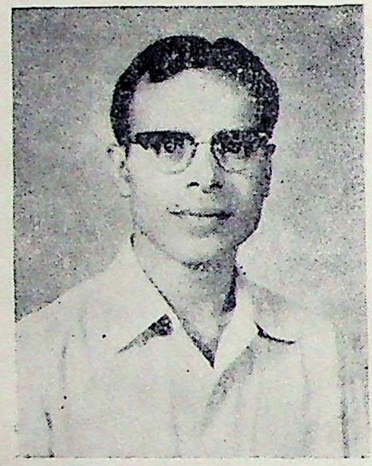

डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै

समालोचना और अनुवाद-कार्य में विशेष अभिरुचि। पंत-साहित्य के गंभीर अध्येता। लगभग 20 से अधिक ग्रंथ प्रकाशित। हिन्दी तथा मलयालम की साहित्यिक विधाओं पर प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में लेखन। शोध-प्रवंध 'पंत-काव्य में बिम्ब-योजना' उत्तर प्रदेश सरकार से पुरस्कृत। अंग्रेजी, हिन्दी तथा मलयालम की प्राचीन एवं वर्द्धमान आधुनिक विधाओं में विशेष दिलचस्पी।

यह ग्रंथ

मलयालम-साहित्य एवं साहित्यकारों पर समय-समय पर लिखे गये स्वतंत्र एवं मौलिक निबंधों का संकलन। प्रमुख कृतियों-साहित्यकारों पर तटस्थ दृष्टिकोण तथा साहित्यिक प्रवृत्तियों का नया मूल्यांकन। कैरली साहित्य के लंबे इतिहास की रूपरेखा। सरलतापूर्ण अभिव्यक्ति।

आवरण : हेनरी थॉमस्

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कैरली-वैभव

लेखक

डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै

प्रकाशक

दक्षिणांचलीय साहित्य समिति, हैदराबाद

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कैरली-वैभव

© डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै

प्रकाशक :

दक्षिणांचलीय साहित्य समिति
गांधीनगर, हैदराबाद–500380.

प्रथम संस्करण : दिसम्बर 1976

मूल्य : **10-00** रुपये

मुद्रक : किरण प्रकाशन, हैदराबाद

KAIRALEE VAIBHAVA
By Dr. N. P. Kuttan Pillai
Price : 10/-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रकाशकीय वक्तव्य

अहिन्दी-भाषी हिन्दी-लेखकों की सर्जनात्मक शक्तियों को प्रोत्साहित कर, उन्हें 'अक्षर' रूप देने के उद्देश्य से सन् 1972 में दक्षिणांचलीय साहित्य समिति की स्थापना की गई। यह बड़े सन्तोष की बात है कि विगत चार वर्षों में यह संस्था कई प्रकार के अभावों का सामना करते हुए भी अपनी लक्ष्यसिद्धि में पर्याप्त सफलता प्राप्त कर सकी है। संस्था के मुख्य लक्ष्यों में दक्षिणी-साहित्य-संपदा से समस्त भारत को—हिन्दी के माध्यम से—सुवासित करना भी प्रमुख है। इस ध्येय को लेकर, समिति ने 'दक्षिण में रामकथा' का प्रकाशन किया था जो अपने क्षेत्र का प्रथम सफल प्रयास माना गया। इस पुस्तक के विद्वान् लेखकों ने दक्षिण की भाषाओं में रामकथा की परंपरा तथा उक्त भाषाओं का आधिकारिक परिचय प्रस्तुत किया है। पिछले वर्ष आन्ध्र के प्रसिद्ध कवि तथा लेखक कविसम्राट विश्वनाथ सत्यनारायण कृत 'शाकुन्तलम् की अभिज्ञानता' शीर्षक आलोचनात्मक पुस्तक का हिन्दी-अनुवाद प्रकाशित किया गया। इस पुस्तक में 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' की कथावस्तु, चरित्र-चित्रण तथा कविकुलगुरु के रचना-चमत्कार पर अभिनव रूप से प्रकाश डाला गया। इस वर्ष विज्ञ पाठकों के हाथों डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै की रचना 'कैरली-वैभव' प्रस्तुत करते हुए हमें बड़ी प्रसन्नता हो रही है।

डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै ने हिन्दी-लेखन-क्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान बना लिया है। अब तक आपकी बीस से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। कविवर सुमित्रानन्दन पंत की काव्यकृतियों का मौलिक अध्ययन कर डा. पिल्लै ने जो शोध ग्रंथ प्रस्तुत किए हैं, वे बहुचर्चित एवं पुरस्कृत हैं। एषुतुच्छन् की 'अध्यात्म रामायण' का आपने नागरी-लिप्यन्तरण सहित हिन्दी-अनुवाद प्रस्तुत किया है जो भुवन-वाणी ट्रस्ट, लखनऊ द्वारा प्रकाश्य है। दक्षिणांचलीय साहित्य समिति के मंत्री के रूप में डा. पिल्लै ने प्रशंसनीय कार्य किया है तथा अपनी सहृदयता और स्नेहिल स्वभाव के कारण सब को आकृष्ट किया है।

प्रस्तुत पुस्तक डा. पिल्लै के 12 साहित्यिक निबन्धों का संकलन है। इन निबन्धों में डा. पिल्लै ने प्रचुर साहित्य से संपन्न कैरली साहित्य की विभिन्न काव्य-धाराओं तथा प्रवृत्तियों का सविस्तार तथा सोदाहरण परिचय देते हुए कैरली साहित्य के कतिपय महारथियों के कृतित्त्व की विश्लेषणात्मक समालोचना प्रस्तुत की है। केरल की साहित्य-संपदा के बारे में जानकारी प्राप्त करने के इच्छुक विद्वान् पाठकों को यह पुस्तक मलयालम-साहित्य का समग्र दिग्दर्शन करा सकेगी, ऐसा विश्वास है।

इसी प्रकार दक्षिण की विभिन्न भाषा-साहित्यों का परिचय देने वाली पुस्तकों तथा उत्तम अनुवादों का प्रकाशन समिति द्वारा योजनाबद्ध है। सम्प्रति हिन्दी की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहावतों के समतुल्य दक्षिण की भाषाओं की कहावतों के संकलन की बृहद्‌योजना पर काम हो रहा है।

सहृदय पाठकों तथा विद्वज्जनों की सत्प्रेरणाओं तथा प्रोत्साहन का संबल लेकर, आशा है, समिति अपनी योजनाओं को सफलतापूर्वक कार्यान्वित कर सकेगी।

कम समय में सुन्दर साज-सज्जा के साथ इस पुस्तक को मुद्रित करने में 'किरण प्रकाशन' के संचालक श्री कामता प्रसाद जी का हार्दिक सहयोग प्राप्त हुआ, जिसके लिए समिति उनकी सदैव आभारी है।

इतिशम्,

गान्धीनगर,
हैदराबाद-500380
दिनांक 14-12-1976

डॉ. भीमसेन 'निर्मल'
अध्यक्ष
दक्षिणांचलीय साहित्य समिति

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भूमिका

दक्षिणांचलीय साहित्य समिति ने थोड़े-से समय में दक्षिणात्य भाषाओं और हिन्दी के साहित्य में आदान-प्रदान का स्तुत्य प्रयास किया है। समिति ने 'कैरली वैभव' नामक इस संग्रह को प्रकाशित कर निश्चित रूप से उन प्रयासों में एक कीर्त्तिमान स्थापित किया है जो भारतीय संस्कृति के व्यापक स्वरूप को उजागर करते हैं। केरल दक्षिण भारत का एक प्रकार से अंतिम भूभाग है, किन्तु प्राचीन काल से भारतीय वाङ्मय की जो अजस्र धारा पूरे मनीषियों और सहृदय पाठकों को रस-विभोर करती रही है, उस धारा के संपोषण और संवर्द्धन में इस छोर-वर्ती छोटे-से, किन्तु सुरम्य प्रदेश ने उल्लेखनीय योगदान दिया है।

इस संकलन में डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै के समय-समय पर प्रकाशित लेखों को एक क्रम से संगृहीत किया गया है। ये लेख अलग-अलग होकर भी एक-दूसरे के पूरक हैं। इसलिए यह पुस्तक लेखों का संग्रह मात्र न होकर एक सर्वांगीण अध्ययन है और प्रत्येक लेख पुस्तक के अध्याय का रूप ग्रहण करता है।

इस छोटी-सी पुस्तक में वह सब जानकारी है जो हिन्दी का एक पाठक मलयालम भाषा और उसके साहित्य के बारे में प्राप्त करना चाहता है। आरंभिक लेख 'कैरली साहित्य' व्यापक दृष्टिकोण से लिखा गया है, जिसमें केरल, उसकी भाषा और उसके साहित्यिक विकास को समझाया गया है। मलयालम के आदिकालीन 'पाट्टु' से लेकर बीसवीं शती के आधुनिकतम साहित्यकारों की कृतियों का एक सामान्य परिचय इस लेख से मिलता है। दूसरे और तीसरे लेखों से हमें मलयालय की राम और कृष्ण काव्य-परंपरा का सम्यक् ज्ञान प्राप्त होता है। केरलीय साहित्य के साथ हिन्दी की दोनों काव्य-परंपराओं का तुलनात्मक अध्ययन करनेवाले अनु-संधाताओं केलिए ये लेख अत्यन्त सहायक सिद्ध हो सकते हैं। लेखक ने संक्षेप में इन दोनों काव्य-परंपराओं की समानता एवं विषमता के संबंध में संकेत भी किया है।

हिन्दी ही नहीं, भारत की अन्य भाषाओं के अध्येताओं केलिए भी ये दोनों लेख उपयोगी हैं। हमारी सभी भाषाओं ने राम और कृष्ण के व्यक्तित्व तथा लीलाओं से जीवन प्राप्त किया है। हमारी सभी भाषाओं केलिए राम और कृष्ण का काव्य एक अनमोल धरोहर है। इस साहित्यिक परंपरा से अवगत हुए बिना मध्ययुगीन साहित्य ही नहीं, इतिहास और संस्कृति का अध्ययन भी असंभव है।

यदि संकलन में इसी तरह का कोई लेख आधुनिक-काल की प्रमुख धाराओं को समझने केलिए संकलित होता तो हिन्दी-पाठकों को वर्तमान केरलीय साहित्यिक प्रवृत्तियों से परिचय पाने में सहायता मिलती। इस आवश्यकता की पूर्ति लेखक ने केरल के आधुनिक विद्वानों पर अलग-अलग लेख लिखकर की है। कुमारन् आशान्,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वल्लत्तोल, चङ्ङम्पुषा, जी. शंकर कुरुप आदि ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने मलयालम को आधुनिक साहित्य की विभिन्न विधाओं से संपन्न ही नहीं बनाया है, अपितु ये ऐसे हस्ताक्षर हैं जिनके बिना केवल केरल ही नहीं, पूरे देश के आधुनिक चिंतन, कृतित्व एवं विचार-प्रणाली का समझना असंभव है। महाकवि वल्लत्तोल और अन्य केरलीय मनीषियों ने वर्त्तमानकाल को गौरवपूर्ण बनाया है। इन साहित्य-स्रष्टाओं के व्यक्तित्व और सृजनशीलता को इन लेखों के माध्यम से बड़ी सरलता से हृदयंगम किया जा सकता है।

हिन्दी के विचारक केरल के साथ-साथ अन्य दक्षिणी भाषाओं के साहित्यकारों के संबध में इस तरह की पुस्तकों की उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा करेंगे।

डॉ. श्रीराम शर्मा

हिन्दी-विभाग,
उस्मानिया विश्वविद्यालय
दिनांक 12-12-1976

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अनुक्रम

	पृ. सं.
◆ कैरली-साहित्य	9
◆ मलयालम रामकाव्य-परंपरा और एषुत्तच्छन्	19
◆ मलयालम में कृष्णकाव्य-परंपरा	36
◆ महाकवि कुमारन् आशान्	45
◆ महाकवि वल्लत्तोल की साहित्य-साधना	52
◆ गान-गंधर्व चङ्ङम्पुषा कृष्ण पिल्लै	60
◆ जी. शंकर कुरुप की कविता	70
◆ आधुनिक मलयालम कविता में राष्ट्रीयता	80
◆ मलयालम में हास्य-व्यंग्य-लेखन और सुकुमारन्	89
◆ पुरस्कृत साहित्य : अक्षरम्	97
◆ गर्भश्रीमान् महाराजा स्वातितिरुनाळ्	104
◆ हिन्दी-सेवी मलयालम के लेखक	112

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कैरली साहित्य

भारत असंख्य भाषाओं का देश है। यहाँ दो सौ से अधिक भाषाएँ प्रचलित हैं जिनमें से पन्द्रह भाषाओं को भारतीय संविधान से मान्यता प्राप्त हुई है। मलयालम को भारतीय भाषाओं में आठवाँ स्थान प्राप्त हुआ है। यह द्रविड़ गोत्र की भाषा मानी जाती है। तमिल, तेलुगु और कन्नड़ भाषाएँ भी द्रविड़ गोत्रजा हैं। द्रविड़ संस्कृति और द्रविड़ भाषा अति प्राचीन समझी जाती है। भारत की अति प्राचीन मोहन-जो दडो तथा हडपा की संस्कृति द्रविड़ संस्कृति सिद्ध हो चुकी है।

मलयालम या कैरली केरल की प्रान्तीय भाषा है। सह्याद्रि और अरब सागर के मध्य कासरगोड से कन्याकुमारी तक विस्तृत भूभाग केरल कहलाता है। केर वृक्ष (नारियल का वृक्ष) की अधिकता के कारण इस देश का नाम केरल पड़ा, ऐसा विद्वानों का मत है। केरल देश की प्राचीनता को सिद्ध करने वाले कई प्रमाण रामायण तथा महाभारत जैसे भारत के प्राचीन ग्रंथों में खोजे जा सकते हैं। केरल की उत्पत्ति के संबंध में यह किंवदन्ती प्रचलित है कि परशुराम ने गोकर्ण से कन्याकुमारी की ओर अपना परशु फेंका था और इससे वहाँ का सागर पीछे हट गया और केरल प्रदेश बना। इसी कथा को लक्ष्य करके केरल का एक नाम परशुराम क्षेत्र या भार्गव क्षेत्र भी है। आधुनिक गवेषणाओं ने यह प्रमाणित कर लिया है कि अति प्राचीन काल में रोम, अरब जैसे देशों के साथ केरल का व्यापारिक संबंध रहा। केरल की भाषा मलयालम के संबंध में यह विचार व्यक्त किया जाता है कि पहले 'मल' (पर्वत) और 'आषि' (समुद्र) के मध्य में स्थित देश केलिए यह नाम प्रचलित था। कुछ अन्य विद्वानों का विचार है कि 'मल' और 'अळं' (देश) के संयोग से यह शब्द बना जिसका अर्थ हुआ पर्वत का देश। ये दोनों मत तर्क युक्त एवं संगत जान पड़ते हैं।

मलयालम भाषा की उत्पत्ति के संबंध में तीन मत प्रचलित हैं। मलयालम पर तमिल तथा संस्कृत दोनों का पर्याप्त प्रभाव पड़ा था। इस भाषा में प्रचलित संस्कृत शब्दों की भरमार देखकर कुछ विद्वानों ने यह मन्तव्य प्रस्तुत किया था कि मलयालम संस्कृत से उत्पन्न हुई है। इस मत को स्वीकार करने में कठिनाई यह है कि मलयालम के कारकों, प्रत्ययों, सर्वनामों आदि पर संस्कृत का कोई प्रभाव परिलक्षित नहीं होता, जबकि पाणिनि-सूत्र के अनुसार किसी भाषा का गोत्र निर्धारित करने केलिए उसमें प्रचलित इन्हीं चीज़ों पर ध्यान दिया जाता है। अतः मलयालम का संस्कृतेतर गोत्र का होना सिद्ध होता है। डा. काल्डवेल महोदय ने सर्वप्रथम अपनी यह धारणा प्रकट की थी कि मलयालम तमिल की पुत्री है। डा. काल्डवेल ने प्राचीन मलयालम पर तमिल के प्रभाव को देखकर अपना विचार प्रस्तुत किया था। अब कई विद्वानों ने काल्डवेल महोदय के इस भ्रम का निराकरण करते हुए यह प्रमाणित

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कर दिया है कि दक्षिण भारत की भाषाओं—तमिल, तेलुगु, मलयालम और कन्नड़ केलिए कारणभूत एक मूल द्रविड़ भाषा रही थी, जिससे इन भाषाओं ने अपना विकास प्राप्त किया है। इस दृष्टि से तमिल और मलयालम का संबंध माता-पुत्री का न रह कर भगिनियों का होता है। प्रसिद्ध विद्वान गुण्डर्ट ने भी यही मत व्यक्त किया था। मलयालम साहित्य के गंभीर अध्येता आट्टूर कृष्ण पिशारटी, डा. गोद वर्मा तथा उल्लूर एस. परमेश्वर अय्यर ने पर्याप्त तर्क देकर यह सिद्ध कर दिया है कि मलयालम का आदिम रूप तमिल का न होकर मूल द्रविड भाषा का था। मलयालम का प्राचीन साहित्य उपलब्ध नहीं है। प्रामाणिक रचनाएँ 15 वीं शती के आसपास से प्राप्त होती हैं। उसके पूर्व की रचनाओं को खोज निकालने की ओर संतोषजनक कार्य नहीं हो सका; जो थोड़ी रचनाएँ पहले की प्राप्त होती हैं, उनपर गवेषणात्मक अध्ययन अभी नहीं हुआ है। मलयालम का उपलब्ध अति प्राचीन ग्रंथ 12 वीं शती का 'रामचरितम्' है, जिसमें तमिल शब्दों की अधिकता पाकर यह नहीं सिद्ध किया जा सकता कि मलयालम तमिल की पुत्री है। ये शब्द दोनों भाषाओं में मूल द्रविड से आये हैं। यही नहीं प्रामाणिक सूत्रों से आज यह विदित हो चुका है कि पहले मूल द्रविड भाषा को और खासकर उसकी दक्षिणी शाखा को तमिल नामकरण दिया गया था। मलयालम के स्वतंत्र अस्तित्व की घोषणा करने वाली प्रथम रचना 'लीला तिलकम्' नामक संस्कृत ग्रंथ है, जो 14 वीं शती का है। इससे यह स्पष्ट है कि लीला तिलककार के समय तक मलयालम भाषा एवं व्याकरण की सुदृढ़ भित्ति पर खड़ी हो चुकी थी। किसी भाषा को अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व बनाने में पर्याप्त समय लगता है। यही नहीं, मलयालय में दैनिक जीवन में प्रयुक्त, किन्तु तमिल भाषियों केलिए अपरिचित, पर प्राचीन तमिल साहित्य में प्रयुक्त कई प्राचीन शब्दों की एक लंबी सूची एम. राघव अय्यंगार ने संगृहीत कर रखी है। अतः स्पष्ट है कि ये शब्द केवल तमिल के नहीं, मूल द्रविड भाषा के हैं, जो दोनों भाषाओं में समान रूप से व्यवहृत होते रहे थे। मलयालम की उत्पत्ति के संबंध में तीसरा मत इसे तमिल-संस्कृत मिश्रित भाषा से उत्पन्न मानता है। पुष्ट प्रमाणों के अभाव में यह तीसरा मत प्रचलित नहीं हो सका। अतः दूसरा मत ही अधिकांश विद्वानों से स्वीकृत है।

मलयालम 'वट्टेपुत्तु' लिपि में लिखी जाती थी। गोलाकार के कारण उस लिपि का यह नाम पड़ा था। 18 वीं शती तक उस लिपि का प्रचार रहा। उसे अशोक की ब्राह्मी लिपि का विकसित रूप माना जाता है। ईसा की तीसरी शती में केरल में आये मार्कोपोलो ने अपने यात्रा-संस्मरण में यह स्पष्ट लिखा था कि मलयालम का अपना लिपि-समूह है। पर धीरे-धीरे मलयालम में संस्कृत शब्दों का प्रचार बढ़ता गया तो उन शब्दों केलिए नये ग्रंथाक्षर की आवश्यकता पड़ी तो पुराने 'वट्टेपुत्तु' में रूपान्तर होने लगा और धीरे-धीरे वर्तमान मलयालम लिपि बनी। मलयालम में 51 लिपि चिह्न हैं जिन्हें मलयालम की 'अक्षरमाला' की संज्ञा दी जाती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भाषा-साहित्य के विकास को प्राचीन काल, मध्यकाल और आधुनिक काल में विभाजित करने की एक परंपरा चल पड़ी है। पहले पहल प्रसिद्ध विद्वान ग्रिम ने अंग्रेजी साहित्य का ऐसा विभाजन किया था, जो कालान्तर में अन्य साहित्य के इतिहासकारों केलिए भी आदर्श बन गया। इसी आदर्श पर मलयालम साहित्य को भी प्राचीन काल (12 वीं शती तक), मध्यकाल (13 से 16 वीं शती तक) और आधुनिक काल (16 वीं शती से) में वहुधा विभाजित किया जाता है। इस विभाजन की अपेक्षा प्रवृत्तिपरक दृष्टि से मलयालम साहित्य के विकास को समझना सुगम होगा।

मलयालम का आदिम साहित्य पाट्टु (गान) शैली में प्राप्त होता है। ये पाट्टु (गान) जीवन के नाना क्षेत्र से संबंधित हैं। मलयालम में प्राप्त इन गानों के ताराट्टु पाट्टु, (पालना गीत), कल्याण पाट्टु (विवाह गीत) ओण पाट्टु, तुम्पि पाट्टु (तितली गीत) तिरुवातिरा पाट्टु (एक प्रकार का नृत्य गीत), मत संबंधी पाट्टु (धार्मिक गीत), ब्राह्मणी पाट्टु (ब्राह्मणियों के गीत), कृषि पाट्टु, वंचिपाट्टु (नौका गीत), प्रेम पाट्टु आदि कई रूप देखे जा सकते हैं। केरल में इन लोकगीतों का बड़ा प्रचार रहा था। इन लोकगीतों के समय-निर्धारण केलिए प्रभूत प्रमाणों का अभाव है। ये गीत जन-परंपरा से चले आ रहे हैं और आज भी विशिष्ट अवसरों पर ये गीत गाये जाते हैं। ये गीत संगीतात्मक ही नहीं, बड़ी मात्रा में नाटकीय भी होते हैं। इन लोक गीतों के समानांतर कथात्मक गीतों की भी एक लंबी परपंरा रही जिनमें वटक्कन् पाट्टु, (उत्तरी गीत), माप्पिल पाट्टु (मुसलमानों के गीत), भद्रकाळि पाट्टु, अय्यप्पन् पाट्टु, मावारतम् पाट्टु, कोलटि पाट्टु आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। वटक्कन् पाट्टु अधिकतर वीरगाथात्मक गीत हैं जिनमें वीर एवं साहसी नायकों की वीरता की कहानी का अतिरंजित वर्णन है। ऐसे वीरगीतों में पुत्तूरं वीट्टु के आरोमल् चेवकर, उसकी बहिन उण्णियार्चि और उसके पुत्र आरोमलुण्णि के अवदानों से संबंधित गीत पर्याप्त प्रसिद्ध हैं। आरोमर के रणांकण में जाने और लड़ते हुए मृत्यु पाने तथा वीर वनिता उण्णियार्चि के साहसपूर्ण कृत्यों के गीत आज भी केरल के घर-घर में प्रचलित हैं। तच्चोलि ओतेनन् भी अपनी वीरता के लिए प्रसिद्ध हैं और उनपर भी कई गीत रचे गये हैं। ये वटक्कन् पाट्टु मुख्यतः नायर तथा ईषवा जाति के चरित नायकों पर लिखे गये हैं। अरबी तथा मलयालम मिश्रित शैली में विरचित तथा वीर-श्रृंगारादि रस प्रधान 'माप्पिळ पाट्टु' का जन्म उत्तर केरल में हुआ, किन्तु उनका प्रचार समस्त केरल में है। 'भद्रकाळि पाट्टु' भवानी के स्तुति गीत हैं। 'ब्राह्मणी पाट्टु' काली के मंदिरों तथा मंगल अवसरों पर नायर-परिवारों में गाये जाते थे। शबरीमला धर्मशास्ता के प्रति जनता की अपार श्रद्धा आज भी विद्यमान है। वर्ष में एक बार चालीस दिनों का कठोर व्रतानुष्ठान करके भक्त लोग आज भी लाखों की संख्या में शबरीमला में प्रतिष्ठित शास्ता के दर्शनार्थ जाया

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

करते हैं। उनकी जीवन-गाथा रूप 'अय्यप्पन् पाट्टु' मलयालम की अक्षयनिधि ही नहीं, केरलीय जन-मानस में शाश्वत प्रतिष्ठा भी प्राप्त कर चुके हैं। इन कथात्मक गीतों में सर्वाधिक प्रसिद्ध 'मावारतम् पाट्टु' है, जिसमें कवि ने थोड़े से परिवर्तनों के साथ महाभारत का कथागान ही किया है। 'तेक्कन् पाट्टु' में प्रसिद्ध वीर इरविकुट्टि पिल्लै के साहस एवं वीरगति का वर्णन है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि प्राचीन लोक गीत विविध विषयों पर तथा वीर, शृंगार एवं भक्ति आदि रसों को महत्व देकर लिखे गये हैं। इन गीतों में वर्णन-पटुता एवं आलंकारिकता दर्शनीय है। भावावेग युक्त एवं संगीतात्मक ये गीत जनता के कंठहार हैं। इन गीतों से यह भी पता चलता है कि उन दिनों केरल में शिव तथा काली की पूजा-उपासना का प्रचार था। लोग भूत-प्रेत आदि पर विश्वास रखते थे। वीरता एवं साहस के प्रदर्शन में उनकी विशेष अभिरुचि थी।

मलयालम के लोकगीतों पर तमिल का प्रभाव कब पड़ने लगा, यह असंदिग्ध रूप में नहीं बताया जा सकता। किन्तु इसी समय आर्य-ब्राह्मणों के आगमन से संस्कृत का प्रभाव भी मलयालम पर पड़ने लगा था। बहुत से भाषाविदों के मतानुसार 'रामचरितम्' तथा 'राम कथा पाट्टु' प्राचीनतम मलयालम साहित्य के नमूने हैं। रामचरितम् 12 वीं शती की रचना है जिसे केरल के किसी महाराजा ने लिखा था। इसमें वाल्मीकि-रामायण के युद्धकांड का वर्णन है। भाषा पर तमिल का पर्याप्त प्रभाव है। इसी तमिल मिश्रित भाषा शैली में काव्य-रचना करने वाले और तीन कवि हुए जो 'निरणम् कवि' के नाम से प्रख्यात हुए। मध्यतिरुवितांकूर के निरणम् प्रदेश के माधव पणिक्कर, शंकर पणिक्कर तथा राम पणिक्कर ही ये निरणम् कवि थे। इन्होंने रामायण, महाभारत एवं भागवत को आधार बनाकर अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं। ये निरणम् कवि पर्याप्त प्रतिभावान एवं कैरली के सेवक थे। इनके बाद कैरली के साहित्याकाश पर एक ज्योतिर्मय नक्षत्र के समान चेरुश्शेरी नंपूतिरी का उदय हुआ, जिन्होंने अपनी 'कृष्णगाथा' तथा 'कष्णपाट्टु' नामक दो सरस कृतियों की महत् ज्योति विकीर्ण की। चेरुश्शेरी भगवान कृष्ण के परम भक्त एवं गायक थे। उन्होंने भागवत के दशमस्कंध के आधार पर श्रीकृष्ण की लीलाएं लिखीं जो 'कृष्णगाथा' के नाम से साहित्य में प्रसिद्ध हैं। यह पुस्तक संस्कृत मिश्रित मलयालम शैली का प्रोज्वल उदाहरण है। इसका पदलालित्य देखने योग्य है।

धीरे-धीरे संस्कृत का प्रचार केरल में बढ़ता गया क्योंकि केरल का शासन ब्राह्मणों के हाथों में आ गया। अतः मलयालम साहित्य भी संस्कृत के इस प्रभाव से बच नहीं सका। मलयालम तथा संस्कृत से मिश्रित मणि-प्रवाल शैली की श्री वृद्धि हुई। साथ ही संस्कृत के संदेश काव्यों ने मलयालम के कवियों पर अमिट प्रभाव डाला और उन्हीं की देखा-देखी मलयालम में कई संदेश काव्यों की रचना हुई। इन संदेश काव्यों में उण्णुनीलि संदेशम् का प्रमुख स्थान है जो कवि-कल्पना की प्रचुरता,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अभिव्यंजना-पाटव आदि सभी दृष्टियों से मलयालम में अनुपम स्थान का अधिकारी है। यह एक प्रकार से कालिदास के मेघदूत के अनुकरण पर रचा गया है।

इसी काल में एक और कवि का मलयालम में आविर्भाव हुआ। वे थे कोषिकोड के सामूतिरी के दरबारी कवि पूनम् नंपूतिरी। उन्होंने अनेक चंपू काव्यों की रचना की। चंपू गद्य-पद्यमय काव्यविधा है। संस्कृत के चंपू काव्य श्रव्य काव्य के अंतर्गत आते हैं जबकि मलयालम के चंपू दृश्यकाव्य—कूटियाट्टम् और कूत्तू—के रूप में प्राप्त होते हैं। पूनम्-नंपूतिरी कृत 'रामायण चम्पू' प्रसिद्ध रामकथा पर आधारित है। इसके उपरांत मषमंगलम् नंपूतिरी के 'नैषधम् चम्पू' का स्थान है। वैसे ही कामदहनम्, पारिजातहरणम्, बाणयुद्धम्, रामार्जुनीयम्, कंसवधम्, नारायणीयम्, कल्याण सौगंधिकम् जैसे असंख्य चम्पू काव्य मलयालम साहित्य की समृद्धि एवं वैभव के द्योतक हैं।

संस्कृत प्रभावकाल में कई स्तोत्र एवं स्तुतिगीत भी रचे गये हैं। ये स्तुतिगीत कुछ तो वीररस प्रधान हैं जो समरगीत कहला सकते हैं। साथ ही देवी-देवताओं पर कीर्तन भी इस काल की उपलब्धि हैं। ऐसे गीतों में श्रीकृष्ण की मधुर लीलाओं पर लिखी गयी भक्तशिरोमणि पून्तानम् नंपूतिरी की कविता सर्वोपरि है। उनकी ज्ञान पाना और श्रीकृष्ण कर्णामृतम् भक्ति रस से आप्लावित हैं। पून्तानम् जैसा भक्त कवि केरल में दूसरा नहीं है। उनके भाव-विह्वल हृदय की सरस अभिव्यक्ति आद्यन्त हमें मोह लेती है।

सत्रहवीं शती कैरली का स्वर्णिम समय रहा। इसी शती में भक्तोत्तंस महाकवि एषुत्तच्छन् का आविर्भाव हुआ। वास्तव में वे आधुनिक मलयालम के जनक हैं। मलयालम को तमिल के अत्यधिक प्रभाव से उन्होंने मुक्त किया और मणि-प्रवाल शैली का परिष्करण किया। वे भाषा-सुधारक तथा सहृदय कवि थे। उनकी भाषा मणि-प्रवाल शैली का प्रोज्वल स्वरूप है। यही नहीं, कैरली में एक नयी काव्य-शैली जिसे 'किळिप्पाट्टु' कहते हैं, के वे प्रवर्त्तक थे। शारिकाओं से गीत गँवाना ही 'किळिप्पाट्टु' शैली है। एषुत्तच्छन् की किळिप्पाट्टु शैली ने मलयालम काव्य-साहित्य में एक क्रांति ही मचा दी। उन्होंने धार्मिक विषयों को लेकर ही अपनी किळिप्पाट्टु शैली का प्रवर्तन किया था। 'अध्यात्मरामायणम्' और 'महाभारतम्' उनकी इस नूतन शैली के समुज्ज्वल उदाहरण हैं। आगे केरल वर्मा ने रामचरित को आधार बनाकर इसी शैली में अपनी 'केरल वर्मा रामायणम्' की रचना की। इसी शैली को आधार बनाकर बाद में हँसगीत आदि भी मलयालम में रचे गये।

मलयालम की काव्य विधाओं में कथकळि या आट्टकथा का विशिष्ट स्थान है। आट्टकथाएँ दृश्य-श्रव्य काव्य-शैली में लिखी गयी हैं। यह आट्टकथा केरल में प्रचलित नाट्य शैली 'चाक्यार कूत्तु' का विकसित रूप है। आट्टकथा में नृत्य तथा नाट्य दोनों का समुचित संयोग देखा जा सकता है। प्रत्येक पद का अर्थ हस्त-मुद्राओं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

से दर्शाना नृत्य है और वाक्यार्थ का अभिनय ही नाट्य है। वाक्यार्थ के अभिनय में भाव के साथ रस का भी आविष्करण किया जाता है। भरत के नाट्य शास्त्र में उल्लिखित मुद्राएँ ही आट्टकथा में स्वीकृत हैं। लेकिन ये मुद्राएँ नाट्य शास्त्र में निर्दिष्ट परिभाषा का अनुसरण न करते हुए एक अन्य ग्रंथ 'हस्त लक्षण दीपिका' नामक नाट्य ग्रंथ का अनुसरण करती हैं।[1] उसके अनुसार 24 मुद्राओं के द्वारा कथकळि के नट अपने पदों के अर्थ की व्यंजना करते हैं। नाटक और कथकळि में भिन्नता इस बात में है कि नाटक में अभिनय की प्रधानता है जबकि कथकळि में भावाभिनय की। कथकळि या आट्टकथा के दो रूप केरल में प्रचलित हैं—कृष्णनाट्टम् और रामनाट्टम्। आट्टकथाकारों में कोट्टयम् तंपुरान्, उण्णाई वारियर, अश्वतितिरुनाळ् तंपुरान् और इरयिम्मन् तम्पि के नाम विशेष आदर के साथ लिये जा सकते हैं। कोट्टयम् तंपुरान् ने बकवधं, कल्याण सौगंधिकं, कालकेय वधं और किर्मीर वधं नामक चार आट्टकथाएँ लिखी हैं।

मलयालम में महाकवि एषुत्तच्छन् के बाद सबसे अधिक आदर के साथ लिया जाने वाला नाम कुंचन नंपियार का है। इनका जन्म अठारहवीं शती के प्रारंभ काल में हुआ था। इन्होंने 'तुळ्ळल्' नामक एक नयी काव्य-शैली का सूत्रपात किया था। यह तुळ्ळल् द्रुतगति से पाद-संचालन व ताल के साथ किया जाने वाला नृत्य विशेष है। तुळ्ळल् में वृत्तबंध और उसकी कविता-रीति की विशेष महत्ता है। इसमें शीतकन्, परयन् और ओट्टन् नामक तीन वृत्त प्रसिद्ध हैं। प्रथम दोनों शीघ्र गाने योग्य और तृतीय मंद गाने योग्य मात्रावृत्त हैं। कुंचन नंपियार ने सामान्य जनता को दृष्टि में रखते हुए पुराणों में प्रसिद्ध कथावस्तुएँ अपनायीं और सामान्य जनता की भाषा में अपनी तुळ्ळल् शैली प्रस्तुत की। कुंचन अपने हास्य केलिए समस्त केरल में प्रख्यात हैं। पौराणिक कथाओं को आधार बनाकर भी उन्होंने प्रचलित सामाजिक रूढ़ियों, परंपराओं एवं आचार-विचारों पर करारा व्यंग्य किया और कुंचन की वाणी का यह प्रभाव था कि चोट खाकर भी लोग हँसते-हँसते लोट-पोट हो जाते थे। फलतः तुळ्ळल् केरल की जनता की सब से प्रिय साहित्य-विधा बन गया।

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक आते-आते अंग्रेज़ी राज्य-स्थापना के फल-स्वरूप केरल में अंग्रेज़ी शिक्षा-दीक्षा का प्रचार बढ़ा और अंग्रेज़ी साहित्य तथा तद्द्वारा विश्व साहित्य के प्रति जनता का आकर्षण बढ़ता गया। मुद्रणालयों की स्थापना एवं पत्र-पत्रिकाओं के प्रचार से साहित्य के क्षेत्र में पर्याप्त उन्नति एवं विकास होने लगा। मुद्रणालयों के प्रचार ने पुस्तकों के प्रकाशन का द्वार खोल दिया और बड़ी संख्या में पुस्तकें प्रकाशित हो बाहर आने लगीं। पद्य के समान ही गद्य साहित्य का भी श्री गणेश एवं विकास होने लगा। इस प्रकार मलयालम साहित्य के क्षेत्र में

---

1. साहित्य चरित्रम्: प्रस्थानङ्ङळिलूटे, संपादक : डा. के. एम. जार्ज, पृ. 499

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

एक नये जागरण का सूत्रपात हुआ। मलयालम की गद्य एवं पद्य शाखाओं को परिपुष्ट एवं विकसित करने का पूरा श्रेय 'केरल कालिदास' के नाम से अभिहित केरलवर्मा वलिय कोइतंपुरान् को प्राप्त होता है। कोइतंपुरान् बड़े भाषा शास्त्री, वैयाकरण एवं उच्चकोटि के साहित्यकार थे। उनका हृदय कवि का था तो मस्तिष्क उर्वर आलोचक का था। तिरुवितांकूर की पाठ्य पुस्तक समिति के अध्यक्ष के नाते उनकी सेवाएँ सदा अविस्मरणीय रहेंगी। उनके भावुक कवि-हृदय का परिचय 'मयूर संदेशम्' नामक संदेश काव्य में प्राप्त होता है। 'क्षमापण सहस्रम्' तथा 'यम प्रणाम शतकम्' उनकी अन्य काव्य कृतियाँ हैं। 'गर्भ श्रीमान्' के उपनाम से प्रसिद्ध तथा अपने हिन्दी पदों के कारण समस्त हिन्दी क्षेत्र में समादरणीय महाराजा स्वाति तिरुनाल् राम वर्मा संगीत एवं साहित्य के अपार पंडित एवं पोषक थे। उनके समय केरल में संगीत की श्रीवृद्धि हुई। 'कथा कालक्षेपम्' अथवा 'हरिकथा' को प्रथम बार मलयालम में प्रारंभ करने का स्तुत्य कार्य महाराजा स्वाति तिरुवाल् ने किया था। उनके कई पद, कीर्त्तन एवं प्रबंध मलयालम की निधि हैं।

मलमालय की आधुनिक काव्य-धारा के लब्ध प्रतिष्ठित महाकवि हैं वल्लत्तोल एस. नारायण मेनन, कुमारन् आशान, उल्लूर एस. परमेश्वर अय्यर और के. सी. केशव पिल्लै। इनमें से आशान को छोड़ शेष तीनों ने महाकाव्यों की रचना करके महाकाव्य शाखा का प्रवर्त्तन किया। वल्लत्तोल कृत चित्रयोगम्', उल्लूर कृत 'उमा केरलम्' तथा केशवपिल्लै कृत 'केशवीयम्' मलयालम के अनुपम महाकाव्य हैं। वल्लत्तोल मलयालम के राष्ट्रीय कवि के नाम से प्रसिद्ध हैं। उनकी कविता राष्ट्रीय भावना से प्रेरित स्वदेश प्रेम के उद्गीथ हैं। बिना महाकाव्य की रचना किये महाकवि का स्थान प्राप्त करने वाले कुमारन आशान प्रेम-गायक कवि के रूप में प्रसिद्ध हैं। उन्होंने मलयालम में 'काल्पनिक प्रस्थानम्' का आरंभ किया। उनकी नलिनी, लीला, करुणा, दुरवस्था, चण्डाल भिक्षुकी जैसी रचनाएँ मलयालम खंडकाव्यों की श्रेणी में पर्याप्त सम्मान प्राप्त कर चुकी हैं। उल्लूर अपने गहन चिंतन एवं विद्वत्ता केलिए प्रसिद्ध हैं। पिंगला, मृणालिनी जैसे खंडकाव्यों तथा असंख्य फुटकर कविताओं से उन्होंने मलयालम की सेवा की। केशव पिल्लै कृत 'आसन्न मरण चिन्ता शतकम्' मलयालम के शतक-साहित्य केलिए नयी उपलब्धि है। इन महाकवियों के संबंध में मलयालम में यह उक्ति प्रचलित है कि वल्लत्तोल में शब्द-सौन्दर्य, आशान् में भाव गांभीर्य और उल्लूर में भाषा-पांडित्य झलकता है। के. सी. केशव पिल्लै में इन तीनों गुणों का सामंजस्य है। इस उक्ति से भले ही हम पूर्णतया सहमत न हों, लेकिन इतना तो निश्चित है कि यह उक्ति चारों महाकवियों के एक-एक पक्ष का उद्घाटन अवश्य करती है। उपर्युक्त चार महाकवियों के बाद नालपाट्टु नारायण मेनन का उल्लेख होना चाहिए जिनका 'कण्णुनीर तुळ्ळि' (अश्रुकण) विलाप काव्यों में विशिष्ट स्थान रखता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मलयालम में रोमान्टिक काव्यधारा के प्रवर्त्तक के रूप में इटप्पळ्ळि राघवन् पिल्लै और चंगम्पुषा कृष्ण पिल्लै समाराध्य कवि हैं। इनकी कविताओं के साथ ही मलयालम में नयी पिक ध्वनि गुंजित हो उठी और आत्माभिव्यक्ति-प्रधान एवं प्रेम-सौन्दर्य पर आधारित नूतन काव्य-सरणी चल पड़ी। चंगम्पुषा गान-गंधर्व थे और अपने सुमधुर गीतों से उन्होंने समस्त जनता के हृदय में चिर प्रतिष्ठा प्राप्त की। भारतीय ज्ञानपीठ से पुरस्कृत महाकवि जी. शंकर कुरुप अपने भावगीतों, दार्शनिक एवं आध्यात्मिक चिन्तनों तथा प्रतीकात्मक शैली के कारण अपना पृथक व्यक्तित्व रखते हैं। नालपाट्टु नारायणि अम्मा ने अपनी कविता में नारीत्व की पावनता एवं तपःपूत आदर्श को दर्शाया है। अत्याधुनिक कवियों में पी. भास्करन, वैलोप्पिळ्ळिल् श्रीधर मेनन, वयलार रामवर्मा, ओ. एन. वी. कुरुप, पाला नारायणन नायर, एन. वी. कृष्णवारियर, सुगत कुमारी आदि श्रद्धेय हैं। पी. भास्करन ने जहाँ देश-प्रेम एवं राष्ट्रीयता के स्वर भरे हैं, वहीं अपनी प्रगतिशील भावनाओं को भी वाणी दी है। श्रीधर मेनन का स्वर शुद्ध केरलीय है। वयलार प्रगतिशीत साहित्य-कार हैं और अपने सुमधुर सिनेमा गीतों के कारण केरलीय जन-मानस में शाश्वत प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुके हैं। प्रसिद्ध गीतकार ओ एन. वी. कुरुप ने जन-जीवन को अपनी कविता में अभिव्यक्ति प्रदान की है। एन. वी. कृष्ण वारियर का स्वर इन सब से भिन्न है; वे मलयालम कविता में प्रयोगवाद के पुरोधा कवि हैं।

हमने मलयालम काव्यशाखा पर एक सरसरी नज़र डाली है। अब गद्य शाखा पर भी विचार करेंगे। हम पहले ही बता चुके हैं कि मलयालम में गद्य-विद्या उन्नीसवीं शती की देन है। गद्य साहित्य के विकास में ईसाई मिशनरियों की सेवाएँ अविस्मरणीय हैं। मलयालम गद्य साहित्य को पुष्ट करने तथा शुद्ध रूप प्रदान करने में केरल कालिदास का सर्वोपरि हाथ रहा। पाठ्य पुस्तक समिति के अध्यक्ष के रूप में उन्होंने कई पाठ्य पुस्तकों का निर्माण किया तथा सहयोगियों से लिखाया। उनका योगदान अक्षुण्ण है। उनके भागिनेय महापंडित ए. आर. राज राज वर्मा ने भी अत्यन्त प्रशंसनीय कार्य करके गद्य का बहुमुखी विकास किया। लेकिन गद्य-लेखकों के रूप में चन्तुमेनन तथा सी. वी. रामन पिल्लै का योगदान स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगा। मलयालम गद्य के उषाकाल में इन्दुलेखा तथा शारदा नामक दो सामाजिक उपन्यास लिखकर चन्तुमेनन ने उपन्यास परंपरा का श्री गणेश किया। जहाँ चन्तुमेनन की दृष्टि सामाजिक थी वहीं सी. वी. रामन पिल्लै की दृष्टि ऐतिहासिक रही। वे 'केरल के स्काट' के नाम से प्रसिद्ध हैं। मार्तण्ड वर्मा, धर्म राजा, राम राज बहादुर जैसे ऐतिहासिक उपन्यास उनकी लेखनी से प्रसूत हैं। इसी ऐतिहासिक उपन्यासकारों की श्रेणी में सरदार के. एम. पणिकर का नाम अवश्य ही उल्लेख्य है, जिन्होंने केरलसिंहम्, परंकि पटयाळी जैसे उपन्यास लिखकर अपनी अमिट छाप अंकित कर दी है। आधुनिक उपन्यासकार एवं कहानीकार जन-जीवन के पारखी हैं और सामाजिक जीवन की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

समस्त खूबियाँ एवं दुर्बलताएँ उनकी रचनाओं में प्रतिबिंबित हैं। वे जीवन के सूक्ष्म पारखी हैं और बड़ी ईमानदारी के साथ अपने अनुभवों को उपन्यास एवं कहानी में चित्रित करते हैं। उपन्यासकारों में तकषि शिवशंकर पिल्लै, मलयाट्टूर रामकृष्णन, के. राधा कृष्णन, केशवदेव, पारपुरम्, श्रीदेवी, एस. के. पोट्टक्काट, वैकम् मुहम्मद बशीर आदि ने काफी नाम कमाया है। तकषि का चेम्मीन (लाल मछली जिसका अनुवाद 'मछुआरे' के नाम से हुआ है) और रंटिटङ्ङषि (दो सेर धान), श्रीदेवी का 'यज्ञं' तथा पारपुरत्तु का 'मटक्क यात्रा' (वापसी) किसी भी साहित्य केलिए गौरव की रचनाएँ हैं। कथाकारों की संख्या अनगिनत है। यहाँ जीवन के सभी पहलुओं पर कहानियाँ लिखी गई हैं। कहानीकारों में नागवल्ली आर. एस. कुरुप, केशवदेव, कारूर नीलकंठ पिल्लै, पोनकुन्नम् वर्की, काक्कनाटन, सेतु, एम. सुकुमारन, ओ. वी. विजयन, एम. मुकुन्दन, सब एक से एक अच्छे लेखक हैं।

प्रारंभिक नाटकों में सी. वी. रामन पिल्लै के 'चंद्रमुखी विलासम्' का स्थान रहा। वलिय कोइत्तम्पुरान ने संस्कृत शाकुन्तलम् का अनुवाद किया था। अन्य नाटककारों में प्रसिद्ध चंपत्तिल चात्तुक्कुट्टि मन्नाटियार, कैनिकरा कुमार पिल्लै, गोपीनाथन नायर, एन. पी. चेल्लप्पन नायर आदि हैं। मुंशी परमु पिल्लै के नाटक सामाजिक कुरीतियों का पर्दाफाश करने में सफल हुए। वे मलयालम के बर्नार्ड शा कहलाते हैं। वर्तमान नाटककारों में एन. कृष्ण पिल्ले, के. टी. मुहम्मद और एन. पी. मुहम्मद के नाम लिये जा सकते हैं।

मलयालम निबंध शाखा को परिपुष्ट करने की ओर मलयाल मनोरमा समिति तथा भाषा पोषिणी सभा ने प्रशंसनीय कार्य किया था। 'मलयाल मनोरमा' पत्रिका के संस्थापक कंटत्तिल् वर्गीस माप्पिला अच्छे निबंधकार एवं पत्रकार थे। 'केसरी' के नाम से विख्यात वेङ्ङयिल कुञ्जिरामन नायर ने अपने लेखों के द्वारा मलयालम को एक नयी दिशा प्रदान की। 'सञ्जयन' उपनाम धारी एम. आर. नायर, ई. वी. कृष्ण पिल्लै, देशाभिमानी के. रामकृष्ण पिल्लै तथा 'साहित्य पंचानन' पी. के. नारायण पिल्लै आदि उच्च स्तरीय गद्य लेखक रहे। आधुनिक निबंध-लेखकों में के. पी. केशव मेनन, के. दामोदरन, एम. गोविन्दन, आदि का योगदान कम महत्व का नहीं है।

समीक्षा-साहित्य विकसित है। यहाँ व्यक्ति-प्रधान एवं विषय-प्रधान आलोचनाएँ लिखी गई हैं, प्रधानता विषय प्रधान की रही। समीक्षा क्षेत्र में पी. शंकरन नायर, पी. दामोदरन पिल्लै, एस. गुप्तन नायर, डा. एस. के. नायर, कुट्टि कृष्ण मारार, डा. के. एम. जार्ज, इलंकुलम् पी. एन. कुञ्जन पिल्लै, प्रोफसर डी. पद्मनाभन् उण्णि, ए. डी. हरिशर्मा, एम. पी. अप्पन आदि की आलोचनात्मक शैली स्तरीय एवं गंभीर होती है। अपने मौलिक विचार एवं नयी सूझ-बूझ के कारण कुट्टि कृष्ण मारार ने अपना महत्व स्वयं सिद्ध कर दिया है। गवेषणात्मक एवं तथ्य-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परक आलोचना के क्षेत्र में चेलनाटु अच्युत मेनन अपने क्षेत्र में अकेले हैं। तुलनात्मक समीक्षा के क्षेत्र में ए. बाल कृष्ण पिल्लै तया जोसफ मुण्डशेरी ने ख्याति प्राप्त कर ली है। एन. वी. कृष्ण वारियर ने भी समीक्षा को नयी दिशा एवं गति दी है।

मलयालम अपने हास्य-लेखन केलिए संसार के किसी भी भाषा-साहित्य से स्पर्धा कर सकती है। यहाँ हास्य लेखन की परंपरा सदियों पुरानी है। कुंचन नंपियार अपने हास्य केलिए पर्याप्त यशस्वी हैं। ई. वी. कृष्ण पिल्लै, सञ्जयन, मलबार सुकुमारन, पी. के. राज राज वर्मा आदि के हास्य-लेखन की चारुता एवं प्रभविष्णुता दर्शनीय है। जीवनी-साहित्य के क्षेत्र में ए. डी. हरिशर्मा, पी. के. परमेश्वरन नायर और सीतारामन ने पर्याप्ति सफलता प्राप्त की है। यात्रा-संस्मरण लिखने में एस. के. पोट्टक्काट ने विशेष रुचि दिखाई है।

ऊपर मलयालम साहित्य के विकास पर एक सरसरी दृष्टि डाली गयी है। यह सिद्ध हो चुका है कि तमिल, तेलुगु एवं कन्नड़ जैसे मलयालम भी द्रविड़ गोत्र की स्वतंत्र भाषा है और वह भी इतर भाषाओं के समान साहित्यिक गरिमा एवं व्यक्तित्व को लिये हुए है। काव्य, कहानी एवं उपन्यास की विधाओं ने अन्य विधाओं की तुलना में काफी प्रगति कर ली है। अपनी समृद्धि एवं व्यापकता की दृष्टि से मलयालम साहित्य का भारतीय भाषा-साहित्यों में अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व एवं महत्व है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मलयालम रामकाव्य परंपरा और एषुत्तच्छन्

मध्यकालीन भारतीय साहित्य का आधार भक्ति है और भक्ति चेतना ने दो युगांतरकारी पुरुष राम तथा कृष्ण के अवदानों को लेकर अपना विकास प्राप्त किया। इस भक्तिधारा ने समस्त भारतीय भाषाओं के साहित्य का आश्लेष किया और भक्ति की सुरसरिता साहित्य में प्रवाहित हुई।

भारत के सुदूर दक्षिण में स्थित केरल प्रदेश का मध्यकालीन साहित्य भी भक्ति की पुनीत धारा से ओत-प्रोत रहा। इस भक्ति साहित्य में राम काव्यों का विशिष्ट स्थान है। मलयालम में राम-काव्यों की एक सुदीर्घ परंपरा रही है। बात यह है कि यह प्रांत प्राचीनकाल से संस्कृत भाषा के अध्ययन-अध्यापन का केन्द्र रहा और यहाँ संस्कृत के अनेक विद्वान हुए। इसका परिणाम यह हुआ कि यहाँ वाल्मीकि रामायण तथा अध्यात्म रामायण का पठन-पाठन होता रहा और इन दोनों ग्रंथों ने भावी रामायणकारों का मार्ग-दर्शन किया। यहाँ तक कि मलयालम के अति प्राचीन लोक गीतों तक में रामकथा को अत्यधिक प्रश्रय प्राप्त हुआ था। आज भी केरल के प्रत्येक घर में संध्याकालीन भजन-कीर्तन में रामनाम संकीर्तन को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है और इन कीर्तनों में प्राचीन रामकथा सुरक्षित है। धर्मप्राण केरलीय जनता केलिए श्रीरामचंद्रजी सर्वाधिक आदर्श पूर्ण देवता हैं और उनके अवदानों का वर्णन निरंतर होता आ रहा है। लोकगीतों में प्रचलित यही रामकथा आगे के राम काव्यों की उत्स भूमि है।

मलयालम भाषा में उपलब्ध अति प्राचीन रामकाव्य 'रामचरितम्' है और इस ग्रंथ को सामान्य जनता में प्रचलित करने तथा इसका महत्व सिद्ध करने में जर्मन विद्वान डा. गुण्डर्ट का बड़ा हाथ रहा। ऐसा माना जाता है कि तिरुवितांकूर के किसी राजा ने इसकी रचना की है। यह ग्रंथ पाट्टु (गीत) शैली का समुज्वल उदाहरण है। यह एक प्रकार से अर्ध-तमिल ग्रंथ है। इसके रचयिता का नाम आज भी संदिग्ध है। रचयिता का नाम चीरामन दिया हुआ है, जो प्रसिद्ध महाकवि एवं इतिहासकार उल्लूर एस. परमेश्वरअय्यर के अनुसार तिरुवितांकूर के उस समय के राजा श्री वीर रामवर्मा के अतिरिक्त कोई नहीं था। इस ग्रंथ का नाम भी ईराम-चरित ही माना जाता है। कहा जाता है कि सैनिकों को युद्ध केलिए प्रोत्साहित करने तथा उनमें साहस भरने के विचार से इसकी रचना की गयी थी। इसका मुख्य रस वीर ही है। जो भी हो मलयालम का प्रथम काव्य-ग्रंथ होने का गौरव भी इसी को प्राप्त है। रामायण के लंकाकांड को आधार मानकर लिखा हुआ होने पर भी बीच-बीच में सुन्दरकांड, अरण्यकांड तथा किष्किंधाकांड की कथाओं का भी इसमें संकेत मिल जाता है। इस ग्रंथ पर वाल्मीकि-रामायण तथा कंब-रामायण का

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रभाव भी स्पष्ट परिलक्षित होता है। द्रविड लिपियों में रचे इस ग्रंथ में छन्द तमिल के हैं और शब्दों पर भी तमिल का अत्यधिक प्रभाव देखा जा सकता है। कई घटना-प्रसंगों में कवि वाल्मीकि का ऋणी है और कहीं-कहीं वाल्मीकि रामायण के श्लोकों का शाब्दिक अनुवाद भी प्राप्त होता है। भाषा में कवि पूर्णतया स्वच्छन्द रहा। मलयालम, तमिल और संस्कृत शब्दों के मिश्रित प्रयोग के कारण भाषा दुरूह एवं क्लिष्ट है। वाल्मीकि और कंबर के ऋणी होते हुए भी कई प्रसंगों में कवि की नूतन कल्पनाएँ भी पर्याप्त मात्रा में मिलती हैं।

रामकाव्यों की परंपरा में "रामकथा पाट्टु" दूसरी कड़ी है। इसके रचयिता तिरुवितांकूर के नेय्याट्टिनकरा के कोवलम् नामक प्रदेश के एक कृषक अय्यंपिल्लै आशान् थे। उनमें काव्य-प्रतिभा एवं काव्य-चातुरी प्रचुर मात्रा में थी, किन्तु अपने पांडित्य-प्रदर्शन केलिए उन्होंने इस ग्रंथ की रचना नहीं की; वे भक्त थे और उसी भक्तिविह्वल हृदय के उद्गार ही इसी कृति का सर्वस्व हैं। यह ग्रंथ बहुत समय तक प्रकाश में नहीं आ पाया था। इसे सर्वप्रथम प्रकाश में लाने का श्रेय डा. पी. के. नारायण पिल्लै को प्राप्त होता है। उन्होंने बड़ी विस्तृत व्याख्या तथा टिप्पणियों के साथ सन् 1965 में इसे प्रकाशित करवाया। इस ग्रंथ के रचना-काल के संबंध में विद्वानों में मतभेद है, और डा. फादर कामिल बुल्के ने अपने 'राम काव्य' में इसे रामचरितम् का समसामयिक ग्रंथ बताया है जिसके अनुसार यह बारहवीं शती की रचना ठहरता है। किन्तु नारायण पिल्लै ने अन्तर्साक्ष्य एवं बहिर साक्ष्य के आधार पर अपने अकाट्य तर्कों द्वारा इसे सन् 1400 के आस-पास की रचना सिद्ध की है। अय्यं पिल्लै आशान् ने वाल्मीकि रामायण से अपना इतिवृत्त ग्रहण किया है, किन्तु उसे देश-काल परिस्थिति के अनुरूप ढालने का स्तुत्य प्रयास किया है। उनके आराध्य भगवान राम एक ऐतिहासिक पुरुष हैं। यह ग्रंथ साहित्य, संगीत एवं अभिनय तीनों का त्रिवेणी संगम है। यह माना जाता है कि पहले केरल के मंदिरों में इसका अभिनय हुआ करता था। कालान्तर में मलयालम में जो तुळ्ळल् काव्य शैली का प्रचार हुआ, उसका बीजारोपण अवश्य ही इस काव्य में हुआ था। इस दृष्टि से यह काव्य एक नूतन काव्य-सरणी का सूत्रपात करता है और इसलिए इसका महत्व बढ़ जाता है। आशान अपनी संवाद-शैली में बेजोड़ हैं। मार्मिक एवं भावपूर्ण घटना-प्रसंगों एवं सरस रोचक शैली के कारण यह काव्य मलयालम राम काव्यों की श्रेणी में विशिष्ट स्थान का अधिकारी है और इसी विशेषता से प्रभावित होकर महाकवि उल्लूर ने अपने इतिहास में आशान को मलयालम साहित्य के नवरत्नों में शीर्षस्थान प्रदान किया है।

निरणम् कवियों में प्रसिद्ध रामपणिक्कर ने चौदहवीं शती के उत्तरार्द्ध में अपनी "कण्णश्श रामायणम्" की रचना की। डा. फादर कामिल बुल्के ने भ्रमवश इसे वाल्मीकि रामायण का अनुवाद सिद्ध करने का दुस्साहस किया। केरल के संपूज्य

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कवियों में प्रमुख स्थान के अधिकारी राम पणिक्कर ने अपनी रामायण के अतिरिक्त भागवत, शिव रात्रि माहात्म्य, भारत आदि और भी अनेक रचनाएँ लिखकर अपनी काव्य-प्रतिभा का परिचय दिया है। वाल्मीकि की रामायण को अपना उपजीव्य ग्रंथ मानते हुए भी राम पणिक्कर मूल कथा में समयोचित परिवर्तन ही नहीं लाये, बल्कि अपनी मौलिक सूझ-बूझ एवं कल्पना-विलास के द्वारा प्राचीन रामकथा को एक नया रूप ही प्रदान किया। सबसे बड़ी मौलिकता इसमें है कि उन्होंने राम के देवत्व के स्थान पर उनकी व्यक्ति-सत्ता को उजागर करके दिखाने की ओर विशेष ध्यान दिया। वर्णन-शैली तथा प्रतिपाद्य दोनों पर तमिल की कंबरामायण का भूरि-भूरि प्रभाव देखा जा सकता है। भाषा में तमिल के साथ ही सप्रत्यय संस्कृत शब्दों के प्रयोग भी पाये जाते हैं। राम पणिक्कर की त्याज्य-ग्राह्य-शक्ति प्रशंसनीय है। उन्होंने कई प्रसंगों को अपनी प्रतिभा के द्वारा बढ़ावा दिया तो कुछ स्थानों में अनावश्यक कथा विस्तार से बचने का प्रयास भी किया। तमिल शैली से छूटकारा दिलाकर संस्कृत शैली की ओर मलयालम को ले जाने का प्रयास राम पणिक्कर ने किया, और आगे चलकर उसका सुष्ठु रूप महाकवि एषुत्तच्छन में देखने को मिला। राम पणिक्कर प्रतिभाशाली थे और वे जन-मानस के पारखी थे। अतः अपने काव्य को जन-मानस केलिए आकर्षक बनाने के विचार से उन्होंने गेय शैली को अपनाया। इस ग्रंथ की भाव-गरिमा एवं भाषा-सौष्ठव से प्रभावित होकर महाकवि उल्लूर एस. परमेश्वर अय्यर को प्रशस्ति के ये शब्द कहने पड़े—"यह ग्रंथ आद्यन्त अमृतोपम है। इसका प्रत्येक श्लोक, उसमें दर्शित शब्द-सौकुमार्य एवं अर्थ-चमत्कार किसी भी सहृदय पाठक को आनंद-सागर में निमज्जित कर देगा।"

संस्कृत में गद्य, पद्य और चम्पू इस प्रकार काव्य की तीन शाखाएँ मानी गयी हैं। इनमें से गद्य और पद्य के मिश्रण से बना काव्य चम्पू काव्य है। मलयालम अपने चम्पू काव्य केलिए पर्याप्त प्रसिद्ध है। इसी चम्पू शैली में कई ग्रंथों की रचना हुई। उन चम्पू ग्रंथों में साहित्यिक वैशिष्ट्य एवं गात्र पुष्टि की दृष्टि से पूनम नंपूतिरी कृत "रामायणम् चम्पू" का अपना विशिष्ट स्थान है। कण्णश्श रामायण एवं एषुत्तच्छन् कृत अध्यात्म रामायण की मध्य कड़ी के रूप में इस ग्रंथ की स्थिति है। इसकी रचना पंद्रहवीं शती में हुई। रावण के जन्म से लेकर श्रीराम आदि के स्वर्गारोहण तक की समस्त कथा का इसमें प्रतिपादन हुआ है। रावण विजय' के नाम से प्रकाशित चम्पू ग्रंथ इसी रामायण चम्पू का ही एक भाग है। यह रामायण चम्पू इतना बृहत् ग्रंथ है कि संस्कृत का नैषध चम्पू इसका लगभग दसवां अंश मात्र ही होगा। साहित्यिक दृष्टि से चम्पू-काव्य मलयालम केलिए एक नया प्रयोग है और इसमें मणि प्रवाल शैली अपनायी जाती है। संस्कृत मिश्रित मलयालम शैली का आदिम रूप इस ग्रंथ में देखने को मिलता है।

रामकाव्य-परंपरा में अगला ग्रंथ तुंचत्तु रामानुजन् एषुत्तच्छन कृत "अध्यात्म

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रामायणम्'' है। मलयालम में इस ग्रंथ का वही स्थान है जोकि हिन्दी में तुलसीदास कृत रामचरित मानस का है। इसलिए अन्य राम काव्यों पर भी प्रकाश डालने के उपरांत अंत में इसपर सविस्तार विचार प्रस्तुत किया जाएगा।

अध्यात्म रामायण के उपरांत किळिप्पाट्टु (शारिका गीत) शैली में रचित तथा अध्यात्म रामायण की लगभग बराबरी करने की क्षमता रखने वाला कोई रामकाव्य मलयालम में है तो केवल "केरल वर्मा रामायणम्'' है। इसके कवि तिरुवितांकूर की महारानी उमयम्म रानी के विश्वस्त पात्र वीर केरल वर्म्मा हैं जिन्होंने रानी की रक्षा करने केलिए 'एट्टुवीट्टिल पिल्लमार्' से युद्ध करते हुए वीर गति प्राप्त की थी। वाल्मीकि रामायण का यह स्वतंत्र अनुवाद है। वैसे केरल वर्म्मा विरचित ''पाताल रामायणम्'' का भी उल्लेख मिलता है, किन्तु कवि की ख्याति का एक मात्र कारण पहला रामकाव्य ही है। बालकांड, अयोध्याकांड, अरण्यकांड, किष्किंधाकांड और सुंदरकांड नामक पाँच काण्डों में यह रामकाव्य निबद्ध है। इसमें आया हुआ युद्धकांड पंडितों के मतानुसार अन्य किसी कवि से विरचित है। जहाँ कवि ने मूल ग्रंथ का संक्षिप्त अनुवाद किया है, वहाँ चारुता एवं सरसता लाने केलिए कुछ मौलिक कल्पनाएँ भी प्रस्तुत की हैं। रस-भावों की सरस एवं सुन्दर अभिव्यंजना में कवि की क्षमता स्तुत्य एवं प्रशंसनीय है। शारिका गीत शैली में 'द्रुत काकली' छंद को स्थान देने वाला प्रथम मलयालम कवि ये ही हैं। अयोध्या का सौन्दर्य-वर्णन, राम-वियोग में अयोध्या को घेरे करुण रस का वर्णन, चित्रकूट में राजसभा आदि बड़ी सधी तूलिका से अंकित हैं। कवि की अन्तर्दृष्टि का सूक्ष्म परिचय पाने केलिए चित्रकूट की राजसभा का प्रसंग लिया जा सकता है। अन्य रामायणकारों ने वहाँ पुरुषों के वार्तालाप में संतुष्टि पायी, किन्तु नारी-मनोविज्ञान तथा नारी-हृदय के मर्मज्ञ केरल वर्म्मा यह जानते थे कि बहुत दिनों के वियोग के उपरांत कौसल्या, सुमित्रा आदि नारियाँ सीता से कुशलान्वेषण पूछना चाहती हैं। कवि ने बड़े व्यावहारिक ढंग से सीता-स्वयंवर के प्रसंग पर उनका वार्तालाप प्रस्तुत किया है। वैसे ही राम की वन-यात्रा का प्रसंग बड़ा ही मार्मिक है। कौसल्या माता जनकपुत्री सीता को उपदेश देती हुई कहती है—

जनङ्ङळोक्केयुं निरन्नु निल्कवे
जनकपुत्रिये विळिच्चु कौसल्या
अणच्चु सादरं मणत्तु मुर्द्धाविल्
तणुत्तु मेल्लेवे वदिच्चु खिन्नमाय्;
मकन्नु राज्यवुं प्रभुत्ववुमिल्ला
विपिने पोवानुं तरवुं वन्नितु;
अतु कोण्टु निन्टे मनस्सिलेतुमे
अवमानं तोन्नातिरिक्कयुं वेणम्

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

× × ×

सकल वस्तुवुं सकल वित्तवुं
सकल धर्म्मवुं सकल कर्म्मवुं
सकल बंधुवुं सकल जीवनुं
पतिव्रतमार्क्कु पतितन्नेयल्लो ।

(जब सारी जनता की भारी भीड़ जमी हुई थी तब माता कौसल्या ने जनकात्मजा को अपने निकट बुला लिया और छाती से लगाकर तथा मूर्द्धा पर चुंबन अंकित करते हुए अत्यन्त खिन्न एवं धीमे स्वर में उपदेश दिया कि मेरे पुत्र को न राज्य है न प्रभुत्व ही; वन में जाने का अवसर भी आ पड़ा। लेकिन इस कारण तुम्हारे मन में किसी प्रकार का अपमान या मैल होने न पाए। × × × पतिव्रता नारी केलिए पति ही समस्त वस्तु, समस्त धन, समस्त धर्म, समस्त कर्म, समस्त बंधु, और समस्त जीवन है।)

भाषा-शिल्प एवं शैली-सौष्ठव की दृष्टि से भी केरल वर्म्मा कृत रामायण का महनीय स्थान है। कवि का संस्कृत पर एकाधिकार झलकता है। भाषा सरल, ललित एवं कमनीय है और सामान्य जनता की पहुँच की वस्तु है। इतना होते हुए भी दुख की बात है कि केरलीय जनता में इस रामायण का अपेक्षित प्रचार नहीं हुआ। कारण स्पष्ट है; महाकवि एषुत्तच्छन् की अध्यात्म रामायण के सामने दूसरे सारे रामकाव्य निष्प्रभ हो गये, जैसे कि तुलसी के मानस के रहते हुए दूसरे रामायण ग्रंथ हिन्दी में स्थान नहीं पा सके।

हमने मलयालम के प्रमुख रामकाव्यों का ऊपर उल्लेख किया है। लेकिन इसका यह कदापि तात्पर्य नहीं कि मलयालम में और रामकाव्यों का अभाव है। वस्तु स्थिति यह है कि मलयालम में रामकथा पर आधारित सैकड़ों ग्रंथ लिखे गये हैं। सब का उल्लेख करना इस लघु निबंध की परिधि में असंभव है। अतः हम एकाध अन्य रामकाव्यों का नाम-निर्देश मात्र करके संतृप्त रह जाएँगे। ऐसे उल्लेख्य राम काव्यों में कषकत्तु पद्मनाभ कुरुप विरचित रामचन्द्र विलास काव्य, वडक्कम्कूर राज-राज वर्म्मा कृत रघुवीर विजयम्, पाङ्ङोट्टुण्णित्तिरी कृत उत्तररामायणम्, महाकवि कुमारन आशान् कृत बालरामायणम् तथा चिन्ताविष्टयाय सीता, वल्लत्तोल नारायण मेनन कृत वाल्मीकि रामायण का अनुवाद तथा किळिकोञ्चल, टी. के. रामन मेनन तथा वेण्णिक्कुलम् गोपालकुरुप के तुलसीदास रामचरितमानस के अनुवाद आदि विशेष उल्लेख्य हैं। अषकत्तु पद्मनाभ कुरुप राम के अनन्य भक्त थे और उनका काव्य भक्ति रस से ओतप्रोत एक सरस महाकाव्य है, जिसमें भक्त कवि ने अपने उपास्य भगवान राम का हृदय खोलकर यशोगान एवं स्तुति की है। भगवद् साक्षात्कार एवं सामीप्य लाभ केलिए विह्वल कवि-हृदय की भाव-तरंगों एवं उद्गारों से ओतप्रोत यह काव्य मलयालम रामकाव्यों में विशेष समादृत है। रघुवीर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विजयम् में हृदय पक्ष की अपेक्षा कला पक्ष की प्रधानता है तो भी स्थान-स्थान पर कवि का भगवान के प्रति चिर आस्था एवं मांगलिक स्वर भी मुखरित है। पांङ्ङोट्टुण्णित्तिरी का काव्य 'उत्तर रामचरितम्' भवभूति के उत्तर रामचरित से प्रभूत मात्रा में प्रभावित है।

आधुनिक रामकाव्य-परंपरा में कुमारन आशान् का विशिष्ट स्थान है। यह दूसरी बात है कि आशान् एषुत्तच्छन् के जैसे भक्त कवि नहीं हैं। यही नहीं, वे शिवोपासक भी हैं। फिर भी भारतीय संस्कृति के प्रतीक एवं आधार स्तंभ मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी के जीवन चरित के प्रति उनका हृदय श्रद्धालु है। उनकी रामायण पंडितों केलिए नहीं, बालकों केलिए है। इसलिए सरल एवं सुगम भाषा शैली में वाल्मीकि रामायण के इतिवृत्त को अत्यन्त संक्षेप में यहाँ प्रस्तुत किया गया है। आशान प्रेम के सरस गायक कवि हैं। वे आदर्श प्रेम के प्रवाचक हैं। सीताजी के पातिव्रत्य धर्म ने उन्हें पर्याप्त प्रभावित किया और उससे प्रेरित होकर उन्होंने 'चिन्ताविष्टयाय सीता' नामक एक खण्डकाव्य की भी रचना की, जिसमें राम से परित्यक्ता जनकनंदिनी सीता के दुखार्त हृदयोद्गार के स्वर मुखरित हैं। वाल्मीकि के आश्रम में रहती सीता राम के अश्वमेधयज्ञ का स्मरण करती है और कल्पना करती है कि वह यज्ञशाला में पहुँचकर अपनी स्वर्णिम मूर्त्ति को साक्षात् आँखों के सामने देखती है। आशान् का कवि-हृदय सीताजी की हृदयगत भावनाओं से एकाकार हो उनका स्वाभाविक चित्र अंकित करता है और इस प्रसंग में आशान् का स्त्री-मनोविज्ञान का पारखी रूप स्पष्ट प्रकट होता है। इस हृदयावर्जक एवं कारुणिक काव्य का मलयालम खंडकाव्यों में अद्वितीय स्थान है और वास्तव में इसका अनुवाद इतर भाषाओं में भी हो जाना चाहिए।

आधुनिक मलयालम काव्यधारा के प्रमुख स्तंभ महाकवि वल्लत्तोल नारायण मेनन के काव्यों के इतिवृत्त रामायण-महाभारत से गृहीत हैं। वे स्वभाव से वैष्णव थे और मलयालम में उनका वही स्थान है जो हिन्दी में मैथिलीशरण गुप्त का है। वाल्मीकि विरचित संस्कृत रामायण को केरलीय जनता केलिए सुलभ बना देने के सोद्देश्य से उन्होंने उसका मलयालम अनुवाद प्रस्तुत करके मलयालम रामायण-परंपरा की श्रृंखला में एक नयी कड़ी जोड़ दी और राम के तपःपूत जीवन चरित के प्रति अपनी श्रद्धांजली अर्पित की। रामायण पर आधारित, किन्तु कवि की मौलिक सूझ-बूझ से अनुस्यूत 'किळिकोञ्चल्' नामक लघु कविता भी इस प्रसंग में अविस्मरणीय है। कवि अपनी कथा का आरंभ नाटकीय शैली में प्रस्तुत करता है और पाठकों का ध्यान मिथिला के राज-प्रासाद के प्रांगण में अपने शिशु सुलभ चांचल्य युक्त तथा क्रीड़ालोलुप जनकात्मजा की ओर आकृष्ट करता। कवि जनकात्मजा की शिशु सहज लीलाओं का स्वाभाविक एवं मनोवैज्ञानिक चित्रण प्रस्तुत करता है। तभी वाल्मीकि के आश्रमवासी दो शुक प्रांगण की शाखी में आ बैठते हैं और रामकथा का

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कीर्त्तन करते हैं। शुकों के मुख से यह सुनकर कि दशरथ-पुत्र राम के साथ उसका विवाह होगा, सीता रुष्ट होती है और माता से शिकायत करती है कि वाल्मीकि राम के साथ मेरा विवाह क्यों कराना चाहते हैं। माताजी से यह सूचना पाकर कि कन्याओं केलिए विवाह एक अनिवार्य संस्कार है, नादान एवं सरल उस बालिका का आग्रह है कि केवल माताजी के साथ ही उसका विवाह हो—

कन्यक तीरमानं चेस्तु : मट्टारुं वे—
ण्टेन्नेयेन्नम्मतान् वेट्टाल् मति।

(कन्यका ने यह निश्चय कर लिया कि और कोई नहीं, मुझे मेरी माता ही ब्याह लें।)

स्वतंत्रता-प्राप्ति तथा हिन्दी के पठन-पाठन ने अनेक मलयालम-भाषियों को हिन्दी साहित्य के संपर्क में आने का सुअवसर प्रदान किया। मलयालियों केलिए हिन्दी के कई काव्य ग्रंथ आकर्षण की वस्तु बन गये। तुलसी कृत रामचरितमानस का लोगों पर इतना प्रभाव पड़ा कि कई लोग इसके अनुवाद में प्रवृत्त हुए जिनमें से केवल एकाध ने सफलता प्राप्त की। ऐसे सफल अनुवादकों में टी. के. रामन मेनन तथा महाकवि वेण्णिकुलम गोपाल कुरुप के नाम लिये जा सकते हैं। वेण्णिकुलम मलयालम के अनश्वर कवि हैं और कवि-हृदय संपन्न होने के कारण उनका अनुवाद मूल ग्रंथ को यथारूप मलयालम पद्य शैली में प्रस्तुत करने में पूर्णतया सफल हुआ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मलयालम में रामकाव्यों की एक लंबी परंपरा चली है। यह दूसरी बात है कि सभी कवि भक्ति से प्रभावित होकर रामकाव्य लिखने में प्रवृत्त नहीं हुए। भक्ति भावना से प्रेरित हो रामकाव्य लिखने वालों में भक्ताग्रेसर महाकवि तुंचत्तु रामानुजन् एषुत्तच्छन् का स्थान सर्वोपरि है। इसलिए आगे उनकी अध्यातमरामायण पर सविस्तार विचार प्रस्तुत किया जाएगा।

भक्तोत्तंस महाकवि तुंचत्तु एषुत्तच्छन् की अध्यात्मरामायण समस्त रामकाव्यों की मुकुटमणि है और आज भी मलयालम रामकाव्यों के नाम लेते ही एषुत्तच्छन् और उनकी रामायण हमारे सामने अपनी झाँकी दिखाती है। भाव तथा शिल्प दोनों दृष्टियों से एषुत्तच्छन् की कृति युगांतरकारी है और उत्तर भारत में जैसे तुलसी के मानस का पठन-पाठन होता है वैसे केरल के घर-घर में इस रामायण का पारायण सुचारु रूप से होता आ रहा है।

तुंचन का जन्म सोलहवीं-सत्रहवीं शती में मलबार में हुआ। उनके समय केरल की सामाजिक व्यवस्था अस्तव्यस्त एवं शिथिल थी। देशी राजा पारस्परिक विद्रोह एवं कलह में अपना समय बिता रहे थे। विदेशी शक्तियाँ भी अपना आतंक जमा रही थीं। साहित्य में तमिल भाषा का आतंक था। अतः तुंचन को बड़ा भारी दायित्व उठाना पड़ा। एक ओर समाज को सुव्यवस्थित करने तथा जनता का मार्ग-दर्शन करने का दायित्व था तो दूसरी ओर मलयालम को तमिल के आतंक से मुक्त कर उसके सहज रूप में प्रतिष्ठित करना था। इस कारण तुंचन का ध्यान मुख्य

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रूप में मलयालम भाषा का रूप स्थिर करने की ओर गया। इसलिए तुंचन को मलयालम भाषा के जनक की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। उन्होंने अपनी भाषा को तमिल की अस्पष्टता एवं संस्कृत की दुरूहता से मुक्त किया। उनकी भाषा मणिप्रवाल शैली का प्रोज्वल उदाहरण है। उनकी भाषा शताब्दियों बाद आज भी आदर्श मानी जाती है। अतः यह कहा जा सकता है कि तुंचन मलयालम भाषा की वह मध्यम कड़ी हैं, जिसके आधार पर मलयालम के प्राचीन एवं नवीन रूप का दर्शन किया जा सकता है। वे उच्च कोटि के भक्त, कवि एवं दार्शनिक थे। अध्यात्मरामायणम्, महाभारतम्, हरिनाम संकीर्तनम् तथा इरुपत्तिनालुवृत्तम् उनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं, किन्तु उनकी ख्याति का आधारस्तंभ अध्यात्म रामायणम् ही है।

अध्यात्म रामायणम्

महाकवि तुंचन की अध्यात्मरामायणम् एक स्वतंत्र रचना नहीं है, वह संस्कृत की अध्यात्मरामायण का छायानुवाद मात्र है। इसका तात्पर्य यह कदापि नहीं है कि तुंचन में मौलिकता का अभाव है। उन्होंने अपनी रामायण केलिए कथावस्तु एवं घटनाओं का ढाँचा संस्कृत ग्रंथ से ग्रहण कर, उसमें नवीन उद्भावनाओं, कल्पनाओं को प्रश्रय देकर अपनी रामायण लिखी है जिस कारण 'अध्यात्मरामायणम्' एक स्वतंत्र रचना-सी लगती है। कवि ने केरल की अतिप्रिय किळिप्पाट्टु शैली में यह ग्रंथ लिखा है। अर्थात् भक्त कवि ने उमा-महेश्वर संवाद रूप में प्राप्त रामकथा को शारिका के मुंह से कहलवाया है। बालकाण्ड से लेकर युद्धकाण्ड तक इसके छः काण्ड हैं और राम के राज्याभिषेक के साथ इसकी कथा समाप्त होती है। लोक-प्रचलित रामकथा को आधार बनाकर भी एषुत्तच्छन् ने अनेक प्रसंगों में अपनी मौलिक कल्पना एवं प्रतिभा का आभास दिया है। उनके राम पूर्ण पुरुषोत्तम, परात्पर ब्रह्म हैं और रामायण का प्रत्येक पात्र उनके विश्वातीत रूप से परिचित है। अपने यज्ञ की सफलता के लिए विश्वामित्र के द्वारा राम की याचना की जाने पर कुंठित दशरथ को वसिष्ठ समझाते हुए कहते हैं कि राम मानव नहीं हैं, वे आत्मा हैं, सदानंद हैं और पद्मसंभव की प्रार्थना स्वीकार करके साक्षात् महाविष्णु ही राक्षस रावण का वध कर सुरों की रक्षा के लिए आपके पुत्र रूप में अवतीर्ण हुए हैं। लक्ष्मण शेषनाग के अवतार हैं और भरत-शत्रुघ्न उनके शंख-चक्र हैं। योगमाया ही मिथिला में अयोनिजा सीता के रूप में प्रकट हुई है।[1] स्वयं शिवजी पार्वती को समझाते हैं कि श्रीरामजी परमात्मा, आनंदमूर्ति प्रकृति के कारणभूत पुरुष हैं। जगत की उत्पत्ति, स्थिति एवं प्रलय के कारणभूत हैं। वे ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश्वर स्वरूप हैं। वे अद्वय, अनाद्य, अजन्मा, अव्यय, सच्चिदानंद हैं। जो उन्हें

---

1. बालकाण्ड, पृ. 15–16.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मानव समझते हैं वे मायामोह से ग्रस्त अज्ञानी एवं मूढ हैं।[1] सीताजी स्वयं अपने को मूल प्रकृति बताती हैं जो अपने प्रियतम परमात्मा के सान्निध्य मात्र से सृष्टि करती है।[2] अहल्योद्धार-प्रसंग में अहल्या का शाप तथा राम के द्वारा उसके उद्धार का सविस्तार वर्णन करने के साथ ही कवि ने अहल्या के मुँह से राम का आध्यात्मिक रूप व्यक्त करवाया है। इस प्रकार केवट, वाल्मीकि, नारद, भरद्वाज और यहाँ तक कि रावण भी राम के मर्म से परिचित हैं। राम कौसल्याजी को अपने अवतार का उद्देश्य समझाते हुए कहते हैं कि दुर्मद रावण का संहार करने केलिए ब्रह्मा तथा शंकर की प्रार्थना के कारण मानववंश में आपकी संतान रूप में मैंने जन्म लिया।[3]

तुंचन की रामायण के अनुसार सीता की प्राप्ति के समय ही जनक को नारद ने यह समझाया था कि राम देवताओं के कार्य केलिए पृथ्वी पर अवतार ले चुके हैं और यह सीता साक्षात् योगमाया ही है जो मानुष देही बनकर पैदा हुई है। इसलिए सीता का विवाह राम के साथ करा देना चाहिए। अतः जनक का कथन है कि उन्होंने सीता के पाणिग्रहण के लिए धनुर्भंग की अनिवार्य शर्त इसलिए रखी कि वे जानते थे कि शिवधनुष को राम के सिवा और कोई तोड़ नहीं सकता। यही कारण है कि विवाहोपरांत जनक जी राम से मुक्ति दिलाने की याचना करते हैं। तुंचन ने सीता-राम विवाह के समय अपनी मंजुल कल्पना-शक्ति का परिचय दिया है, जबकि वे लिखते हैं कि सीताजी ने राम को पहले नेत्रोत्पल-माला पहनायी और बाद में वरमाला अर्पित की—

स्वर्ण मालयुं धरिच्चादराल् मन्दमन्दमर्णोजनेत्रन् मुम्पिल् सत्रपं विनीतयाय्
वन्नुटन् नेत्रोत्पल मालयुमिट्टाळ् मुन्ने पिन्नाले वरणार्थमालयुमिट्टीटिनाळ्।[4]

तुंचन की यह मौलिक कल्पना जहाँ उनकी भावुकता की द्योतक है, वहाँ स्वाभाविक एवं मनोवैज्ञानिक है। इसमें राम के रूप-सौन्दर्य को एक बार हृदयंगम् करने की सीता की व्यग्रता का चित्र सधी-तूलिका से अंकित है।

प्रस्तुत ग्रंथ में यह बताया गया है कि धनुर्भंग के साथ ही जनक ने दशरथ

---

1. श्रीरामन् परमात्मा परमानंदमूर्ति पुरुषन् प्रकृतितन् कारणनेकन् परन्।
पुरुषोत्तमन् देवननंन्तनादि नाथन् गुरु कारुण्य मूर्ति परमन् परब्रह्मं।
जगदुद्भव स्थिति प्रलय कर्तावाय भगवान विरिंचनारायण शिवात्मकन्।
बाल. पृ. 4.
2. ञान् तान् मूल प्रकृतियायतेटो। एन्नुटे पतियाय परमात्मावुतन्टे सन्निधि मात्रंकोण्टु ञानिवसृष्टिक्कुन्नु। वही. पृ. 5.
3. बालकाण्ड, पृ. 13.
4. बालकाण्ड, पृ. 23.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

को विवाह का निमन्त्रण भेज दिया और उनके सान्निध्य में ही सीता को राम के हाथ में अर्पित किया। बारात के लौटते समय परशुराम आते हैं और परशुराम को देखकर दशरथ उनको साष्टांग प्रणाम करते हैं। तुलसीदास के मानस में अधिकतर वार्तालाप लक्ष्मण और परशुराम में होता है और इस प्रसंग में लक्ष्मण की धृष्टता दिखाई गयी है। किन्तु एषुत्तच्छन् का भक्त कवि राम और लक्ष्मण के प्रति समान अनुरागी है और वह अपने लक्ष्मण को उद्दंड नहीं बना सका है। इधर लक्ष्मण को कुछ बोलने का अवसर ही नहीं मिलता। यहाँ सीधे परशुराम राम से कहते हैं कि तुम ने शिव-धनुष तोड़ डाला, अब मेरे हाथ का वैष्णव धनुष भी तोड़ो अन्यथा तुम सबको समाप्त कर दूंगा। परशुराम की इस क्रोधपूर्ण उक्ति से पृथ्वी कंपित हो उठी, सागर उमड़ पड़ा और पहाड़ थर-थर काँपने लगे। समस्त दिशाएँ अंधकारमय हो गयीं। राम मंद मुस्कान के साथ कहने लगे कि प्रौढ महानुभाव बालकों से ऐसी बातें करें तो उन्हें सहारा कहाँ मिलेगा ? आप जरा धनुष दीजिए, संभव हो तो भंग करूँगा, अन्यथा क्रुद्ध न होइएगा। हाथ में धनुष उठाते ही राम की दीप्ति चौदहों भुवनों में फैल गयी और धनुष की प्रत्यंचा पर बाण चढ़ाये खड़े राम की परशुराम वन्दना करते हैं कि आप सृष्टि-स्थिति-संहार हेतु भगवान हैं। फिर अपना पूरा वृत्तान्त सुनाकर अपना तेज राम को अर्पित करते हैं।

अयोध्याकांड का आरंभ राम के पास नारद के आगमन से होता है। नारद राम को देवताओं की रक्षा की प्रतिज्ञा का स्मरण दिलाते हैं और राम अगले दिन ही वन जाने का वचन देते हैं। इस प्रकार कवि मंथरा तथा कैकेई को राम-वनगमन के निमित्त-मात्र सिद्ध करता है। राम के राज्याभिषेक की बात सुनकर कौसल्या दुर्गा के पास पहुँचकर पूजा करती है तथा कैकेई के द्वारा अनिष्ठ होने की आशंका भी करती है।

केवट के द्वारा राम को नाव पर चढ़ाने में असमंजस का भाव तुलसी ने चित्रित किया है। ऐसा कोई प्रसंग प्रस्तुत ग्रंथ में नहीं है। इसमें बताया गया है कि गुह राम से भेंट करता है तथा उन्हें अपने यहाँ ठहरने का निमन्त्रण भी देता है, किन्तु वनवास का व्रत लेने के कारण पुनः ग्राम में जाना निषिद्ध है, यह समझकर उसकी प्रार्थना को राम अस्वीकार करते हैं। राम गंगा पार करने के लिए नाव मांगते हैं तो केवट प्रसन्न हो उन्हें नाव पर चढ़ाता है और नदी पार पहुँचा देता है।

शूर्पणखा के कर्ण–नासिका छेदन के प्रसंग में तुंचन की मौलिकता राम के चरित्र को कलंकित होने से बचा देती है। वालमीकि, अध्यातम रामायणकार सभी ने राम पर यह कलंक आरोपित किया है। तुलसीदास जी ने राम के चरित्र को कलंकित करने से बचाने का व्यामोह तो अवश्य दिखाया, फिर भी वे इस कार्य में पूर्णतया सफल नहीं हो सके क्योंकि वहाँ उसके कर्ण-नासिका छेदन की राम लक्ष्मण को संकेत से अनुमति देते हैं। तुंचन के राम आदर्शोज्वल भगवान हैं, वे जानते हैं कि अनि-यंत्रित काम अपराध अवश्य है, किन्तु कामार्त नारी को दंडित करना भी उचित

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नहीं है । इसलिए तंचन के राम उसके प्रति उदार हैं, किन्तु सीता की ओर लपकती शूर्पणखा को रोककर तथा उसका अंग-छेदन करके लक्ष्मण सीताजी की रक्षा करते हैं, जो वास्तव में लक्ष्मण का कर्तव्य है । इस प्रकार लक्ष्मण को कर्तव्य निभाने के लिए उसे दंडित करते दिखाकर उनके चरित्र की भी रक्षा करता है । वास्तव में वालिवध राम के ईश्वरत्व केलिए कलंक है । ईश्वर समदर्शी है, उसमें वालि या सुग्रीव में भेद-दृष्टि नहीं होनी चाहिए । इस बात से अवगत तुंचन वेदादर्श को प्रस्तुत कर वालि को जघन्य पापी सिद्ध करते हैं और ऐसे जघन्य अपराधी को दंडित करना धर्मधुरीण राम का धर्म है । इसलिए राम कहते है कि पुत्री, भगिनी, सहोदर-भार्या, पुत्र-वधू, माता इनमें कोई अन्तर नहीं है, यही वेदों की उक्ति है । वेद-विरोधी आचरण करने वाले की हत्या करके धर्म की प्रतिष्ठा करना मेरा कर्तव्य है ।[1]

राम से शत्रुता मोल लेने केलिए रावण इसलिए तैयार होता है कि वह जानता है कि भक्तवत्सल भगवान उसे मारने केलिए भूतल में अवतीर्ण हुए हैं और उनके हाथों मरने से वैकुंठ की प्राप्ति होती है । अगर राम से युद्ध करते हुए विजय पा सके तो सदा राक्षस-राजा का पद प्राप्त होता रहेगा । अतः दोनों ओर से लाभ है । दूसरे अखिलेश रामभक्ति के कारण उसपर प्रसन्न नहीं होंगे, इसलिए विद्वेष-बुद्धि से उन्हें प्राप्त किया जा सकता है ।[2] अतः रावण मन ही मन प्रसन्न होता है । तुंचन का रावण वाल्मीकि के रावण के समान आत्मप्रशंसा में व्यर्थ समय नहीं गंवाता, वह एक सच्चे अनुरागी के समान अपने तथा राम के अंतर को समझाकर सीता का हृदय–परिवर्तन करना चाहता है । उसका कथन है कि तुम्हारे पति दशरथसुत को बहुत ढूंढ़ने पर कोई कहीं देख पाता है और कभी-कभी वह भी संभव नहीं है । भला, जिसके दर्शन मात्र की भी संभावना कम है, उसके पत्नीत्व में क्या आनंद रखा है । इसके बदले रावण अपना परिचय देता हुआ प्रार्थना करता है कि हे सुमुखि, सुनो, सारे संसार का नाथ असुरेश तुम्हारे चरण-सरोजों का दास है । हे शोभन-शीले, तुम मुझपर दया करो ।[3]

---

1. पुत्रि भगिनि सहोदर भार्ययुम् पुत्र कळत्रवुं मातावुमेतुमे
भेदमिल्लल्लो वेदवाक्यमतु चेतसि मोहाल् परिग्रहिकुन्नवन्
पापिकळिल् वच्चुमेट्टं महापापि तापमवर्किकतिनाले वरुमल्लो
मर्याद नीक्किनटकुन्नवरकळे शौर्यमेरुं नृपात्मा निग्रहिच्चय
धर्म स्थिति वरुत्तुं धरणियिल् निर्मलात्मा नी निरूपिक्कमानसे ।
किष्किंधाकाण्ड, पृ. 119–120

2. वही, पृ. 95.
3. श्रुणु सुमुखि ! तव चरणनलिनदासोम्यहम्, शोभनशीले प्रसीद प्रसीद मे ।
सुन्दरकाण्ड, पृ. 150.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सीता को ले चलने केलिए रावण भिक्षु रूप में आनेवाला है, यह जानते हुए राम साक्षात् सीता को अग्नि में छिपा देते हैं और माया सीता को आश्रम में रहने देते हैं। फिर राम लक्ष्मण को उसके आगमन का संकेत देते हैं। इस काव्य में सौमित्ररेखा का उल्लेख नहीं है, यहाँ लक्ष्मण सीता की रक्षा का भार वनदेवियों को सौंपकर राम की खोज में निकल पड़ते हैं।

राम की खोज में निकले लक्ष्मण को देखकर राम सोचते हैं कि रावण के द्वारा मायासीता के अपहरण का रहस्य समझाये जाने पर रावणवध का कार्य असंभव होगा। इसलिए सच्ची बात को छिपाते हुए राम स्वयं सीता के विरह का अभिनय करते हैं। वास्तव में यह प्रसंग राम के चरित्र पर कलंक है। अग्रज को पिता-तुल्य समझकर उनके पीछे सर्वसंग परित्यागी बनकर वन-वन भटकते अनुज को भ्रम में रखना राम के ईश्वरत्व में कलंक अवश्य है। कथा के विकास को स्वाभाविक बनाने केलिए कवि ने इस लांछन को रहने दिया।

एषुत्तच्छन् ज्ञानी भक्त थे। उन्होंने अपने काव्य में ज्ञान एवं भक्ति की गंगा-यमुना का समन्वय किया है। उनके इस काव्य में दर्शन का प्रतिपादन है तो भक्ति-भेदों पर भी गंभीर विचार प्रस्तुत है। दार्शनिक दृष्टि से एषुत्तच्छन् को अद्वैतवाद पूर्णतया स्वीकार है। यह दूसरी बात है कि उनपर सांख्यदर्शन का भी पर्याप्त प्रभाव है। अद्वैतवाद को अपनी मान्यता प्रदान करते हुए एषुत्तच्छन् का स्पष्ट विचार है कि ब्रह्म नित्यानंदस्वरूप, निराकुल, सत्यस्वरूप, चिन्मय, सर्वव्यापी, उपाधि-रहित, अव्यय, अजन्मा एवं अखिलेश्वर है। परमात्मा रूपी बिंब का प्रतिबिंब ही जीवात्मा है।[1] यह प्रतिबिंब तेजोमय माया में ही प्रतिबिंबित होता है। यह प्रतिबिंब अवास्तविक है। साक्षात् बिंब निश्चल है और गुरु प्रसाद से तत्वमस्यादि महा-वाक्यों के ज्ञान से जीवात्मा ज्ञानी बनता है और ब्रह्मरूप को प्राप्त करता है। यह ब्रह्म समस्त जगत की आत्मा है। अज्ञान से उत्पन्न षड्विकार ब्रह्म में नहीं हैं क्यों कि ब्रह्म ज्ञानस्वरूप है। वह पूर्ण, निर्विकार एवं परिणामरहित है। यह जगत् भगवान की मायाशक्ति है। अग्नि में धूप या पानी में फेन के समान परब्रह्म की यह माया विचित्र है।[2] अगस्त्य राम से कहते हैं कि आप सृष्टि पूर्व अकेले आनंद स्वरूप थे, लोक-कारण भगवान तब विकल्पोपाधि रहित थे। जिस समय सृष्टि की इच्छा हुई

1. परमात्मावाकुन्न बिंबत्तिन् प्रतिबिंबं परिचिल् काणुन्नतु जीवात्मावरिकटो।
बालकाण्ड, पृ. 7.

2. वह्नियिल् धूमंपोले वारियिल् नुरपोले निन्नुटे महामायावैभवं चित्रं चित्रं।
वही, पृ. 28.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तव माया के वशीभूत हुए ।[1] अपनी शक्ति प्रकृति रूपी महामाया के आवरण में अपने को आवृत कर तद्गुणों का अनुसरण करते हैं ।[2] यही मायादेवी मूल प्रकृति कहलाती है । इस माया के दो भेद हैं–विद्यामाया तथा अविद्यामाया, निवृत्ति निरत जीव विद्यामाया के अधीन हैं और वे वेदान्त वाक्यार्थों को समझकर समचित्त हो भगवत् चरणों में निरत रहते हैं। अविद्या माया अज्ञान से उद्भूत एवं प्रवृति कामी है । इस माया के वश में पड़े जीव नित्य संसारी कहलाते हैं । देहादि वस्तुओं में आत्मवत् बोध ही इस माया का कारण है और इसी से मायिक संबंधवाला संसार उत्पन्न होता है । यही स्थूल-सूक्ष्मादि भेदों की कल्पना करती है । अविद्या माया से महत्तत्व में अहंकार उत्पन्न होता है । महत्तत्व, अहंकार और संसार ही सात्विक राजस तथा तामस गुणों में परिवर्तित होते हैं । सारांश यह कि 'मैं ही आत्मा हूँ' का भाव विद्या माया है और देहोऽहम् का ज्ञान अविद्या है ।[3] संसार का कारण अविद्या है और संसार विनाशकारी अविद्या है । भगवान के नामस्मरण में निरत भक्त को यह अविद्या माया अपने बंधन में नहीं बांधती ।

मायामय और परिणामशील काया विकारशील है । यही काया सुख-दुःखादि की भोक्ता है । यह भोग सब क्षणिक है, जीवन भी क्षणभंगुर है । माया-सागर में डूबे रहने से जीव इस बात से अवगत नहीं है । काम-क्रोधादि विकार शत्रु हैं और मुक्ति में बाधक हैं । रूपकात्मक भाषा में एषुत्तच्छन् समझाते हैं कि क्रोध यम है, तृष्णा वैतरणी है, संतोष ही नंदनवन है और शान्ति ही काम सुरभि है ।[4] कर्म को परब्रह्म में समर्पित कर निष्काम कर्म ही मनुष्य केलिए श्रेयस्कर है । सुख-दुख पूर्वजन्म का फल है । एषुत्तच्छन् का आग्रह है कि भोग की कांक्षा नहीं करनी चाहिए और विधिवत् भोग की उपेक्षा भी नहीं होनी चाहिए । कर्म के कारण ही जीव कालचक्र में पड़ता है । किन्तु मृत्यु आत्मा का अन्त नहीं है, जीर्ण वस्त्र त्यागकर नये वस्त्र वरण करने के समान जीर्ण शरीर त्यागकर नवशोभायुक्त नवदेह को धारण करना ही मृत्यु है ।[5] तारा को उपदेश देते हुए राम देह की अनित्यता एवं आत्मा की चिरंतनता

---

1. बुद्धिजातकळाय वृत्तिकल् गुणत्रयं नित्यमंशिच्चु जाग्रल स्वप्नवुं सुषुप्तियुं ।
इवट्टिनेल्लांसाक्षियाय चिन्मयन् भवान् निवृत्तन् नित्यनेकनव्ययनल्ला नाथन् ।
यातोरु कालं सृष्टि चेय्वानिच्छिच्चु भवान् मोदमोटप्पोलंगीकरिच्चू मायतन्ने !
– अरण्यकाण्ड, पृ. 84.

2. वही,
3. अयोध्याकाण्ड, पृ. 46.
4. क्रोधमल्लो यमनायतु निर्णयं वैतरण्याख्ययाकुन्नतु तृष्णयुं
सन्तोषमाकुन्नतु चन्दनवनं सन्नतं शान्तिये कामसुरभि केळ् । अयोध्याकांड, पृ. 46.
5. अयोध्याकाण्ड, पृ. 66.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पर प्रकाश डालते हैं। पंचभूतात्मक देह जड़ है, रक्त-मज्जा–मांस मात्र है। वह निर्जीव काष्ठ तुल्य है, किन्तु आत्मा सजीव एवं निरामय है। तारा के प्रश्न करने पर कि जड़ शरीर को सुख-दुःख कैसे हो सकते हैं, श्रीरामजी संदेह-निवृत्ति करते हुए उसे समझाते हैं कि देहेन्द्रिय संबंधी अहंकार एवं भेदभाव से संवलित जीवात्मा को अपने अविवेक के कारण संसार में रहना पड़ता है। संसार राग-द्वेषमय है और आत्मा स्वलिंग मन को अपनाकर तद्गुणों के वशीभूत हो जाती है।[1]

एषुत्तच्छन् ने मुक्ति के संबंध में भी विचार किया है। अपने कार्य-कारण संबंधों के साथ जीव का आत्मा में विलयन ही मुक्ति है। इस लय से पृथक् आत्मा की स्थिति है। यह आत्मा स्वयं ब्रह्म है। ज्ञान विज्ञान वैराग्य सहित आनंदमय कैवल्य स्वरूप को पहचानने वाला जगत में कोई नहीं है। भक्ति से ही यह कैवल्य दशा प्राप्त हो सकती है। भक्तों के सामने यह आत्मा खूब प्रकाशित होती है।[2]

एषुत्तच्छन् ज्ञानी एवं भक्त कवि थे। कुछ विद्वानों का मत है कि उन्होंने कैवल्यावस्था की प्राप्ति केलिए भक्ति को साधन माना है। बात तो ठीक ही है क्योंकि उन्होंने अपनी रामायण में स्थान-स्थान पर भक्ति की महत्ता का प्रतिपादन किया है। और यह बताया है कि भक्ति से जगन्मुक्ति प्राप्त होती है। किन्तु गहराई से अवलोकन करने पर स्पष्ट विदित होगा कि एषुत्तच्छन् शंकर-परम्परा के कवि थे। शंकराचार्य ने मुक्ति केलिए ज्ञान की आवश्यकता मानी थी। एषुत्तच्छन् ने कई स्थलों पर यह स्पष्ट बताया है कि मोक्ष ज्ञानाश्रित है। सच्चे गुरु के प्रसाद से अज्ञान दूर होता है और भगवत्-ज्ञान की प्राप्ति होती है। तब भगवत् कृपा से कर्मबंधन से मुक्ति और चिन्मय चरणों में लयता संभव होती है।[3] आगे वे बताते हैं कि भगवद्-कथा तथा नाम-श्रवण से धीरे-धीरे भक्ति मन में उत्पन्न होती है, इस भक्ति के बढ़ने से भगवत् बोध मन में बढ़ता है। भक्ति के बढ़ने से तत्वज्ञान का उदय और उससे मुक्ति प्राप्त होती है।[4] पंचवटी में रहते हुए एक बार लक्ष्मण भगवान से मुक्ति

1. किष्किन्धाकाण्ड, तारोपदेश, पृ. 129.
2. अरण्यकाण्ड, पृ. 87.
3. त्वलज्ञान परन्मारां मानुष जनङ्ङळ्कुळ्ळज्ञानं नीक्कुवोरु सद्गुरुलभिचीटुं। सद्गुरुवरङ्कल् निन्नम्पोटु वाक्यज्ञानमुळ्कांपिल् उदिच्चीटुं त्वल्प्रसादत्तालप्पोळ्। कर्मबंधत्तिङ्कल् निन्नाशु वेरपेट्टु भवचिन्मयपदत्तिङ्कलाहन्त लयिच्चीटुं।
बालकाण्ड, पृ. 28.
4. त्वल्कथा नाम श्रवणादिकोण्टुटनुळ्काम्पिलुण्टायिवरुं क्रमाल् भक्तियुं। त्वल्-पादपङ्कज भक्तिमुषुक्कुम्पोळ् त्वल्बोधवुं मनक्काम्पिलुदिच्चीटुं। भक्ति मुषुत्तुतत्वज्ञानमुण्टायीटुमिल्ल संशयं। अयोध्याकाण्ड, पृ. 33.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

के संबंध में जिज्ञासा प्रकट करते हैं तो भगवान श्रीराम उनको समझाते हैं कि भक्ति के निम्न लिखित साधन हैं—

(1) मान, अहंकार, काम, क्रोध सब को मन से त्यागना तथा परनिन्दा को समबुद्धि से सुनना

(2) चित्त-शुद्धि तथा देह-शुद्धि के साथ भक्ति-भाव से गुरु-सेवा करना

(3) नित्य सत्कर्मों में निरत हो सत्य का आश्रय लेकर आनंद का अनुभव करना

(4) मन, वचन, कर्म पर नियंत्रण करना तथा मन से इंद्रियासक्ति को छोड़ देना

(5) सर्वात्मभाव से मन को ईश्वर पर अर्पित करना

(6) पुत्र-कलत्रादि के प्रति अनासक्ति

(7) इष्टानिष्ट को समबुद्धि से देखना और स्वच्छ स्थान पर विरक्त भाव से रहना

(8) प्राकृत जनों का सहवास छोड़कर एकांत में परमात्म-ज्ञान में तन्मय रहना

(9) वेदान्त वाक्यार्थों का अवलोकन करना और वैदिक कर्मों को आत्मा में समर्पित करना।

उपर्युक्त बातों का निष्ठापूर्वक अनुसरण करने पर मन में ज्ञान उत्पन्न होता है, जिससे मन विकल्प रहित होता है। भगवत् भक्तों की संगति एवं उनकी सेवा, व्रतानुष्ठान, पूजा, वंदना, दास्य, श्रवण, कीर्तन आदि भी भगवत् भक्ति के साधन हैं। यह भक्ति पाने पर संसार में कुछ और पाने की अभिलाषा नहीं रहती क्योंकि भक्त ज्ञान–वैराग्य स्थिति को पाकर मुक्ति पाता है।[1] तात्पर्य यह कि एषुत्तच्छन् भक्ति को ज्ञानप्रद तथा ज्ञान को मोक्षप्रद मानते हैं। यही नहीं, भगवान राम शबरी को उपदेश देते हुए समझाते हैं कि तीर्थ–स्नान, तप, वेदाध्ययन, यागादि कर्मों से भगवत् प्राप्ति नहीं होती। केवल भक्ति ही ईश्वर प्राप्ति का सहायक है। वे स्पष्ट करते हैं कि प्रेम लक्षणा भक्ति मुक्तिसाधन है क्यों कि इससे तत्व ज्ञानानुभूति होती है।[2] इससे स्पष्ट है कि एषुत्तच्छन् की भक्ति भी ज्ञानमय है और ज्ञान से वे मुक्ति की सिद्धि स्वीकार करते हैं।

एषुत्तच्छन् की रामायण व्यक्तिगत साधना के साथ लोकधर्म का उज्ज्वल आदर्श प्रस्तुत करती है। दोनों का समन्वय इस कृति की श्रेष्ठता का कारण है। एषुत्तच्छन् जनवादी कवि हैं और उनका दृष्टिकोण लोकधर्म पर केन्द्रित है। उनकी

---

1. अरण्यकाण्ड, लक्ष्मणोपदेश, पृ. 86–88.
2. वही, पृ. 108–109.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

समन्वय भावना कर्म, ज्ञान तथा उपासना, व्यक्ति धर्म तथा लोकधर्म, जप तप ध्यान सब में झलकती है। उनके राम लोकसंग्रह की भावना से भूमि पर अवतार लेते हैं और दुष्टों का संहार करके शिष्ट जनों का उद्धार करते हैं।

एषुत्तच्छन् की रामायण का कलापक्ष भी सशक्त है। परंपरा से चली आती तमिल मिश्रित मलयालम के स्थान पर मलयालम तथा संस्कृत मिश्रित मणि-प्रवाल शैली का बीजारोपण एषुत्तच्छन् की इस कृति में हुआ था। इस प्रकार एक नवीन शैली के जन्मदाता होने का गौरव उन्हें प्राप्त है। 'समस्त कर्मार्पणं भवति करोमि ञान् समस्तपराधं क्षम स्वजगल्पते', 'उत्तिष्ठोत्तिष्ठ ब्रह्मन् तुष्टोहं तपत्ताले सिद्धिच्चु सेवाफलं' आदि इसी नवीन शैली के सुन्दर उदाहरण हैं। साथ ही प्राचीन मलयालम रूप भी देखा जा सकता है। विशेष कर क्रिया रूपों में प्राचीनता वर्तमान है। एषुत्तच्छन् की सर्वतोमुखी प्रतिभा ने मलयालम में प्रचलित काव्य-पद्धतियों को नवीनता के साँचे में ढाल दिया। अध्यात्मरामायण की शैली नया चमत्कार लेकर आती है। परंपरागत शैली को छोड़कर 'किळिप्पाट्टु' शैली का प्रादुर्भाव मलयालम में एषुत्तच्छन् की नवीन देन है। यह बड़ा साहसिक कार्य था, जो केवल भावुक कवि एषुत्तच्छन् ही कर सकते थे। एषुत्तच्छन् का शब्दानुप्रास एवं यमक अलंकार के प्रति विशेष लगाव लक्षित होता है। वैसे ही उपमा की सृष्टि में वे सिद्ध कलाकार हैं। केवल एक उदाहरण द्रष्टव्य है। राम ने शिवधनुष का भंजन किया। मेघगर्जनके समान धनुष-भंग का रव सुनकर राजाओं को उरगों के समान चौंक उठते तथा मैथिली को मयूरनी के समान मन ही मन नाचते बताकर कवि ने सुन्दर उपमा की योजना की है। धनुष के टूटने के रव को मेघ-गर्जन, राजाओं को उरग तथा मैथिली को मयूरनी के रूप में कल्पित करना एषुत्तच्छन् के कल्पना-चातुर्य का द्योतक है।[1] उपमाश्रित दार्शनिक उद्भावना भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। दक्षिण की ओर विपिन में प्रवेश करते हुए राम लक्ष्मण को समझाते हैं कि आगे आगे लक्ष्मण, उनके पीछे सीता और फिर राम प्रस्थान करें। इस प्रकार लक्ष्मण तथा राम के मध्य सीता को जीवात्मा तथा परमात्मा के मध्यस्थित महामाया का उपमान जहाँ काव्यात्मक अभिव्यंजना में चारुता लाता है, वहाँ दार्शनिक तत्व को सहज संवेद्य भी बनाता है।[2]

निष्कर्ष यह कि भक्तोत्तंस महाकवि एषुत्तच्छन् ने ही मलयालम भाषा में रामभक्ति की पीयूष धारा बहायी। उनकी कृति अध्यात्म रामायण भावपक्ष एवं

1. इटिवेट्टीटुं वण्णं विल्मुरिञ्ञोच्च केट्टु नटुङ्ङि राजाक्कन्मारुरगङ्ङळे पोले।
मैथिली मयिल्पेट पोले सन्तोषं पूण्टाळ् कौतुकमुण्टाय्वन्नु चेतसि कौशिकनुं।
बालकाण्ड, सीतास्वयंवरं, पृ. 23

2. जीवात्मा परमात्माक्कळ्कु मध्यस्थयाकुं देवियां महामायाशक्तियेन्नतु पोले।
अरण्यकाण्ड, पृ. 77.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शिल्पपक्ष दोनों दृष्टियों से मलयालम राम-काव्य परंपरा में अपना विशिष्ट स्थान रखती है। उन्होंने संस्कृत ग्रंथों में प्राप्त रामकथा का आश्रय लेकर उसमें साकार भक्ति एवं ज्ञान-वैराग्य को मिलाकर अध्यात्म रामायण का प्रासाद खड़ा कर दिया है। कथावस्तु के ढांचे में तथा दार्शनिक चिन्तन में एषुत्तच्छन् की मौलिकता का दावा भले ही न कर सकें, किन्तु परंपराश्रित रामकथा को ज्ञान-भक्ति के गंगा-यमुना संगमतीर्थ के रूप में जन-मानस में अंकित कर, उसे राममय बनाने में उनका योगदान असंदिग्ध है। यही एषुत्तच्छन् का महत्व है और यही कैरली को उनकी अनुपम देन है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मलयालम में कृष्णकाव्य–परंपरा

भारतीय संस्कृति अध्यात्मवादी है और इसमें ईश्वर-साक्षात्कार को जीव का एकमात्र लक्ष्य बताया गया है। गीता में कहा गया है कि जो जिस रूप में भगवान की उपासना करता है, उसे भगवान उसी रूप में प्राप्त होता है। इसीका परिणाम है कि भारत में सगुण और निर्गुण भक्ति का प्रचार हुआ। सगुण भक्ति के भी दो रूप हुए—रामभक्ति एवं कृष्णभक्ति। यह सत्य है कि जितना प्रचार कृष्णभक्ति का हुआ उतना रामभक्ति का नहीं। बात यह है कि श्रीकृष्ण की मनोमुग्धकारी लीलाएँ जन-मानस को जिस मात्रा में आकृष्ट कर सकीं, उस मात्रा में राम का लोकोपकारक, लोकोद्धारक एवं धर्म-संस्थापक स्वरूप आकर्षक नहीं हो सका। इसलिए समस्त भारतीय साहित्य में कृष्ण काव्यों की अधिकता है। मलयालम साहित्य भी इसका अपवाद नहीं रहा।

मलयालम में कृष्ण संबंधी साहित्य विभिन्न रूपों, शैलियों में प्राप्त होता है। कृष्ण कथा संबंधी लोक-साहित्य ने यहाँ प्रचुरता प्राप्त की है। केवल मलयालम में ही नहीं, प्रत्येक भाषा में लोक-साहित्य का अपना विशिष्ट स्थान है। इनमें से अधिकांश लोक-साहित्य अवतारों या महान् व्यक्तियों पर आधारित है। कृष्ण संबंधी लोक साहित्य संस्कृत में प्रचुर मात्रा में मिलता है। श्रीमद्भागवत तथा श्रीकृष्ण कर्णामृत जैसे संस्कृत ग्रंथों में उपलब्ध कथा रूप इन लोककथाओं का विकसित एवं परिमार्जित रूप ही है। मलयालम में लोक साहित्य अधिकतर वीरगीतों के रूप में प्राप्त होता है; कृष्ण संबंधी लोकसाहित्य अपेक्षाकृत कम है। और जो भी कथाएँ प्राप्त हैं वे भी सीधे संस्कृत से गृहीत हैं। मलयालम लोककथाओं का विकसित रूप एषुत्तच्छन् के भागवतम् तथा चेरुश्शेरी की कृष्ण गाथा आदि में प्रबंधात्मक रूप में संगृहीत है।

मलयालम में उपलब्ध कृष्ण संबंधी लोककथाएँ बहुधा उनकी बाल-लीलाओं पर आश्रित हैं। पूतना मोक्षम्, शकटासुर वधं, कालिय दमनं, अघासुर मोक्षं, तृणावर्त निग्रहं बकासुर वधं आदि इस प्रसंग में उल्लेखनीय हैं। मलयालम साहित्य के मध्यकाल में प्रचलित लोकगीतों में सबसे प्रमुख है 'माभारतम् पाट्टु'। इसमें महाभारत की कथा को कवि ने स्वच्छन्दता पूर्वक प्रस्तुत किया है; लेकिन राजनीति-निपुण कृष्ण के अवदानों, उनकी राजनीति-कुशलता एवं दौत्य-निर्वहण क्षमता आदि पर पर्याप्त मात्रा में प्रकाश डाला गया है। 'माभारतम्' के ये गीत उन दिनों तिरुवितांकूर में खूब प्रचलित थे। खेत निराते-जोतते समय, धान भंडार घर में भरते समय और ऐसे अन्य दैनिक कार्यों में तल्लीन रहते समय केरलीय जनता हर्ष-शोक के अनुरूप स्वरों में ये गीत गाती थी। पूतना मोक्ष, शकटासुर वध, कालिय दमन,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अघासुर वध जैसी कृष्ण-लीलाएँ श्रीकृष्ण की अपरिमेय शक्ति एवं अलौकिक स्वरूप को व्यंजित करने में अतीव समर्थ हैं। केरलीयों में प्रचलित उल्लासपूरित नाना प्रकार की क्रीड़ाओं केलिए समुचित गीत भी मध्यकाल में रचे गये थे। ऐसे गीतों में 'मोहिनी आट्टम्' का उच्चतम स्थान है। इसमें विष्णु के अवतार रूप में परिकल्पित मोहिनी के दिव्य सौन्दर्य, मोहक रूप-लावण्य, उसके अतीव सौन्दर्य पर मंत्र-विमुग्ध देवासुर सभा, इन सबका चातुर्यपूर्ण वर्णन अतीव कलात्मक शैली में प्रस्तुत है।

कृष्ण संबंधी ये लोककथाएँ केवल सामान्य जनता को ही प्रभावित करती हैं, ऐसी बात नहीं है। इन कथाओं में विद्वानों ने रूपकात्मक अर्थ भी देखा और उन गूढार्थों का आस्वादन करते हुए सामान्य जनता के समान स्वयं आनंदित भी हुए। उदाहरण केलिए हम कालिय दमन को ही लें। दुष्ट-निग्रह और शिष्ट-संरक्षण केलिए अवतारी भगवान कृष्ण बाल्यकाल में ही अवतारोद्देश्य की पूर्त्ति में लग जाते हैं। गोप बालकों सहित वृन्दावन में गोचारण में प्रवृत्त भगवान कालिन्दी से कालिय नाग को हटा देने का संकल्प लेते हैं। कालिय के विष दंश से मुरझा हुआ कदंब वृक्ष कृष्ण के श्रीचरणों के स्पर्श मात्र से लहलहा उठता है। कालिन्दी के विषाक्त जल के पान से मृत पड़े गोप बालक कृष्ण के करुणापूर्ण दृष्टि-विक्षेप से पुनर्जीवन पाते हैं। भगवान कालिय नाग के फनों को नथ डालते हैं और उससे परिश्रान्त कालिय विष वमन करता है। नाग स्त्रियों की स्तुति पर भगवान कालिय का वध न करके उसे रमणक द्वीप भेज देते हैं।

यह जो साधारण सी कथा है, इसमें साधारण अर्थ के अतिरिक्त गूढार्थ भी पाया जा सकता है। गीता की उक्ति है कि काम एवं क्रोध मनुष्य की समस्त दुर्वृत्तियों केलिए कारणभूत हैं—

काम एष क्रोध एष रजोगुण समुद्भवः।
महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम्॥ 3.37

रजोगुण से उद्भूत काम एवं क्रोध सारे सद्गुणों का संहार करनेवाले तथा सारे पापों के प्रेरक तुम्हारे शत्रु हैं। यहाँ कालिय क्रोध का प्रतीक माना जा सकता है। क्रोध की विवेकहीन संहारक शक्ति ही विष है और सहस्र फन क्रोध जन्य सहस्र दुर्गुण हैं। मन के उन्नत धरातल रूपी कालिन्दी से मन के निम्न धरातल रूपी समुद्र की ओर क्रोध रूपी कालिय को सीमित करने देना ही 'कालिय दमन' का प्रतिपाद्य है। योगः चित्तवृत्ति निरोधः, यही पतंजलि ने कहा है। प्रकृत में क्रोध रूपी चित्तवृत्ति का संहार नहीं किया जा सकता, इसलिए उसे मूल प्रकृति की ओर उपशमित किया जाता है।

कृष्ण संबंधी समस्त लोककथाओं के पीछे ऐसे गूढार्थ भी निक्षिप्त हैं। जिनकी निष्ठा भक्तिमार्ग की ओर है, उन्हें ये कथाएँ भगवद् कथाओं के रूप में अनुभूत होती हैं। किन्तु ज्ञानी लोगों केलिए ही ये गूढार्थ मुख्य हैं। भगवद् साक्षात्कार के मार्ग भेद के अनुसार इन कथाओं की विविध प्रकार से व्याख्याएँ प्रस्तुत की जा सकती हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कृष्ण संबंधी प्रचुर लिखित साहित्य भी मलयालम में उपलब्ध है। इस साहित्य का आधार संस्कृत महाभारत या भागवत है। अत: मलयालम कृष्णकाव्य में राजनीति-विशारद श्रीकृष्ण तथा गोपिका-रमण श्रीकृष्ण दोनों रूप प्राप्त होते हैं। कृष्णकाव्य प्रणेता भक्त कवियों में निरणम् कवि, चेरुश्शेरी, एषुत्तच्छन्, पून्तानम्, कुंचन नंपियार, रामपुरत्तु वारियर आदि कितने ही नाम हमें सहसा स्मरण हो आते हैं। आगे हम इन कवियों की रचनाओं पर सरसरी दृष्टि डालेंगे।

मलयालम साहित्य में कृष्ण कथाओं के रचयिता के रूप में निरणम् कवियों का महत्वपूर्ण स्थान रहा। इसके अतिरिक्त उनका महत्व इस बात में भी है कि उन्होंने मलयालम की निजी काव्यशैली कृष्णपाट्टु तथा किळिपाट्टु का मार्ग-निर्देशन किया और इस प्रकार मलयालम काव्य शैली में एक नयी सरणी का सूत्रपात ही किया। निरणम् कवि संख्या में तीन थे—माधव पणिक्कर, शंकर पणिक्कर तथा राम पणिक्कर। ये पन्द्रहवीं शताब्दी में वर्तमान थे। माधव पणिक्कर ने 'भगवद् गीता' लिखी। माधव पणिक्कर इस बात में विशिष्ट स्थान के अधिकारी हैं कि आज से लगभग 600 वर्ष पूर्व गीता का अनुवाद किया, जबकि किसी प्रान्तीय भाषा में गीता का अनुवाद नहीं हुआ था। माधव पणिक्कर ने सात सौ श्लोकों वाली गीता को संक्षिप्त करके लगभग उसके आधे आकार में प्रस्तुत किया है। अनुवाद की भाषा ललित, सरस एवं कोमल है। इसमें सर्वेश्वर भगवान कृष्ण के वैदुष्य एवं तर्काश्रित बुद्धि का परिचय मिलता है। 'भारतमाला' के कवि शंकर पणिक्कर ने पहले भागवत के दशम स्कंध की कथा का वर्णन करने के उपरांत संक्षिप्त रूप में महाभारत की कथा प्रस्तुत की है। कवि की संक्षिप्तीकरण-पटुता श्लाघनीय है। यहाँ राजनीति-विशारद कृष्ण के कार्यों का सरस एवं उदात्त वर्णन है।

मलयालम कवियों में ख्याति प्राप्त रामपणिक्कर ने 'कण्णश्श रामायण' की रचना की। उसके अतिरिक्त कृष्ण से संबंधित भागवतम्, शिव रात्रि माहात्म्यं और भारतम् भी उनके ग्रंथ माने जाते हैं। कण्णश्श विरचित भागवत 91 अध्यायों में विभक्त है और काव्य गुण की दृष्टि से यह ग्रंथ कण्णश्श रामायण से भी एक कदम आगे है। 'भारतम्' ग्रंथ के प्रारंभ में भागवत के दशम स्कंध का संक्षिप्त रूप जोड़ा हुआ है।

कृष्णकाव्य प्रणेताओं में चेरुश्शेरी नंपूतिरी का स्थान सर्वोपरि है। उन्होंने 'कृष्ण गाथा' की रचना की। यह पंद्रहवीं-सोलहवीं शती की रचना है। इसमें श्रीकृष्ण के संपूर्ण जीवन से संबंधित प्रसंगों को स्थान दिया गया है और इस प्रकार इसमें श्रीकृष्ण जन्म से लेकर उनके स्वर्गारोहण तक की कथा उपलब्ध है। केरल की सामान्य जनता में इस ग्रंथ का विशिष्ट स्थान है। इसमें श्रीकृष्ण की बाललीला, वेणु-वादन आदि का सुन्दर एवं मार्मिक चित्रण अंकित है। कृष्ण की शिशु क्रीड़ा तथा रास-क्रीड़ा के वर्णन में कवि की तन्मयता दर्शनीय है। शिशु-क्रीड़ा स्वाभाविक,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सरस एवं मनोवैज्ञानिक है। शिशु सहज चंचलता से प्रेरित कृष्ण कभी अपने पिता के समान वस्त्र धारण करते हैं तो आश्चर्य विमुग्ध पिता को नमित होते देख कृष्ण उनकी पीठ पर सवार हो हाथी की सवारी करते हैं।

अच्छनेप्पोलेयुट्टुक्कुन्नेनेन्निट्टु
तल्च्चेल कोण्टङ्ङुट्टक्कुं नन्नाय्
मानिच्चु निन्नच्चन् कुम्पिट्टुं नेरत्त—
ङ्ङान कळिक्कुं मुतुकिलेरि।

शिल्पियों से प्रदत्त नाना प्रकार की गुड़ियाँ कृष्ण के पास सुलभ मात्रा में हैं। खाते समय कृष्ण उन्हें भी खिलाने की चेष्टा करते हैं, और यही नहीं माता से उन्हें दूध पिलाने की जिद भी करते हैं।

श्रीकृष्ण के मुरली-वादन के अगजग व्यापी प्रभाव का वर्णन करते हुए कवि लिखता है कि गोकुलनाथ अपनी सुमधुर मुरली का वादन आरंभ करते हैं तो वृन्दावन का प्रत्येक प्राणी मंत्र मुग्ध-सा खड़ा हो जाता है। पुष्पशाली वन-वृक्ष कन्हैया के वेणु स्वर से मंत्राभिभूत हो पुष्प वर्षा करते हुए तथा शाखाओं को झुकाते नतमस्तक हो जाते हैं। कालिन्दी निस्तब्ध हो रह जाती है। ब्रह्माजी को यह नाद नादब्रह्म-सा प्रतीत होता है, जीवन मुक्तों केलिए यह नित्य परमतत्व का आस्वादन कराता है तो भक्तों केलिए उनके जीवन-सायुज्य का सारतत्व है।

जहाँ श्रीकृष्ण के लौकिक स्वरूपों का विशद वर्णन हुआ है वहीं कवि का ध्यान उनके लोकोत्तर अलौकिक स्वरूप की व्यंजना में भी सजग रहा। देवकीपुत्र कृष्ण को जगत्पति, चराचर स्वामी, परमात्मा, नित्य एवं एकमेवाद्वैत साक्षात् विष्णु के रूप में भी देखा गया है और उनके प्रति पावन भक्ति को संसार-मुक्ति केलिए एक मात्र साधन बताया गया है। अतिशय शृंगार-वर्णन एवं अपरिमेय भक्तिरस की प्रचुरता के कारण यह ग्रंथ केरलीय जनता का कंठाभरण है। रस-पुष्टि, अलंकार-शबलता, अर्थ-गांभीर्य आदि काव्यात्मक गुणों के कारण यह काव्य सबको आकृष्ट कर लेता है और उल्लास के प्रत्येक क्षण में जनता आज भी इसके सरस गीत गाते हुए नृत्य निरत हुआ करती है। साहित्यिक दृष्टि से इस काव्य का एक और वैशिष्ट्य है। यह शुद्ध मलयालम भाषा का सर्वप्रथम महाकाव्य है। मलयालम साहित्य के छः सौ वर्षों की विकास परिणति के उपरांत आज भी यह महाकाव्य 'कनिष्ठिकाधिष्ठित' ही रह गया है।

भक्तोत्तंस महाकवि एष़ुत्तच्छन् की अध्यात्म रामायण का उल्लेख रामकाव्य परंपरा में किया गया है। किन्तु एष़ुत्तच्छन् मात्र रामभक्त कवि नहीं थे, वे कृष्ण के भी परम भक्त थे। यही क्यों, उनमें राम या कृष्ण में कोई अन्तर ही नहीं था। वे समन्वयवादी कवि थे। उनके भगवान सगुण-निर्गुण दोनों हैं। श्रीरामचंद्रजी के अवदानों को लेकर रामायण लिखने के साथ ही कृष्ण के चरित को लेकर उन्होंने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

महाभारतम्, हरिनाम संकीर्त्तनम्, भागवतम् किळिप्पाट्टु जैसी कृतियाँ भी रची हैं। हरिनाम संकीर्त्तनम् और इरुपत्तिनालु वृत्तम् उनकी दार्शनिक चिन्तन धारा को दर्शाते हैं। उनमें एषुत्तच्छन् के भक्तिमय हृदय एवं भगवान के पावन नाम के प्रति चिर आस्था का भी परिचय मिलता है। हरिनाम संकीर्त्तनम् स्तोत्र काव्यों में अपना विशिष्ट स्थान रखता है और आज भी संध्या समय केरल के प्रत्येक घर में इन स्तोत्रों का पारायण होता आ रहा है। 'महाभारतम्' में श्रीकृष्ण के लोकोत्तर स्वरूप की झाँकी प्रस्तुत है। एषुत्तच्छन् की सर्वोत्कृष्ट कृति तथा शारिका गीत शैली की अनुपम रचना 'महाभारतम्' है, इसमें कोई संदेह नहीं है। यहाँ अत्यन्त प्रतिभा संपन्न प्रौढ़ कवि को हम देख पाते हैं। एषुत्तच्छन् का 'महाभारतम्' व्यास के विशाल काव्यग्रंथ भारत का संक्षिप्त एवं स्वतंत्र अनुवाद है। भारत के अठारह पर्वों को एषुत्तच्छन् ने इक्कीस पर्वों में निबद्ध किया है। कवि ने कई प्रसंगों को अत्यन्त संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया है। रस-भाव सन्निवेश में कवि की अपार क्षमता सर्वत्र दर्शनीय है। सरस एवं सुललित शब्द-प्रयोग एवं शब्द-माधुर्य पाठकों को विस्मय-विमुग्ध कर देता है। आश्रम छोड़ राजमहल केलिए शकुन्तला के प्रस्थान का प्रसंग, कचदेवयानी प्रसंग आदि में कवि की तन्मयता एवं अन्तर्दशाओं के चित्रीकरण की पटुता अवश्य ही प्रशंसनीय है। लघुकाय होता हुआ भी एषुत्तच्छन् का महाभारतम् महान कृति है; मानव के भौतिक एवं आध्यात्मिक जीवन के प्रतिपादन में यह काव्य अतीव समर्थ एवं सफल सिद्ध हुआ है। एषुत्तच्छन् का तत्वचिंतक एवं दार्शनिक कवि रूप आद्यन्त काव्य में प्रतिफलित हुआ है।

एषुत्तच्छन् का 'भागवतम्' भी अनुपम है। किन्तु इस ग्रंथ के एषुत्तच्छन् कृत होने में कुछ विद्वानों को संदेह है। बात यह है कि 'महाभारतम्' तथा 'भागवतम्' की भाषा-शैली में पर्याप्त भिन्नता दिखाई देती है। कुछ भी हो, सामान्य जनता में इस ग्रंथ का महत्व असंदिग्ध है। इसमें कुछ प्रसंग हृदयावर्जक एवं अनुपम हैं। क्षीरसागर के मंथन के समय विष्णु रूप मोहिनी के अमृत परोसने का प्रसंग कवि के हास्य-व्यंग्य का प्रोज्वल उदाहरण है। ऐसे प्रसंगों में एषुत्तच्छन् का वास्तविक रूप प्रकट होता है और सहसा कहना पड़ता है कि भागवतम् एषुत्तच्छन् की तूलिका की ही उपज है। यही नहीं, दार्शनिक उद्भावना, तत्वचिन्तन आदि से संबंधित कई स्थल ऐसे हैं जो यह स्पष्ट घोषित करते हैं कि भागवतम् एषुत्तच्छन् की कृति है।

कृष्णभक्त कवियों की श्रेणी में भक्ताग्रेसर पून्तानम् का सर्वोपरि स्थान है। वे भगवान कृष्ण के अनन्य भक्त, पुजारी एवं उपासक थे और यही नहीं, वे सारे संसार को कृष्णमय मानते थे। संतान गोपालम्, श्रीकृष्ण कर्णामृतम् और श्रीकृष्ण लीला उनकी प्रमुख भक्तिरस प्रधान रचनाएँ हैं। श्रीकृष्ण भक्ति से प्रेरित हो उन्होंने दास्य भाव के जो कीर्तन लिखे हैं, वे मलयालम साहित्य की अनुपम निधि हैं। हिन्दी के भक्त कवि सूरदास और मलयालम के पून्तानम् में अद्भुत साम्य है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पून्तानम् गुरुवायूर स्थित भगवान कृष्ण के अनन्य दास थे और उनके सामने अपनी दीनता प्रकट करते हुए नहीं अघाते। शारीरिक यातनाओं ने मेल्पत्तूर नारायण भट्टतिरि को भगवद्भक्त बनाया था तो पारिवारिक दारिद्र्य ने पून्तानम् को भगवद् चरणारविन्दों का दास बना दिया। लेकिन पून्तानम् सांसारिक सुखों केलिए भगवान से याचना नहीं करते, भव-बंधन की मुक्ति ही उनके लिए प्रकाम्य है। कवि पून्तानम् के अनुसार अपना कर्म ही अपना भाग्य है और इस कर्ममय संसार से मुक्ति पाने केलिए भक्ति तथा भगवद्स्तोत्र का कीर्तन ही एकमात्र सहारा है। बाल गोपाल श्रीकृष्ण के प्रति अनुरक्त पून्तानम् का यहाँ तक कथन है कि जब प्यारा कृष्ण ही हृदय-वेदी पर नृत्य निरत है तब पुत्र रूप में अन्य शिशुओं की क्या आवश्यकता है? उनका बालकृष्ण का वर्णन पढ़ते समय ऐसा प्रतिभासित होने लगता है कि वे अपने नेत्रों के सम्मुख बालगोपाल कन्हैया को देखते हुए उनका चित्र अंकित कर रहे हैं। बाल कन्हैया की रूप-माधुरी पर मुग्ध कवि लिखता है—"आंबाडी (गोकुल) में एक नादान शिशु है और उस नादान शिशु का कृष्ण नाम है। उसकी नन्ही-सी कोमल हथेली में एक बांसुरी है। उसके छोटे-छोटे पाँवों में पायल है और मृदुल कटि प्रदेश में किंकिणी है; नन्हे से हाथों में मक्खन शोभा पा रहा है और उसके दोनों पाँव नृत्य निरत हैं।" पून्तानम् का वैकुण्ठ-वर्णन भी गहन अनुभूति एवं अन्तर्दृष्टि का द्योतक है। लगता है कि कवि वैकुण्ठ को प्रत्यक्ष देखते हुए उसका वर्णन करता जा रहा है। जो भी हो, पून्तानम् सच्चे भक्त हैं और उनके संतान गोपालम् के श्लोक केरलीय नारियों के कंठाग्र पर नाचते हैं। मलयालम के आलोचक प्रवर प्रोफसर के. वी. कृष्णय्यर ने ठीक ही बताया है कि केरलीय भक्तों में पून्तानम् अग्रगण्य हैं।

रामपुरत्तु वारियर एक प्रतिभा-संपन्न कवि थे। उन्होंने कुचेलवृत्तम् वञ्चिप्पाट्टु (सुदामा चरित–नौका गीत) की रचना की, जो कृष्ण-काव्यों में प्रमुख स्थान पाने योग्य है। कहा जाता है कि तिरुवितांकूर के महाराजा मार्त्ताण्डवर्मा के साथ नौका-विहार करते समय महाराजा के आग्रह पर उनके मनोविनोद केलिए यह नौकागीत लिखा था। आज भी प्रतिवर्ष 'ओणम्' त्योहार के दिन केरलीय जनता नौका खेते हुए यह गीत गाया करती है। अपने बाल्यसखा सुदामा ब्राह्मण के प्रति भगवान कृष्ण की अनुकंपा एवं अनुग्रह का सरस वर्णन करनेवाली यह कृति जनमानस में चिरप्रतिष्ठा प्राप्त कर चुकी है। कविता का आरंभ महाराजा की प्रशस्ति के साथ होता है। बाद में भगवान के दर्शनार्थ जाने का उपक्रम लेनेवाले सुदामा के विचार वास्तव में कवि के अपने ही विचार हैं। सुदामा का विचार है कि राजीव नेत्र श्रीकृष्ण मुझे देखते हुए प्रसन्न होंगे और स्वागत-सत्कार के साथ वापस भिजवा दगे। अप्रत्यक्ष रूप से वारियर का यह आशय है कि महाराजा भी उनका खूब स्वागत-सत्कार करेंगे और प्रभूत धन देकर वापस भेजेंगे। श्रीकृष्ण की भक्ति से ओत-प्रोत वारियर ने काव्यारंभ में लगभग एक सौ से अधिक पंक्तियाँ भगवान की प्रशंसा,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

स्तुति, एवं कीर्त्तन में लिखी हैं। वास्तव में वारियर की कविता दास्य-भक्ति का सुन्दर उदाहरण है। अनलंकृत सहज एवं सरस पद-विन्यास एवं भाषा का सहज प्रवाह कवि की निर्व्याज भक्ति का परिचायक है। हिन्दी में नरोत्तमदास ने सुदामा चरित लिखा था। वारियर का कुचेलवृत्तम् पढ़ते ही नरोत्तमदास का सुदामा चरित सहसा याद आता है। नौकागीत शैली में रचे समस्त काव्यों में इसका सर्वोत्तम स्थ न है।

उपर्युक्त कृष्ण काव्यों के अतिरिक्त कृष्ण संबंधी कथाएँ लेकर अनेक आट्टक्कथाएँ रची गयी हैं। आट्टक्कथा केरल का अति प्रसिद्ध एवं अति प्रचलित सांस्कृतिक एवं कलात्मक विधा है, जिसे मलयालम का सर्वप्रथम दृश्य काव्य भी माना जा सकता है। श्रीकृष्ण की लीलाओं ने जनमानस में जो चिरप्रतिष्ठा प्राप्त की है उसी का परिणाम है कि आट्टक्कथाओं में से अधिकांश कृष्ण संबंधी हैं और इन आट्टक्कथाओं के प्रति जनता का मोह देखने लायक है। जहाँ कहीं भी आट्टक्कथाओं का आयोजन होता है वहाँ हजारों की संख्या में आबालवृद्ध जनता की भीड़ जम जाती है। कृष्णाट्टम् को प्रोत्साहित करने का श्रेय कोषिक्कोट्टु सामूतिरी को प्राप्त होता है। उनकी छत्रछाया में इसने पूर्ण विकास प्राप्त किया और कृष्णाट्टम् का आधार भागवत में प्रदिपादित कृष्णलीलाएँ ही हैं। इन आट्टक्कथाओं में स्वातितिरुनाल् के कृष्णावतारम्, कालियमर्द्दनम् और कंसवधम् ने पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त की है।

केरल में तुळ्ळल् साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है। यह बड़ी ही रसात्मक साहित्यिक विधा है। आट्टक्कथा के समान ही रसात्मक, किन्तु उससे सरल एक काव्यशाखा के रूप में इसकी परिगणना की जा सकती है। इसमें नर्तक स्वयं गाता हुआ नृत्य करता है और उसके सहायक के रूप में ताल के अनुरूप गानेवाला एक गायक तथा मृदंग बजानेवाला एक वादक मात्र की आवश्यकता है। कथकळि के समान उतनी वेषभूषा की इसमें आवश्यकता नहीं होती और यह नृत्य बहुधा दिन में होता है। असंख्य जनता को रस-सागर में निमग्न करता हुआ यह तुळ्ळल् चिरकाल तक प्रचार में रहा। इसके आरंभकर्ता कुंचन नंपियार हैं। तुंचत्तु रामानुजन एषुत्तच्छन् के उपरांत केरल में अधिक प्रतिष्ठा प्राप्त व्यक्ति कुंचन नंपियार हैं। कृष्णकथा को आधार बनाकर उन्होंने कृष्णलीला और कृष्णचरित नामक दो तुळ्ळल् नृत्य बनाये थे। कुंचन सामान्य जनता के कवि थे और जनसामान्य को आनंदित करना ही उनका लक्ष्य था। इसलिए सामान्य जनता की भाषा में उन्होंने अपनी रचना प्रस्तुत की जिस कारण बिना स्त्री-पुरुष की भेद भावना के, पंडित-पामर सभी उनकी रचनाओं का रसास्वादन करते हैं। कुंचन का हास्य एवं व्यंग्य भी चोखा तीर जैसा है। कृष्णकथा को आधार बनाकर कवि ने अर्थान्तरन्यास अलंकार के द्वारा लोकधर्म एवं लोकादर्श का भी प्रतिपादन किया है।

तुळ्ळल् शाखा में 'गजेन्द्रमोक्षम्' भी एक प्रमुख रचना है। बहुत से विद्वान इसे कुंचन नंपियार की रचना मानते हैं। लेकिन पुष्ट प्रमाणों के अभाव में इस

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रचना को नंपियार की रचना स्वीकार करने में कठिनाई है। इसे वेण्मणिमहन् की कृति मानना और भी युक्ति-संगत जान पड़ता है।

आधुनिक मलयालम काव्य में भी श्रीकृष्णचरित संबंधी असंख्य प्रसंगों, घटनाओं को प्रश्रय मिला है। महाकवि के. सी. केशव पिल्लै, वेण्मणि नम्पूतिरी, रामवर्मा कोयित्तम्पुरान्, आदि कवियों की रचनाओं का भी संक्षेप में उल्लेख करना आवश्यक है। महाकवि केशव पिल्लै आधुनिक मलयालम काव्यधारा के प्रसिद्ध कवियों में से एक हैं। उनका 'केशवीयम्' महाकाव्य भागवत में वर्णित स्यमन्तक मणि पर आधारित है। यह स्यमन्तक कथा इसके पहले आट्टक्कथा, तुळ्ळल्, कैकोट्टिकळि आदि नाना साहित्यिक विधाओं में स्थान पा चकी थी। केशव पिल्लै ने भामानिवेदनम्, मणि प्रार्थना, मृगयानुवर्णनम्, मणिभ्रंशन्, अपवाद चिन्तनम्, वनगमनम, प्रसेनदेहदर्शनम्, मणिदर्शनम्, द्वन्द्वयुद्धम्, पौर विलापम, प्रत्यागमनम् और भामाग्रहणम् इन बारह सर्गों में पूरी कथा निबद्ध की है। मलयालम तथा संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित केशव पिल्लै का यह काव्य मलयालम में एक नयी सरणी का अनुमोदन करता है। केरल में काव्य-रचना में दो सिद्धान्त प्रचलित हुए। केरल वर्मा वलियकोयितम्पुरान् और उनके अनुयायियों ने पद्य-रचना में द्वितीयाक्षर प्रासवाद का समर्थन किया तो राज-राजवर्मा और उनके अनुयायियों ने उपरोक्त वाद की निरर्थकता सिद्ध की। केशव पिल्लै का 'केशवीयम्' महाकाव्य इसी द्वितीय पक्ष का समर्थन करता हुआ लिखा गया काव्य है और उन्होंने यह स्पष्ट प्रमाणित कर दिया कि द्वितीयाक्षरप्रास के अभाव में भी उत्तम कलासृष्टि संभव है।

वेण्मणि नंपूतिरियों ने भी कृष्ण संबंधी कई श्लोक एवं स्तुतिपरक रचनाए लिखी हैं। रामवर्मा कोयित्तम्पुरान् ने मणिप्रवाल शैली में कुचेलवृत्तम् (सुदामा चरित) लिखा, जिसमें श्रीकृष्ण और सुदामा की मैत्री, सुदामा का कृष्ण के यहाँ जाना तथा कृष्ण द्वारा सुदामा के दारिद्र्य का निवारण आदि घटनाओं का वर्णन है। कोयित्तम्पुरान् ने गीत गोविन्द का भाषानुवाद भी प्रस्तुत किया है।

मलयालम में कृष्णकाव्यों की प्रचुरता है। ऊपर मुख्य रचनाओं पर ही संक्षेप में प्रकाश डाला है। मलयालम के ये कृष्णकाव्य विविध शैलियों में उपलब्ध हैं। मलयालम तथा हिन्दी कृष्णकाव्यों की तुलना करते समय यह स्पष्ट विदित होगा कि भावों-विचारों में आश्चर्यजनक साम्य है। दोनों भाषाओं के कवियों ने श्रीकृष्ण के बाल-सौन्दर्य के वर्णन में विशेष रुचि दिखायी है और उनके भाव भी लगभग समान हैं। सूरदास ने बालकृष्ण की मोर-पंखों से अलंकृत बालों की चोटी, कंठ की वन-माला, सुकोमल नील नयन, कर्णभूषण, अरुण अधर सब का सुन्दर वर्णन किया है तो मलयालम के कवि चेरुश्शेरी नंपूतिरी ने भी वही भाव इन पंक्तियों में प्रकट किया है—

पीलिकळिट चेर्न्नोरु तिरुमुटि नील घनालि समानम्

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मालति वनमल्लिक मालकळ् भालविशेषकजालम्
लोल नयन नीलकळ गंडज कुण्डल मंडल शोभा
जालवुं अरुणाधर बिम्बमषकोटु शरणं शंभो !

सूरदास तथा चेरुश्शेरी ने श्रीकृष्ण के मुरली-वादन के अगजग व्यापी प्रभाव का एक-सा वर्णन किया है । चेरुश्शेरी की गोपिकाओं की दशा देखते ही बनती है—

वेणियषिञ्ञतुं नीवि किषिञ्ञतुम्
कोळ्मयिर् कोण्टतुं तूवियर्प्पुम्
ओन्नुमङ्ङोराते पावकळेप्पोले
निन्नल्ली मेवुन्नु नीळे-नीळे !

(श्रीकृष्ण का वेणुस्वर सुनते ही काम-बाण से विद्ध गोपियों की अद्भुत दशा है । उन्हें न वेणी जाल के खुलने का पता है, न नीवि के खुलने का, न अपनी पुलकावलियों का ज्ञान है न स्वेद कणों का । सुध-बुध खोकर प्रतिमाओं के समान वे इधर-उधर खड़ी की खड़ी रह गयीं ।)

दोनों भाषाओं के कवियों ने अपनी तुच्छता व्यक्त करते हुए भगवद्कृपा की याचना की है । मलयालम के कवि कुंचन नंपियार अपने को 'अज्ञानिनामाद्यः' घोषित करते हैं । दोनों कवियों ने दार्शनिक विचारों का भी प्रतिपादन किया है । हाँ, हिन्दी के सूरदास आदि के काव्य में अद्वैतवाद और शुद्धाद्वैतवाद दोनों का प्रभाव परिलक्षित होता है जबकि मलयालम के कवि अद्वैतवाद के प्रति विशेष आकृष्ट हैं ।

हिन्दी तथा मलयालम के कृष्णभक्त कवियों में कुछ बातों में वैषम्य भी देखा जा सकता है । हिन्दी के कृष्णभक्त कवि श्रीकृष्ण के सगुण स्वरूप के उपासक थे और उन्होंने भगवान कृष्ण के निर्गुण रूप की उपासना में कोई विशेष रुचि नहीं दर्शायी । दूसरे हिन्दी के कृष्णकाव्य के निर्माता कवि की अपेक्षा भक्त अधिक थे । मलयालम और हिन्दी के कृष्ण काव्यों में कई बातों में अद्भुत साम्य अवश्य है, किन्तु इस बात की ओर विशेष ध्यान देना होगा कि मलयालम के कृष्णकाव्य के प्रणेता श्रीकृष्ण के सगुण-निर्गुण दोनों रूपों को समान मान्यता प्रदान करते से जान पड़ते हैं । दूसरा अन्तर यह भी है कि मलयालम के कृष्णकाव्यकार मुख्यतया कवि हैं, भक्त कम । हाँ एषुत्तच्छन् या पून्तानम् जैसे भक्तोत्तंस कवि इसके अपवाद हैं ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

महाकवि कुमारन् आशान्

आधुनिक मलयालम साहित्य में एक नूतन काव्यधारा, जिसे साधारणतया 'कालपनिक प्रस्थानम्' (कालपनिक काव्य) का नाम दिया जाता है, के प्रवर्तक के रूप में महाकवि कुमारन् आशान् समादरणीय स्थान के अधिकारी हैं। उन दिनों मलयालम कविता परंपरागत रूढ़ियों का अंधानुकरण करती आ रही थी और साहित्यकारों की यह मिथ्या धारणा बनी थी कि महाकाव्य की रचना करने पर ही कोई महाकवि का पद पा सकता है। आशान् ने इस अंध-परंपरा का अनुमोदन न करके एक नूतन काव्य-प्रणाली का सूत्रपात किया।

कुमारन् आशान् का जन्म पिछड़ी मानी जाने वाली 'ईषव' जाति में सन् 1873 ई. में हुआ। सौभाग्यवश उस समय के प्रसिद्ध योगी नारायण गुरु के संपर्क में आने और उन्हीं के वर-प्रसाद के फलस्वरूप मलयालम तथा संस्कृत साहित्य का गंभीर अध्ययन करने का उन्हें सुअवसर प्राप्त हुआ। उनकी काव्य-साधना के दो सोपान माने जा सकते हैं। प्रथम सोपान कुछ मौलिक स्तोत्र-काव्यों तथा संस्कृत ग्रंथों के अनुवाद का है, जिनमें शांकर शतक, सुब्रह्मण्य शतक, सौन्दर्य लहरी (अनुवाद), मेघ सन्देश (अनुवाद), प्रबोध चन्द्रोदय नाटक (अनुवाद) आदि प्रसिद्ध हैं। किन्तु सन् 1908 ई. में लिखित 'वीणपूवु' (पतित पुष्प) ने मलयालम काव्यक्षेत्र में एक नूतन काव्य-प्रवृत्ति का शिलान्यास किया और इस कृति के साथ उनकी साहित्य-साधना का द्वितीय सोपान आरंभ होता है। इस काल में रचित ओरु सिंहप्रसवम् (एक सिंह का प्रसव, 1908), नलिनी (1911), लीला (1914), श्रीबुद्ध चरित (1919), ग्राम वृक्षत्तिले कुयिल् (ग्राम्य वृक्ष की कोयल 1918), प्ररोदन (1919), चिन्ताविष्टयाय सीता (1919), पुष्पवाटि (फुलवारी, 1922), दुरवस्था (1922), चण्डाल भिक्षुकी (1922), करुणा (1923) मणिमाला (1924), वनमाला (1925) आदि काव्य-कृतियाँ आशान् के साहित्य-पथ के एक एक 'माइल स्टोण' हैं। अगाध तत्वचिन्तन, अभूत पूर्व आशय-संपत्ति, सूक्ष्म प्रकृति-निरीक्षण तथा अनुपम सौन्दर्य आशान् के काव्य की प्रमुख विशेषताएँ हैं।

कुमारन् आशान् बहुधा प्रेम-गायक कहलाते हैं क्यों कि उनकी अधिकांश काव्य-कृतियों का मुख्य प्रतिपाद्य प्रेम है। 'नलिनी' काव्य ही लें। अपने बाल-सहचर दिवाकरन् के यौवनागमन के अवसर पर संन्यासी वन गृह-परित्याग के फलस्वरूप नलिनी के प्रेमी हृदय पर गहरा आघात पहुँचता है। माता-पिता के द्वारा बलात् अन्य वर के साथ उसका विवाह करा देने का निश्चय जानकर आधी रात के समय नलिनी एक सरोवर में कूद पड़कर आत्म-हत्या करने का प्रयत्न करती है, किन्तु एक संन्यासी उसे बचा पाता है। उस संन्यासी के आश्रम में पाँच वर्ष के उपरांत उसकी भेंट

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आकस्मिक रूप से दिवाकरन् से होती है। लेकिन लौकिक सुखों के प्रति विरक्त दिवाकरन् के उपदेशों से मर्माहत नलिनी अपनी जीवन-लीला का अंत कर डालती है। 'लीला' काव्य का इतिवृत्त लैला-मजनू के इतिवृत्त की छाया लिये हुए है। अपने पड़ोसी मदनन् के प्रेम के वशीभूत लीला का विवाह उसका पिता एक वणिक पुत्र के साथ निर्दयता-पूर्वक करा देता है। लीला मदनन् को विस्मृत नहीं कर सकती थी। संयोगवश उसका पति मर जाता है तो विवाह-संबंध से मुक्त लीला पिंजड़े से उन्मुक्त पक्षिणी के समान आतुर हो मदनन् से मिलने अपने गाँव में पहुँचती है तो उसे यह दुखद समाचार प्राप्त होता है कि उसके विरह में संतप्त मदनन् घर छोड़ विंध्याचल प्रदेश में कहीं चला गया है। लीला विंध्याचल में पहुँचती है और मदनन् से मिल भी पाती है। किन्तु तब तक विरह-ताप में जल-भुनकर मदनन् का हृदय ऐहिक सुखों के प्रति विरक्त हो चुका था। अपनी प्रेयसी के इस आकस्मिक एवं अप्रत्याशित मिलन के कारण उमड़ी भाव-तरंगों के घात-प्रतिघातों से आक्रान्त मदनन् रेवा नदी में कूद मरता है तो लीला भी उसी का अनुसरण करती है। इस प्रकार 'लीला' असफल प्रणय की करुण कथा है। 'दुरवस्था' में निम्न कुल-जात चण्डाल के प्रति एक ब्राह्मण कन्या का आदर्श प्रेम वर्णित है तो 'चण्डाल भिक्षुकी' में एक चण्डाल-बालिका का एक बौद्ध भिक्षु के प्रति अज्ञात आकर्षण तथा फलस्वरूप उसके भिक्षुणी बनने की कथा है। 'करुणा' काव्य का प्रतिपाद्य जगत्-प्रसिद्ध वार वनिता वासवदत्ता का उपगुप्त के प्रति अनुराग है। अतः आशान् प्रेम के गायक कवि हैं। किन्तु आशान् मांसल या वासनात्मक प्रेम के समर्थक नहीं हैं। उन्होंने लिखा है कि प्रेम में मांसदाह केलिए निश्चय ही स्थान नहीं है (ध्रुमंसिह मांस निबद्धमल्ल रागम्)। उनके पात्र सर्वात्म त्याग एवं सात्विक भाव से प्रेरित हैं। आशान् के प्रेम-काव्यों का अंत सात्विक शांति में होता है। दिवाकरन् नलिनी को प्रेम का महत्व बताता है कि प्रेम एकमात्र सत्य और सार तत्व है। 'चण्डाल भिक्षुकी' में भी यही बताया गया है कि प्रेम एकमात्र शक्ति है, सौन्दर्य है।

कुमारन् आशान् अपने भावों-विचारों में क्रांतिकारी रहे। साहित्य-क्षेत्र में उनकी भाव-क्रांति का परिचय मिलता है। रूढ़ि-रीतियों से पृथक् रहकर आशान् ने काव्यक्षेत्र में नूतन भावों, विचारों तथा शिल्प-सौन्दर्य का आविष्करण किया तथा लोगों को दिखा दिया कि काव्यास्वादन केलिए एक पृथक् इन्द्रिय की आवश्यकता है तो सामाजिक क्षेत्र में निम्न जाति के लोगों के पुरोधा बनकर परंपरागत रूढ़ियों, अंध-विश्वासों तथा जातिगत अत्याचारों के विरोध में सक्रिय क्रांति का आह्वान किया। अपने स्वार्थ-लाभ केलिए निम्न वर्गीय लोगों को प्रताड़ित करने वाले मदांध उच्चवर्गीय मानवों के प्रति उनका आक्रोश कम नहीं था। आशान् ने जाति प्रथा पर कुठाराघात करते हुए यह घोषित किया कि अट्टालिकाओं में सब प्रकार के सुख-भोग भोगते उच्च वर्ग तथा टूटी-फूटी झोंपड़ियों में सामाजिक यातनाओं का शिकार बन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आँसू पीकर रहने वाले निम्न वर्ग दोनों एक ही भगवान के हाथों स्रष्ट हैं। दोनों की शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक संरचना समान है। पर दुख है कि इस कलुषित जाति-प्रथा ने केरल माता को असंख्य नवरत्नों से वंचित कर डाला, कई नवरत्न जाति-प्रथा से धूलि-धूसरित रह गये। वे केरल माता को चेतावनी देते हैं—

हन्तयिज्जातिये होमिच्चोषिच्चाल् निन्
चिन्तितं साधिच्चु रत्नगभ !
तोट्टुकूटात्तवर् तीण्टिक्कूटात्तवर्
दृष्टियिल् पेट्टालुं दोषमुळ्ळोर्
केट्टिल्लात्तोर् तम्मिलुण्णात्तोरिङ्ङने
योट्टल्लहो जाति कोमरङ्ङ्ळ् ।

(हे रत्नगर्भा केरल माता ! इस जाति-प्रथा का होम करके उसका उच्चाटन करने पर तुम्हारी मनोकामना पूर्ण होगी। इस जाति-प्रथा की विकृति देखो, कोई अस्पृश्य है, तो किसी की छाया तक वर्जित है। कोई दृष्टिपथ में भी आने योग्य नहीं है, कोई विवाह-संबंध केलिए तो कोई प्रीतिभोज केलिए अयोग्य ठहराया गया। इस प्रकार जाति के असंख्य विकराल रूप प्रचलित हैं।)

आगे कवि उच्च वर्ग को सावधान करता है कि यह जाति किसी के उत्कर्ष में बाधक नहीं ठहरायी जा सकती। नीच जाति में भी लोकाराध्य नर-श्रेष्ठों का जन्म हुआ है, यहाँ तक कि कई ऋषि-मुनि लोग नीच जन्मा थे। मनुष्य-मनुष्य में खाई खोदने वाली ईर्ष्या-स्वरूपिणी यह जाति-प्रथा कृत्या राक्षसी है जो एकता को समूल निगल लेगी। कवि का मानव को संदेश है कि विश्व रूपी उद्यान में विकसित विभिन्न जाति के पुष्पों को परस्पर मिलने दो, उन्हें प्रेम से सिंचित रखो और इस प्रकार उसे संजोकर-संवारकर रखने पर वह नंदनवन से बढ़कर प्रकाम्य बनेगा, जिसका भगवान भी अभिनंदन करेगा। भगवान वनमाली को आनंद न प्रदान करने वाला कोई पुष्प नहीं है। सारे पुष्प उसकी इच्छा के अनुसार पूर्णत्व को पाकर उसके चरण-पंकजों में विलीन होने को तरस रहे हैं। ध्यान रखे कि पुष्प के मार्ग में कोई बाधक न बने। क्योंकि—

एल्लां विटर्न्नृ परिमळं तूवट्टे—
येल्लां चितरट्टे वर्ण्ण शोभ ।
एल्लामितळुकळ् नीट्टि वलिप्पमा—
र्न्नुल्लाघ भाव मियन्निटट्टे ।

(भगवान की कामना है कि सब पुष्प विकसित हो अपना सौरभ बिखेर दें, अपना रूप-रंग फैला दें, सब अपने दलों को बढ़ाकर पूर्णता से युक्त हो सानंद रह पाएँ।)

कवि का आक्रोश-भरा आह्वान है कि अंध-परंपरा को प्रश्रय देकर निर्मित नियमों को बदल डालो, अन्यथा ये नियम तथा रूढ़ि-रीतियाँ ही तुम्हें खा डालेंगी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कवि का उद्घोष है कि रूढ़ियों, अंध-परंपराओं का युग बीत चुका है अब समय को पहचान कर उसके अनुरूप आचरण करना होगा। अंध-परंपरा रूपी धागा अब पुराना पड़ गया है, मनुष्य को परस्पर पृथक् बांध रखने की सामर्थ्य अब उसमें नहीं रह गयी। चारों ओर से यही बुलन्द स्वर आ रहा है, किन्तु चाटुकारों, स्तुति-गायकों से घिरे धनाढ्य उच्च वर्ण के लोगों के कानों तक ये स्वर पहुँच नहीं पा रहे हैं। इसका परिणाम भोगना होगा। पैरों तले मर्दित निम्न जाति के लोगों में क्रांति की भावना सिर उठा रही है। कवि ने अपने इन आदर्शों को महत्व देकर 'दुरवस्था' तथा 'चण्डाल भिक्षुकी' काव्य लिखे। 'दुरवस्था' काव्य में मालाबार मुस्लिम आक्रोश से संभीता तथा अपने माता-पिता, घर-बार से वंचिता एक ब्राह्मण कन्या सावित्री चात्तन् नामक हरिजन की कुटिया में शरण लेती है। वह भविष्य में संभावित आक्षेपों से भयभीत हो अपने लिए शरण देने वाले चात्तन् के साथ विवाह-सूत्र में आबद्ध हो सुखी जीवन बिताने का संकल्प लेती है। 'चण्डाल भिक्षुकी' में भी वर्ण-व्यवस्था का उन्मूलन कर डालने का प्रयास है। कड़ी धूप में पैदल चलते शुष्क कंठ बौद्ध भिक्षु आनंद एक चण्डाल बालिका के हाथ से जल पीकर अपनी प्यास बुझाते हैं। जब आनंद जल माँगते हैं तब चण्डाल बालिका भौंचक्का रह जाती है और पूछ बैठती हैं—"यह क्या अनर्थ है! क्या आप जाति-प्रथा भूल गये? क्या आर्य लोग नीच नारी के हाथ का जल पी सकेंगे? पानी देने पर क्या मुझे पाप नहीं लगेगा?" तब आनंद के मुँह से जाति-प्रथा पर प्रहार करते हुए कवि का कथन है—"हे भगिनी, मैं जाति नहीं पूछ रहा हूँ। शुष्क कंठ से पीड़ित मैं प्यास बुझाने केलिए मात्र जल माँग रहा हूँ।" आनंद से प्रभावित वह बालिका जब बौद्ध संघाराम में पहुँचती है तब भगवान बुद्ध उसे वहीं जाति-प्रथा पर ठोकर मारते हुए अभयदान देते हैं। इस प्रकार कुमारन् आशान् ने जाति-प्रथा की सारहीनता एवं निरर्थकता पर पर्याप्त प्रकाश डाला है। 'वीण पूवु' (पतित पुष्प) भी प्रतीकात्मक शैली में निम्न जाति के लोगों के प्रति उपेक्षा, उनकी दीनता, असहाय दशा का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करता है।

एक समाज-सुधारक के अतिरिक्त एक तत्व-चिन्तक के रूप में कुमारन् आशान् का प्रोज्वल व्यक्तित्व है। उन्होंने दार्शनिक विचारों पर गंभीर मनन-चिन्तन किया है, जिसकी अभिव्यक्ति काव्य में हुई है। 'ईषव' जाति की अपनी परंपरा के अनुकूल आशान् शिव को अपना उपास्य मानते हैं और उनकी स्तुति में कई स्तोत्र भी रच डाले हैं। किन्तु एक बात स्पष्ट है कि उनके शिव आत्मानुभूति एवं आत्मशान्ति के आलंबन स्वरूप सर्वाधारभूत सच्चिदानंद भगवान हैं, जिनका विलास प्रकृति के समस्त पदार्थों में दर्शित होता है—

चत्तमेरिय पूविलुं शवळाभमां शलभत्तिलुम्
सन्ततं करतारियेन्नोरु चित्र चातुरिकाट्टियुम्
हन्त! चारु कटाक्ष मालकळर्क रश्मियिल् नीट्टियुम्

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चिन्तयां मणि मंदिरत्तिल् [illegible]

(मनोहर पुष्पों में तथा रंग-बिरंगे शलभों में [illegible] सूर्य-रश्मियों के द्वारा अपनी कटाक्ष-माला [illegible] विराजमान भगवान की निरन्तर स्तुति करें ।)

शिव के पृथक् अस्तित्व का [illegible] हैं। उनका कथन है कि किसी ने अब तक [illegible] न उनके रूप-रंग हैं, न उनके नाक-कान हैं [illegible] विचारों में अद्वैतवादियों के निकट हैं। [illegible] व्याख्या है', आशान् केलिए सार्थक है। उन्होंने [illegible] विचार किया, वही उनकी कविता में [illegible] एक रागी-विरागी, दुखवादी-आशावादी का [illegible] का जीवन ही इस संघर्ष से मुक्त नहीं था। [illegible] वर्ष की आयु में विवाह करके सब को आश्चर्य में [illegible] जीवन अस्थायी, क्षणिक, स्वप्नतुल्य है [illegible] सद्गुणी लोग लंबे समय तक नहीं रह पाते। [illegible] है। यहाँ तक कि उन्नत पर्वत और [illegible] जाएँगे। यहाँ देही अपना शरीर त्याग कर [illegible] धारण करता है। आशान् ने श्मशान-भूमि को [illegible] वहीं पहुँचकर जीवन संसार का परिचय [illegible]

[illegible]

(हाय, श्मशान का बड़प्पन, प्रभुत्व, [illegible] कांति किसी की ओर यह [illegible] गर्व समाप्त होता है, [illegible] विद्यालय है।)

नियति पर आशान् की [illegible] की प्रभुता का [illegible] परिणाम [illegible] पलड़ा कब ऊपर उठेगा, [illegible] यह नियति किसी से कुछ [illegible]

"[illegible]

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

(विचार-पूर्वक देखा जाए तो नियति का किसी जीव से स्थायी विद्वेष नहीं है । जब वह एक हाथ से प्रहार कर बैठती है तब भी दूसरा हाथ जीव के आश्लेष में लगा रहता है ।)

कवि सांसारिक जीवन को नियति के अधीन मानता है, तो भी वह जीवन से पलायन करने वाला निराशावादी नहीं है । दुखवाद में भी उसका आशावादी स्वर स्पष्ट मुखरित है । 'वीण-पूवु' में मुर्झाकर तथा पौधे से पृथक् हो भूमि पर पड़े पुष्प को देख उसका आश्वासन है कि यह पुष्प सांसारिक बंधनों से परे स्वर्गलोक में पहुँचकर परमपद को प्राप्त कर पाएगा । अतः इस संसार के परे एक शाश्वत शांतिधाम की कवि को आस्था है ।

आशान् प्रकृति के उन्मुक्त गायक हैं । उनके काव्य में प्राकृतिक सौन्दर्य का सजीव वर्णन है । उनकी कविता में हिमवान की सात्विक शीतलता का वर्णन है तो विंध्याचल के उत्तुंग शिखरों का भी वर्णन है । दक्षिणापथ की प्राकृतिक छवि पर विमुग्ध उनकी कवि-दृष्टि राजस्थान की मरुभूमि से दूर स्थित दक्षिणापथ के नभचुंबी मेघाम्बरधारी विंध्याचल, हरिताभ संकुल सानुप्रदेश तथा पार्श्व से सस्वर बहती सागरोन्मुखी रेवा नदी आदि का अवलोकन करती है । इस प्रसंग में कवि की मानवीकरण की प्रवृत्ति विशेष उल्लेखनीय है । भूमि पर पड़े पुष्प की कारुणिक दशा पर पवन दीर्घश्वास भरता है, पत्थर का हृदय द्रवीभूत होता है, दिशाएँ म्लानमुखी होती हैं और सूर्य विवर्णमुख हो दुख का अनुभव करता है ।

आशान्-काव्य का अभिव्यंजनापक्ष भी अत्यन्त सक्षम एवं समर्थ है । भाषा पर उनका विशेष अधिकार है । वे शब्द-शक्तियों से पूर्णतः परिचित हैं । प्रतीक एवं लाक्षणिक शैली ने अभिव्यंजना में चारुता एवं लाघवता पैदा कर दी है । आशान् के पास प्रतीकों का विशाल कोष है । उनके ये प्रतीक प्रकृति के प्रांगण से गृहीत तथा भावों के व्यक्तीकरण में पर्याप्त समर्थ हैं । 'वीण पूवु' (पतित पुष्प) काव्य में पुष्प समाज में उपेक्षित, लांछित पिछड़ी जाति का प्रतीक है । 'सिंह प्रसवं' कविता में पिंजरे में बद्ध सिंह अंग्रेज़ों की पराधीनता में पड़ा भारत है । प्रतीकों के समान लाक्षणिक शैली का सहारा लेकर भी आशान् अपने भावों को सजीव एवं मार्मिक ढंग से प्रस्तुत करते हैं । उदाहरण स्वरूप आशान् का कथन है कि अपने प्रियजनों के रूप-सौन्दर्य का वर्णन करने में नारियों के नेत्र अतीव सूक्ष्म एवं समर्थ हैं । आशान् की भाषा बिम्बधर्मी विशेषणों, अलंकारों से परिपूर्ण है । उनका प्रत्येक शब्द एक पूरा चित्र उतार देता है । 'करुणा' काव्य में आशन् की मूर्तीकरण कला द्रष्टव्य है, जहाँ वासवदत्ता के बाह्य सौन्दर्य का चित्र उतारते हुए वे लिखते हैं—

कंजबाणन् तन्टे पट्टं केट्टिय राज्ञिपोलोरु
मंजुलांगीयिरिक्कुन्नु मति मोहिनि ।

(कंजबाण—कामदेव से अपनायी गयी रानी के समान मतिमोहिनी एक मंजुलांगी बैठी है ।)

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आशान् की भाषा प्रसादात्मक, सरस एवं प्रभावशाली है। उन्होंने भाषा में प्रवाह, लय और तान पर विशेष ध्यान रखा है। उनके उपमा एवं अर्थान्तरन्यास अलंकार भावाभिव्यंजना में सशक्त हैं। लोभवश चंचल हो उठते मन केलिए प्रयुक्त लोटते पारद बिन्दु तथा भुन उठते दाने के अप्रस्तुत कितने मार्मिक एवं बिम्बात्मक हैं। एक अन्य स्थान पर आशान् का कथन है कि जैसे तांबा रासायनिक प्रक्रिया से सोना बन जाता है वैसे ही नीच जन्मा अक्षर-योग से महिमान्वित हो उठता है।

संक्षेप में महाकवि कुमारन् आशान् मलयालम काव्य-साहित्य में एक नयी काव्य-सरणी के पुरस्कर्ता कवि हैं। वे अपने विचारों में स्वच्छन्दतावादी, क्रान्तिकारी, सुधारवादी तथा जनवादी कवि हैं। केरलीय समाज में प्रचलित रूढ़िगत जाति-प्रथा के विरोध में सशक्त आवाज उठाकर तथा सामाजिक क्रान्ति का सन्देश देकर सच्चे अर्थ में वे जनवादी कवि सिद्ध होते हैं। संभवतः आशान् के प्रयत्नों का सुपरिणाम है कि भारत भर में केरल प्रान्त ने सब से पहले हरिजनों का मंदिर में प्रवेश वैध घोषित किया। केरलीय जनता के मानस में कुमारन् आशान् शाश्वत प्रतिष्ठा प्राप्त करते रहेंगे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

महाकवि वल्लत्तोल की साहित्य-साधना

उन्नीसवीं शताब्दी के आगमन के साथ ही कैरली साहित्य में एक युगान्तर-कारी परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगा। प्राचीन रूढ़िवादी काव्य-परंपरा से हटकर कैरली काव्य-कामिनी स्वच्छन्द वातावरण में नवोन्मेष के साथ विहार करने लगी। कैरली साहित्य के इस पुनरुत्थान केलिए कारणभूत तीन प्रसिद्ध कवि हुए—उज्ज्वल शब्दाढ्य उल्लूर एस. परमेश्वर अय्यर, आशय-गंभीर कुमारन् आशान् और शब्द सौन्दर्य के पारखी महाकवि वल्लत्तोल नारायण मेनन। इस बृहत्त्रयी ने मलयालम काव्यधारा के उत्कर्ष एवं रूप-सज्जा केलिए वही कार्य किया जो कि हिन्दी की आधुनिक काव्यधारा को अपनी चरमसीमा तक पहुँचाने केलिए त्रिमूर्त्तियों के नाम से प्रसिद्ध प्रसाद, पंत तथा निराला ने किया था।

मलयालम के बृहत्त्रयी में सर्वाधिक प्रसिद्ध कैरली-पुत्र महाकवि वल्लत्तोल की साहित्य-साधना एक अर्ध शताब्दी तक जारी रही। इन प्रतिभासंपन्न एवं निष्ठावान महाकवि ने माता कैरली की अनवद्य काव्य-तल्लजों से पूजा-अर्चना की कि आज मलयालम के प्रसिद्ध कवियों के नाम लेते ही सर्वप्रथम महाकवि वल्लत्तोल का नाम प्रत्येक केरलीय के जिह्वाग्र पर नाचने लगता है। महाकवि वल्लत्तोल मलयालम के राष्ट्रीय कवि थे और मलयालम साहित्य में उनका वही स्थान है जो हिन्दी साहित्य में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त या तमिल वाङ्मय में महाकवि सुब्रह्मण्य भारती का है।

महाकवि वल्लत्तोल प्रकृत्या प्रगतिशील थे और उन्होंने रूढ़ियों, परंपराओं का उल्लंघन करते हुए तक नये दृष्टिकोण से प्रेरित हो समयानुरूप साहित्य-साधना की और इस साहित्य-साधना के फलस्वरूप मलयालम वाङ्मय को असंख्य खण्डकाव्य, महाकाव्य तथा मुक्तक गीतों की प्राप्ति हुई। मलयालम खण्ड-काव्य शाखा को महाकवि की देन अनुपम है। ऋतु विलासम्, बधिर विलापम्, बंधनस्थनाय अनिरुद्धन्, ओरु कत्तु या रुक्मि का पश्चात्ताप, शिष्यनुं मकनुं, मग्दलन मरियम्, कोच्चुसीता, गणपति, दंडकारण्यम्, अच्छनुं मकळुं आदि उनके प्रसिद्ध खण्ड-काव्य हैं तो चित्रयोगम् उनका प्रसिद्ध महाकाव्य है। उनकी स्वतंत्र कविताएँ साहित्यमंजरी सात भागों में संगृहीत हैं।

महाकवि कालिदास के ऋतुसंहार के अनुकरण पर लिखे गये ऋतुविलासम् में छहों ऋतुओं की सरस एवं मनोमुग्धकारी छटा दर्शनीय है। यह वर्णनात्मक काव्य की कोटि में रखा जा सकता है। उनका 'बधिर विलापम्' खण्डकाव्य रोमान्टिक काव्य-परंपरा में एक नया प्रयोग है और इस स्वानुभूतिपूर्ण एवं आत्मकथात्मक काव्य में कवि ने अपने बहरेपन का कारुणिक चित्रण प्रस्तुत किया है। काव्य का

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अन्त भक्ति रस से ओत-प्रोत है क्योंकि बहरेपन से पीड़ित कवि भगवद्भक्ति को इस दुख-सागर से मुक्ति प्राप्त करने का बेड़ा स्वीकार कर लेता है। प्रेम-दीवानी मीरा की यह उक्ति 'सतकी नाव, केवटिया सतगुरु भव सागर तर आयो' इस प्रसंग में स्मरण आती है। पुष्पिताग्रा छन्द में लिखे गये 63 श्लोकों में करुण एवं भक्ति रस की भावधाराओं के साथ कवि की संस्कृत बहुला माधुर्य गुण युक्त भाषा-शैली भी द्रष्टव्य है।

संस्कृत साहित्य के मर्मज्ञविद्वान तथा गंभीर अध्येता महाकवि ने 'उषानिरुद्धम्' की एक मार्मिक घटना को आधार बनाकर 'बंधनस्थनाय अनिरुद्धन्' की रचना की जिसमें उषा एवं अनिरुद्ध के प्रेम-प्रसंग, उषा के निमंत्रण पर अनिरुद्ध के उषा के महल में पहुँचने तथा वहाँ उसके बंदी किये जाने, उषा के अनिरुद्ध के दर्शनार्थ कारावास में पहुँच जाने की घटनाओं का बड़ा ही नाटकीय एवं प्रभावशाली वर्णन हुआ है। पौराणिक पात्र उषा को आधार बनाकर कवि ने जहाँ अन्तर्द्वन्द्व एवं आत्म-संघर्ष का सजीव चित्र अंकित किया है, वहाँ केरल की नारियों को नवजागरण का संदेश सुनाकर रूढ़ियों-परंपराओं को तोड़ स्वतंत्रता की शंख-ध्वनि सुनने और उसके अनुरूप स्वातंत्र्यलिप्सा से प्रेरित हो कर्म-क्षेत्र में उतर पड़ने का आह्वान भी दिया है। वास्तव में यह काव्य ज्ञान, शिक्षा तथा प्रायोगिक विलक्षणता का मंथन कर निकाला गया नवनीत है।

पौराणिक आख्यान पर आधारित 'ओरुकत्तु' में श्रीकृष्ण के साथ रुक्मिणी के स्वयंवर में बाधा उपस्थित कर खड़े रुक्मी का पश्चात्तापपूर्ण पत्र अपनी बहन के नाम है। स्वार्थ-प्रेरित ही सही रुक्मी की यह आत्मग्लानि भावुक हृदयों को भावावेश में डालने में अत्यन्त सक्षम है।

वल्लत्तोल के खण्ड-काव्यों में 'शिष्यनुं मकनुं' विशिष्ट स्थान का अधिकारी है। पौराणिक कथावस्तु पर आधारित इस रचना में कैलासपति शिवजी के मानसिक द्वन्द्व का ऐसा कलात्मक चित्रण है कि पूरा बिम्ब उतर आता है। परशुराम एक दिन अपने गुरु शिव के दर्शनार्थ कैलास में आते हैं। द्वार पर खड़े कार्तिकेय एवं गणेश तथा द्वारपालों को प्रणाम कर परशुराम ज्यों ही आगे बढ़ने का उपक्रम लेते हैं त्यों ही गणेशजी यह कहकर उन्हें रोकने की चेष्टा करते हैं कि शिवजी आराम कर रहे हैं और इसलिए थोड़ी देर के उपरांत ही दर्शन कर पाएँगे। इस पर क्रोधातुर परशुराम तथा गणपति में वाग्युद्ध चलता है, जो आगे चलकर मार-पीट में परिणत हो जाता है। परशुराम अपने हाथ के परशु से गणपति का एक दांत तोड़ डालते हैं। रक्त से लथपथ अपने पुत्र को गोदी में उठाये पार्वती शिवजी को डांट-फटकार सुनाती हैं तो शिवजी दुविधा में पड़ते हैं कि एक ओर प्रिय शिष्य परशुराम और दूसरी ओर वात्सल्यपुत्र गणेश। तभी राधा और कृष्ण वहाँ पहुँचते हैं और राधा अपना हाथ फेर कर गणेश की चोट सुला देती है और पार्वती को शान्त करते हुए

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

समझाती है कि जब से परशुराम शिव-शिष्य हुए तब से वे भी पार्वती के तृतीय पुत्र हो गये हैं और पुत्रों के पारस्परिक कलह में माता को ऐसा क्रुद्ध नहीं होना चाहिए। शिवजी परशुराम को गले से लगा लेते हैं तो अपने चरणों पड़े परशुराम को पार्वती अपने अंक में भर लेती हैं। पौराणिक कथाबीज को अपनी सृजनात्मक प्रतिभा के सहारे महाकवि ने ऐसा मार्मिक, सरस एवं हृदय-संवेद्य रूप दिया कि पाठक कवि की रचना-चातुरी, मानव-मनोविज्ञान की सूक्ष्म पकड़ आदि पर मुग्ध हो जाते हैं।

'मग्दलन मरियम्' बाइबिल की एक कथा पर आधारित है। 'पश्चात्ताप द्वारा मुक्ति' का ईसा का जो संदेश है, उसी को महत्व देते हुए कवि ने वेश्या मरियम् की ईसा द्वारा मुक्ति दिलाने की कथा को लेकर मंजरी नामक मलयालम के प्रमुख छन्द में काव्य-निबद्ध किया है कि इसमें वल्लत्तोल-काव्यधारा की नैसर्गिक चारुता एवं रमणीयता तथा पावनता का आभास मिलता है। प्रकृति के मनोरम क्रोड में काव्य का इतिवृत्त आगे बढ़ता है और रोमान्टिक प्रकृति-चित्रण का भव्य रूप इस काव्य में वर्तमान है।

तमिलनाडु में घटित एक देवदासी की दुरन्त कथा का कारुणिक वर्णन पत्रों में पढ़कर भाव-विक्षुब्ध कवि ने 'कोच्चु सीता' काव्य लिखा। समाज में प्रचलित वेश्यावृत्ति का कुपरिणाम दिखाकर कवि ने इस सामाजिक कुरीति का पर्दाफाश किया है। चारित्र्य को अपना स्त्रीत्व समझने वाली चंपक-वल्ली नामक देवदासी कुल में जन्मी युवती आदर्श की बलिवेदी पर आत्माहुति देती है। बाल्यकाल से ही उसकी अभिलाषा थी कि वह सीता के समान पवित्र आचरण करेगी। लेकिन समाज के कलुषित वातावरण में वह अपना संकल्प पूर्ण होता नहीं देखती तो जीवन-लीला समाप्त करना अपना धर्म मानती है। वल्लत्तोल का समाजोद्धारक रूप इस काव्य में और इसके पहले मग्दलन मरियम् में प्रकट हुआ। दोनों इतिवृत्तों का आधार वेश्या-वृत्ति है। अन्तर इतना है कि मग्दलन मरियम् जन्मजात वेश्या नहीं, श्रीमोन के वैभव एवं पाप-वासना की शिकार बनकर वह कुपथगामी बन जाती है। लेकिन चंपक-वल्ली कुल से वेश्या है, पर स्वयं इस घृणित जीवन से मुक्त होने के प्रयत्न में जीवन का अन्त कर डालती है। मरियम् को उद्धारक रूप में ईसा का वरदहस्त प्राप्त हुआ, पर चंपकवल्ली को स्वयं अपना मार्ग प्रशस्त करना पड़ा।

महाशिवपुराण में वर्णित पार्वती के द्वारा वीर कुमार को अपने वीर्य से उत्पन्न करने, रुद्र रूपधारी शिव के द्वारा उसका वध करने तथा क्रोधातुर पार्वती के दिव्य शरीर से 'भानुश्री शक्ति-सहस्रक' के निकलकर संहार नर्तन करने पर देवी को शान्त करने केलिए एकदन्त हाथी का मस्तक लाकर वीरकुमार की धड़ पर रखकर गणपति को उत्पन्न करने की कथा पर आधारित वल्लत्तोल का 'गणपति' खण्डकाव्य आद्यान्त रौद्ररस-प्रधान है।

'दण्डकारण्यम्' भी पौराणिक आख्यान की पृष्ठभूमि में रचा गया है। प्रसिद्ध

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सूर्यवंशी राजा दण्ड वासना के आवेश में आकर अपनी गुरु-पुत्री अरजा पर बलात्कार कर शापग्रस्त हो अपना ही नाश कर लेता है। इसी रामायणीय कथा पर 'दण्ड-कारण्यणम्' की सृष्टि हुई है। पुष्पिताग्रा छंद में रचित पचास पद्यों का यह छोटा-सा काव्य नैतिक मूल्यों को महत्व देकर लिखा गया है।

वल्लत्तोल की खण्डकाव्य-परंपरा में प्रथम स्थानीय रचना है 'अच्छनुं मकलुम्' जिसमें कवि ने अपनी मौलिक उद्भावना द्वारा विश्वामित्र तथा पुत्री शकुन्तला के अप्रत्याशित मिलन का नाटकीय चित्र अंकित किया है। यह वर्णन न कहीं महाभारत में उपलब्ध है, न कालिदास के नाटक में ही। यह अकेले महाकवि वल्लत्तोल की उर्वर कल्पना की अनुपम देन है। पात्रों के मानसिक भावों का सटीक मनोवैज्ञानिक चित्रण एवं विश्लेषण वल्लत्तोल की प्रतिभा का द्योतक है।

खण्डकाव्यों का सर्वेक्षण करने के उपरांत वल्लत्तोल के महाकाव्य 'चित्रयोगम्' पर भी एक सरसरी दृष्टि डालना अपेक्षित होगा। 'कथा सरित सागर' में वर्णित मन्दारवती-सुन्दरसेन की कथा के आधार पर इस महाकाव्य की रचना हुई है, हाँ कवि ने नाम बदल दिया है। निषधराज्य के राजकुमार चन्द्रसेन और राजकुमारी तारावली का पारस्परिक अनुराग और विविध विघ्न-बाधाओं के उपरांत उनका विवाह ही इस काव्य का इतिवृत्त है। महाकाव्यों के परंपरागत लक्षणों का पूर्ण अनुसरण करते हुए लिखा गया यह काव्य मलयालम के सर्वश्रेष्ठ पंचमहाकाव्यों में अपना विशिष्ट स्थान रखता है।

महाकवि की उर्वर काव्य प्रतिभा, कल्पना की ऊँची उड़ान, भारतीय संस्कृति के प्रति अगाध आस्था एवं प्रेम, भारतीय समाज की कुरीतियों का उच्चाटन कर एवं नव्य भारत के उदय की आकांक्षा, सशक्त एवं सक्षम काव्य-चातुरी सबका दर्शन करना है तो उनकी लघु कविताओं का अध्ययन अपेक्षित है। महाकवि ने मुख्यतया रामायण-महाभारत कालीन कथावस्तुओं को अपनी रचनाओं का इतिवृत्त बनाया है। यहाँ कवि का परंपरावादी रूप नहीं, प्रत्युत भारत के विगत वैभव एवं संस्कृति के प्रति अटूट श्रद्धा-भावना ही व्यक्त होती है। प्राचीन कथाबीजों को लेकर उनमें अपनी कारयित्री प्रतिभा का रक्त-मज्जा-मांस चढ़ाकर कवि ने जो नव्य काव्य-प्रासादों की सृष्टि की, उनमें प्राचीनता के प्रति गर्व है तो एक मोहक भविष्य का संकल्प भी निहित है। वल्लत्तोल का युग भारत केलिए नवजागरण का युग था, स्वतंत्रता आन्दोलन ज़ोरों पर चल रहा था तो ब्रिटिश दमन-नीति भी अपनी चरमसीमा तक पहुँची हुई थी। एक नव्य राष्ट्र के निर्माण के स्वप्नदर्शी कवि केलिए यह आवश्यक था कि जनता में नवोन्मेष एवं नव-जागृति की शंखध्वनि मुखरित करने का दायित्व स्वयं उठा ले और इसीमें महाकवि वल्लत्तोल की राष्ट्रीयता एवं देश-प्रेम की भावना का दर्शन होता है। यहाँ हिन्दी के महाकवि मैथिलीशरण गुप्त तथा मलयालम कवि वल्लत्तोल में अद्भुत साम्य दृष्टिगोचर होता है। दोनों के इतिवृत्त रामायण-महाभारत

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

के हैं और दोनों ने इन इतिवृत्तों को सामयिक युगानुरूप परिधान प्रदान किया। दोनों के स्वर राष्ट्रवादी एवं राष्ट्रीयतावादी थे और दोनों एक नव्य भारत के शिलान्यास केलिए आकुल-व्याकुल थे। समन्वयवादी वल्लत्तोल तथा मैथिलीशरण जाति-विहीन नवराष्ट्र के पुरोधा थे। मैथिलीशरण ने राम-कृष्ण को अपने चिराराध्य बनाया तो भी हिन्दू-मुस्लिम एकता के स्वप्न-द्रष्टा कवि ने साकेत लिखने के साथ ही 'काबा और कर्बला' की भी रचना की। वल्लत्तोल ने भी बाइबिल पर आधारित मग्दलन मरियम् की रचना करके हिन्दू-ईसाई एकत्व भावना की सुदृढ़भित्ति की नींव डाली। दोनों ने राम, कृष्ण जैसे हिन्दू देवताओं के साथ ईसा, मुहम्मद के व्यक्तित्व का भी अनुस्मरण किया। दोनों समाजोद्धारक थे, दोनों ने स्वतंत्रता का काहल मुखरित किया, जातिप्रथा, वेश्यावृत्ति जैसे सामाजिक अनाचारों का पर्दाफाश करके एक जाति-धर्म रहित अखण्ड राष्ट्रीयता की कल्पना की। यही नहीं, दोनों कवियों ने समय के परिवर्तन के अनुरूप अपनी कविता को दिशा दी। अंतिम दिनों में दोनों कवियों ने लघु कविताओं की रचना में अपना आकर्षण दिखाया।

मैथिलीशरण ने 'किसान' खण्डकाव्य में किसानों की दीनहीन हालत पर आठ-आठ आँसू बहाये तो हमारे कवि वल्लत्तोल भी कुछ अर्थों में श्रमिकों के कवि थे—

धनाढ्यरे, धर्मवषिक्कु निङ्ङळ्
काणिक्कु वेक्कुं नरुमुत्तिनेक्काळ्
कूलिप्पणिक्कारिवर् तन् वियर्प्पु
तुळ्ळियाणीश्वरनेरे इष्टं।

(हे धनाढ्यो, मोती की तुम्हारी पूजा-अर्चना से बढ़कर भगवान को श्रमिकों के श्रम-जल के कण अधिक प्रिय हैं।)

वल्लत्तोल राष्ट्रीय भावना के साकार स्वरूप थे। अखण्ड भारत एवं परंपरागत राष्ट्रीय भावना से प्रेरित उनकी कविताएँ भारतीय स्वतत्रता-संग्राम के दिनों में समस्त केरलीय जनता में गुंजित हो उठी थी और वे सच्चे अर्थ में जनता के कवि बन गये थे। केरल की सामान्य जनता की आशा-आकांक्षा को वाणी देकर वे सच्चे अर्थ में हमारे राष्ट्रीय कवि प्रमाणित होते हैं। उनका काव्यादर्श उन्हीं के शब्दों में सुनिये—

मानं चेर्न्न भटन्टे मिन्नल् चितरुं कैवाळिळक्कत्तिलुं
मानं चेन्मिषि तन् मनोरमणत्तिल् चायुन्न कण्कोणिलुम्
सानंदं कळियाटिटुन्न शिशुविन् तूवेर्प्पणि पूंकविळिन्
स्थलत्तुं निषलिच्चु काण्मू कविते, निन् मंजु रूपत्ते ञान्।

(हे कविते, स्वाभिमानी सैनिकों की कौंधती तलवारों की चमक में, मानिनी के विशाल नेत्रों के कोरों में, सानंद लीला निरत शिशु के कोमल कपोलों की कांति में तुम्हारे मंजुल स्वरूप का मैं अवलोकन करता हूँ।)

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहने का तात्पर्य यह है कि वल्लत्तोल ने वात्सल्य, श्रृंगार एवं वीररस की कविताएँ लिखी हैं। वे जहाँ मातृ-सुलभ हृदय की वात्सल्य लहरियों के अन्तर्द्रष्टा थे, वहीं प्रेमी-प्रेमिकाओं के अनश्वर प्रेमसंगीत के भी पारखी थे। भारत राष्ट्र की स्वतंत्रता केलिए कटिबद्ध हो स्वतंत्रता-युद्ध में अपने भुजबल का परिचय देने वाले भारतीय सैनिकों की वीरता, साहस एवं स्वाभिमान भी उनकी कविता में स्थान पा सका है।

भारतीय संस्कृति के प्रवाचक एवं गायक महाकवि ने रामायण-महाभारत कालीन कथावस्तुओं को कविता का आधार बनाने के साथ ही साथ ऋग्वेद की महिमा से प्रेरित हो एक विस्तृत भूमिका सहित उसका मलयालम अनुवाद भी प्रस्तुत कर दिया। भारत राष्ट्र, भारतीय संस्कृति, भारतीय पुण्यतीर्थ, भारतीय नदियाँ ही क्यों, भारत की पवित्र रेणु तक में उनकी चिर-आस्था एवं प्रगाढ़ प्रेम है। कवि की सूक्ष्म दिव्य-दृष्टि भारतवर्ष के प्राचीन मनीषियों की गौरव गाथा पर केन्द्रित होती है और उनको संसार की आधार-शिला के अन्वेषक घोषित करते हैं तो कभी पाठकों को त्रेतायुग की श्रीमिथिला की तीर्थयात्रा भी करा लेते हैं। 'भारतवर्षत्तिले पूर्वरामृषीन्द्रन्मार् पारिनुळ्ळटिक्कल्लु पार्त्तु कण्टरिञ्ञवर्' तथा 'त्रेतायुगत्तिले श्री मिथिलापुरम् भ्राताक्कन्मारिता मुन्निल् काण्मु' जैसी पंक्तियों का स्वर-ताल-लय ही कवि की गहन अनुभूति एवं श्रद्धा का पावन सन्देश प्रसारित करता है। 'एन्टे-गुरुनाथन्' कविता उनकी राष्ट्रीय भावना की परिचायक है। वे अपने गुरुवर्य महात्मा गांधी में बुद्धदेव के अहिंसावाद, शंकराचार्य की कर्म-निष्ठा, रंतिदेव की कारुणिक दया भावना, ईसा मसीह के त्याग तथा भगवान कृष्ण के ज्ञानोपदेश की समन्वित ज्योति का दर्शन करते हैं और आगे बड़ी दृढ़ता एवं आस्था के स्वर में यह उद्घोषित करते हैं कि गंगा की पावन जलधारा से अभिषिक्त तथा गीता-माता की जननी भारत भूमि में ही ऐसे मंगलमय एवं कल्याणप्रद कल्पपादप का अवतार संभव है—

> गंगयारोषुकुन्न नाट्टिले शरिक्कित्र
> मंगलं काय्क्कुं कल्पपादपमुण्डाय्वरु।

मिथिला राजधानी के राजोपवन में विहार निरता उद्यान देवी जैसी विदेहजा, साधु शील एवं कर्ममय सिद्धान्त के कर्मठ संन्यासी विवेकानंद, कर्मभूमि भारतवर्ष के शक्ति संपन्न नादान शिशुओं के चरणारविन्द, ब्रह्माण्ड हर्म्य के सृष्टिकर्ता परमद्वैत ब्रह्म, सावित्री की सात्विकता एवं दृढ़चित्तता, किसी निगूढ़ाश्रम में तपस्यालीन दीन-स्नेही शिबि तथा त्यागशीलता की प्रतिमूर्ति दधीचि, चारित्र्य को अमूल्य धरोहर समझने वाली सती साध्वी भारतीय स्त्रियों की भाव-शुद्धि—ये सब हमारे कवि का ध्यान आकृष्ट करते हैं और सब की महिमा से ओत-प्रोत आर्ष भूमि भारत के प्रति वे श्रद्धावनत हैं।

केरल में जन्मे तथा केरल की श्री-सुषमा से मंडित उनका हृदय हरीतिमा की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चादर ओढे, सह्याद्रि का उपधान तथा सागर का पादोपधान बनाये लेटी केरल माता तथा पश्चिमांबर पर लगाये उसके सुषमामय एवं वसन्त-श्री से लालित उद्यानों को देखकर भक्ति-विह्वलता की चरमसीमा तक पहुँच जाता है। उनका 'प्रभात गीत' प्रकृति-सुषमा का परिचायक है। सागर में घोर गर्जना हुई मानो वह घोषणा कर रहा है कि रात का अंतिम पहर आ गया है और निशादेवी चौथे पहर की सीढ़ियों पर अपना चरण धर रही हैं। मुर्गों ने यह देखने केलिए कि रात कितनी बीत गयी, अपना सिर ऊपर उठाया और अंतिम पहर को उपस्थित देख अपने बाँग बजाने लगे। उषा सुन्दरी पक्षियों के कलरव रूपी कंकण-ध्वनि मुखरित करती हुई तथा कर-कमल में शुक्र रूपी दीपक को उठाये अम्बर में मूर्त्तिमती हुई। उसने बासी तारिकाओं रूपी पुष्पों तथा चन्द्रमा की स्वच्छन्द श्वेत चाँदनी की कस्तूरी को हटाकर सब कहीं नये ढंग से पूजा-अर्चना करने केलिए तुषारकणों को छिटका दिया तथा पूर्व दिशा में कुंकुम-लेपन भी किया। उषा रूपी नारी के निश्वास के रूप में सुगंधित स्निग्ध मंद मारुत बह चला। यह है महाकवि की अनुभूति-प्रवणता; उषा सुन्दरी का मानवीकरण कर प्रभातकालीन रूप-छटा एवं सुषमा-विलास का जो भव्य चित्रण कवि ने अंकित किया, अवश्य ही प्रकृति-क्रोड में पला निसर्गसिद्ध कोई कलाकार ही अपनी तूलिका से ऐसा चित्र अंकित कर सकता है।

वल्लत्तोल के हाथों मलयालम कविता-कामिनी ने अपनी अनुपम रूप-सज्जा एवं लावण्यमयी उभार प्राप्त किया। उन्होंने शब्दों का अन्त: सौन्दर्य तलाश लिया है और शब्दों का रमणीय चयन किया है कि प्रत्येक पंक्ति में और यहाँ तक कि प्रत्येक पद में लालित्य, मधुरता एवं प्रसाद गुण का अद्भुत सामंजस्य आ गया और तभी तो मलयालम में यह उक्ति चल पड़ी "वल्लत्तोल शब्द सुन्दरन्"। संभवत: अपने शब्द-प्रयोग में, शब्दों की अंतरात्मा की सही पहचान में वे हिन्दी के कवि गुप्तजी से कहीं आगे हैं; सुमित्रानंदन पंतजी की समता न भी कर सकें, उनके निकट पहुँच जाते हैं। उनकी भाषा संस्कृत शब्दों के माधुर्य से परिपूर्ण है तो समुचित अलंकार-प्रयोगों से उसमें चारुता आ गयी है। इस प्रकार वल्लत्तोल भाव एवं शिल्प पक्ष के धनी महाकवि हैं और केरल माता अपने इस कवीश्वर पर गर्व कर सकती है।

सारांश यह कि महाकवि वल्लत्तोल ने लगभग पचास वर्षों से अधिक केरल देश तथा कैरली भाषा की चिरस्थायी सेवा की है। प्रकृति-चित्रण तथा भारतीयानुराग में वे अनुपम हैं। उनकी कविता प्रसादपूर्ण, कोमल, सरस एवं मधुरिमामय है जिसमें भावों की सघनता है, कल्पना का वैचित्र्य है, संस्कृत शब्दों का सामंजस्यपूर्ण प्रयोग है, शांति और समता का सन्देश है और है मनुष्य के जीवन-स्तर को ऊपर उठाने का महान संकल्प भी। उनकी कविता केवल वर्तमान युग की न रहकर आने वाली पीढ़ियों का भी पथ प्रशस्त करती रहेगी। महाकवि वल्लत्तोल कवि के साथ ही साथ एक पहुँचे हुए कलाप्रेमी भी हैं। केरल की अति-प्रचलित दृश्यकला 'कथकळि'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

के प्रति उनकी आस्था का इससे पता चलेगा कि उनके प्रोत्साहन एवं मार्गदर्शन में 'कलामण्डलम्' ने अल्प-समय के भीतर समस्त भारत में अपना स्थान बना लिया और फलतः कथकळि को पुनर्जीवित करने की ओर जनता तथा सरकार का ध्यान केन्द्रित हुआ। आज यह कलारूप केरल में ही नहीं, भारत भर में विख्यात हो चुका है।

केरल में जन्मे इस कवि का दृष्टिकोण विश्वव्यापी रहा। वह सच्चे अर्थ में विश्व-मानवतावादी एवं विश्व-बंधुत्ववादी है। आर्षसंस्कृति से अनप्राणित इस कवि का विश्व-मानवतावादी स्वर युग-युगों तक बुलंद होता रहेगा—

ई नम्मळेल्लामोरु तम्पुरान्टे
कीषाळर्, आरार्किह तम्पुरानां ?

हम सब एक परमपिता के अधीन हैं और वे ही हमारे प्रभु हैं। यहाँ कौन किसका प्रभु है ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गान-गंधर्व चङ्ङंपुषा कृष्ण पिल्लै

केरल की डेढ़ करोड़ जनता आज भी एक महाकवि की मधुर स्मृति में आठ-आठ आँसू बहाती है और वह महाकवि है कैरली साहित्य के गान-गन्धर्व के उपनाम से प्रसिद्ध चङ्ङंपुषा कृष्ण पिल्ल एम. ए.। चङ्ङंपुषा कृष्ण पिल्लै का नश्वर भौतिक शरीर इस क्षणभंगुर संसार से बिदा ले चुका है तो भी उस गान-गन्धर्व ने वसन्त कोकिल बन जिस मधुर पिक-ध्वनि से साहित्य-विटपी को गुंजित एवं मुखरित किया उसकी प्रतिध्वनि जनमानस में शाश्वत प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुकी है। चंङम्पुषा का एक भावुक, प्रतिभासंपन्न, आदर्शवादी निर्भीक कवि-व्यक्तित्व था कि मलयालम भाषा एवं साहित्य को उनपर गर्व है।

चंङम्पुषा मलयालम में एक नवीन काव्य-सरणी के पुरोधा कवि थे जिसे 'इडप्पल्लि प्रस्थानम्' की संज्ञा दी जाती है। अत: चंङम्पुषा को समझने केलिए यह आवश्यक है कि इस 'इडप्पल्लि प्रस्थानम्' की मुख्य काव्य-प्रवृत्तियों का परिचय प्राप्त किया जाए। भक्तोत्तंस महाकवि एषुत्तच्छन् के उपरांत मलयालम कविता ने कुमारन् आशान्, वल्लत्तोल नारायण मेनन तथा उल्लूर एस. परमेश्वर अय्यर जो बृहत्त्रयी के नाम से प्रसिद्ध हुए, के काव्यों में अपना उत्कर्ष प्राप्त किया था और इस बृहत्त्रयी के युग को कैरली का स्वर्णयुग समझा जाता है। इस बृहत्त्रयी की विशाल एवं गरिमामयी काव्य-प्रतिभा के सामने इतर कवि निष्प्रभ हो गये। इतना होते हुए भी इन कवियों में भी काव्य के अधुनातन स्वरूप की पूर्ण झाँकी नहीं मिली, वे भी कुछ अंशों में परंपरावादी थे। इन कवियों के परंपरावादी दृष्टिकोण तथा अन्य कवियों की असामर्थ्य एवं निष्प्रभता के कारण मलयालम साहित्य में एक प्रकार की कालिमा आच्छादित होती आ रही थी कि सहसा जब-तब दो मधुर स्वर इधर-उधर गुंजित हो उठे। इडप्पल्लि राघवन पिल्लै तथा कृष्णपिल्लै के साप्ताहिक, मासिक आदि में प्रकाशित लघु-गीतों के वे स्वर थे। ये दोनों नवयुवक थे, किन्तु अपूर्व प्रतिभावान थे कि आयु से बढ़कर उनकी आश्चर्यजनक प्रतिभा थी। इन कवियों ने मलयालम केलिए एक नवीन आत्माभिव्यक्ति प्रधान काव्य-सरणी का सूत्रपात किया। इसके पहले आत्माभिव्यक्ति-प्रधान कविताएँ नहीं लिखी गयी थीं, ऐसी बात नहीं है; भक्त कवि एषुत्तच्छन् तथा पून्तानम् ने अपने भक्त-हृदय की विह्वलता को इसी शैली में प्रस्फुटित किया था। लेकिन अन्य विषयों पर आधारित इस शैली की कविताएँ मलयालम में इसके पूर्व नहीं रची गयी थीं। इन दोनों कवियों से पूर्व बोधेश्वरन् ने इस शैली में कविताएँ लिखने का उपक्रम किया था अवश्य, किन्तु वे अधिक नहीं लिख सके। उनके उपरांत इस नूतन काव्य-शैली को नया रूप देकर उसको एक नयी सरणी में परिवर्तित करने का पूरा श्रेय

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इडप्पल्लि राघवन पिल्लै तथा चङ्ङम्पुषा कृष्ण पिल्लै को प्राप्त होता है। अंग्रेज़ी में पहले ही यह काव्य-शैली प्रचलित थी और बाइरन, कीटस तथा शैली जैसे कवि इसमें पूर्ण सफलता भी प्राप्त कर चुके थे। उनका अनुसरण करते हुए मलयालम में इस नयी शैली को प्रचलित करने की ओर अन्य किसी कवि का ध्यान नहीं गया था क्योंकि उसके लिए आवश्यक भाव एवं शिल्प की अन्य कवियों में कमी थी।

इडप्पल्लि राघवन पिल्लै तथा चङ्ङम्पुषा कृष्ण पिल्लै दोनों बाल्यसहचर, सहपाठी तथा मित्र थे। उनकी सामाजिक एवं वैयक्तिक परिस्थितियों में भी अद्भुत समानता थी। दोनों निर्धन परिवार के थे, निर्धनता भोग चुके थे। दोनों उदरपूर्त्ति के मार्ग के संधायक थे। अतः उनके भावों, विचारों में पर्याप्त समानता आ गयी तो उसमें कोई आश्चर्य नहीं है। आत्मशैली-प्रधान काव्यों में कवि के निजी जीवनानुभवों को स्थान मिल पाता है। दोनों प्रेम एवं सौन्दर्य के गायक थे। ग्राम्य साहचर्य में पले इन कवियों ने अपने प्रेम तथा सौन्दर्य, जीवनानुभव, आशा-निराशा तथा अन्य भावों से प्रेरित सुमधुर काव्यों को निसृत किया तो मलयालम में एक नवीन काव्यशैली का सूत्रपात एवं प्रवर्तन हुआ। अपने अनुभवों को प्रभावकारी शैली में प्रस्तुत करने केलिए आवश्यक अभिव्यंजना-पटुता भी इनमें थी। लेकिन इनके अनुभव तिक्त एवं कटु थे और इसलिए इनकी कविता में पराजय-बोध एवं पलायन के स्वर भी किसी को मिल पाये तो स्वाभाविक हैं। दोनों कवियों की कविता में नैराश्य एवं शोक की अंतर्धारा प्रवाहित है और यही इस नयी सरणी की चिरन्तनता का रहस्य है। इस कविता में हृदय का संगीत गूंज उठता है जो पाठकों के हृदय को कचोट डालने में अतीव समर्थ है।

उपर्युक्त भूमिका के साथ हम चंङम्पुषा कृष्णपिल्लै के जीवन तथा साहित्य का अनुशीलन करेंगे। श्री चंङ्ङम्पुषा कृष्णपिल्लै का जन्म सन् 1923 ई. में उत्तर तिरुवितांकूर (केरल राज्य) के इडप्पल्लि ग्राम में एक साधारण परिवार में हुआ था और चङ्ङम्पुषा उनके घर का नाम है। जब वे हाई स्कूल में पढ़ते आ रहे थे तभी उनके प्रिय सहचर एवं मित्र तथा इडप्पल्लि कृतियों के प्रवर्त्तक श्री राघवन पिल्लै की दुरन्त मृत्यु के कारण उनके सरल हृदय पर बड़ा आघात पहुँचा। इस आकस्मिक घटना से कवि के हृदयांतराल में जो भयंकर चोट लगी उसी ने 'रमणन्' नामक प्रसिद्ध काव्यकृति को जन्म दिया, जो कैरली का सर्वोत्तम विलाप-काव्य माना जाता है। तब से चङ्ङम्पुषा का जीवन दुख पूर्ण, उदास एवं नीरस-सा हो गया। तो भी उनका अध्ययन जारी रहा और उन्होंने केरल विश्वविद्यालय से बी. ए. आनर्स की उपाधि सम्मानपूर्वक पास की। पर विश्वविद्यालय की चहार दीवारी से बाहर आते ही इस युवक कवि को जीवन के याथार्थ्य से घोर संघर्ष करना पड़ा; आर्थिक कठिनाई, उदरपूर्त्ति की समस्या, बंधुजनों की मृत्यु आदि ने युवक हृदय को दुखसंतप्त बना दिया। आर्थिक कठिनाई के कारण जीवन एक जटिल समस्या-सा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कवि के सम्मुख उपस्थित हुआ और अन्य कोई चारा न पाकर मिलिटरी में नौकरी करने केलिए वे विवश हुए। पर कवि-हृदय वहाँ के शुष्क एवं नीरस वातावरण को कब तक सह सकता था ? अतः वहाँ की नौकरी छोड़ दी और मद्रास में आकर ला-कालेज में नाम लिखवा दिया, पर आर्थिक विषमता के कारण वे कानूनी शिक्षा पूरी नहीं कर सके।

इन दिनों काव्य-रचना किया करते थे और उनके प्रकाशन से कुछ पैसा भी प्राप्त करते आये। अपनी रचनाओं के कारण वे समस्त केरल में अल्प समय के भीतर इतने प्रख्यात हुए कि कम आयु में ही समस्त केरल साहित्य परिषद के अध्यक्ष के सम्मानित पद पर चुन लिये गये।

जीवन में उन्हें कई दुखद क्षणों का सामना करना पड़ा। ज्यों-ज्यों जीवन के क्षण कटते गये त्यों-त्यों शारीरिक एवं मानसिक रोग उन्हें सताते रहे। पहले वातरोग और बाद में क्षयरोग के वे शिकार बन गये। केरल की जनता ने इस युवक कवि की पर्याप्त सहायता की, किन्तु, क्रूर काल ने सारी जनता को आँसू से भीगे अंचल में छोड़कर इस कवि-सार्वभौम के नश्वर शरीर को उसके चौंतीस वर्ष की आयु में सन् 1957 में अपना शिकार बना लिया।

सन् 1934 से 1957 तक तेईस वर्ष का समय कृष्णपिल्लै के कवि-कर्म का प्रौढ एवं सक्रिय समय रहा और इस अवधि में कवि ने चालीस से अधिक काव्य-सुमनों से माता कैरली का स्तवन किया, जिनमें से बाष्पांजली (1934), आराधकन् (1934), हेमन्त चन्द्रिका (1934), मदिरोत्सवम् (1934), मणिवीणा (1934), रमणन् (1936), कलाकेळी (1936), मयूखमाला (1939), देवयानी (1939), कथारत्न मालिका (1939), रक्तपुष्पङ्ङळ् (1940), संकल्पकान्ति (1941), वत्सला (1943), तिलोत्तमा (1943), श्री तिलकम् (1943), अपराधिकळ् (1943), ओणप्पूवुकळ् (1944), मोहिनी (1944), देवता (1944), चूडामणि (1944), अमृतवीचि (1944), उद्यानलक्ष्मी (1944), स्पन्दिक्कुन्न अस्थिमाटम् (स्पंदित अस्थि पंजर 1944), साहित्य चिन्तकळ् (1944), विवाहालोचना (1944), सुधांगदा (1944), आकाश गंगा (1945) कळित्तोषी (1945), करटी (तेंदुआ-1945), अनश्वरगानम् (1945), दिव्यगीतम् (1945), देवगीता (1945), मानसेश्वरी (1945) आदि प्रसिद्ध हैं।

चंगम्पुषा कृष्णपिल्लै जीवनानुभवों, अनुभूतियों के कवि हैं। सुन्दर कविता अनुभूतियों की उपज है। चङ्ङम्पुषा की कविता उनके अपने अनुभवों, दुर्बलताओं से जन्मी है। इसलिए कविता अनुभूति से ओत-प्रोत, अनुभवों के सच्चे ढाँचे में ढलकर रूप-ग्रथित है। कवि स्वभाव से अनुभूति-प्रवण रहा, विकार तरलता उसकी अपनी विशेषता रही। इस कारण छोटी सी अनहोनी घटना भी उसमें एक आवेश उत्पन्न कर लेती है। कई प्रकार की सामाजिक विषमताओं, आर्थिक कठिनाइयों तथा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रिय मित्र की अकाल मृत्यु के फलस्वरूप कवि के भाव सान्द्र मन में यह धारणा घर कर लेती है कि जीवन अभिशाप है, जन्म का प्रतिकार है। कवि के अपने शब्दों में वह इसलिए जीवन बिताता है कि उसने जन्म तो लिया है, इसलिए उसका प्रायश्चित्त तो करना ही है। उसकी दृष्टि में महादेवी के समान ही जीवन अपार दुखों का कारखाना है और यहाँ सुख पाने की अभिलाषा कभी पूर्ण नहीं हो सकती। फिर भी कवि पलायनवादी नहीं है। मलयालम के कुछ आलोचकों ने उसके काव्य में परिव्याप्त दुख की कालिमा एवं दीनता के स्वर से प्रभावित होकर उसे पलायनवादी सिद्ध करने की चेष्टा की है। पर सच्ची बात यह है कि कवि जीवनलीला का अंत नहीं करना चाहता, क्योंकि ऐसा करना उसकी दृष्टि में भीरुता का लक्षण है। उसका सिद्धान्त है कि मनुष्य ने जन्म लिया, इसलिए जीवन के कटुअनुभवों को सहते, उससे जूझते हुए जीवन को निर्भीकता एवं आत्मविश्वास के साथ आगे ले चलना ही धर्म है।

कृष्णपिल्लै का कवि-हृदय साधारण जीवितानुभवों से संतुष्ट न होकर आसाधारण जीवितानुभवों का अन्वेषी रहा और उस रास्ते में उसे जो भी नये अनुभव प्राप्त हुए, उन सब को कविता में प्रकट किया गया है। उसकी काव्य-कृतियों से यह स्पष्ट विदित होता है कि उसके कल के अनुभव न आज के अनुभव हैं और न आगे आने वाली कल के ही अनुभव हैं। फलतः अपने अनुभवों के सच्चे कवि होने के कारण वह कई बार आदर्शों, विचारों के वैविध्य में खड़ा हो जाता है। युवाकाल की भौतिकवादी विचारधारा की रुख आत्मानुभूति की ओर बदल जाती है। कवि इस दुखद भौतिक जगत से ऊब जाता है तो उससे पृथक् होने का संकल्प लेता है। लेकिन फिर भी वह पलायनवादी नहीं, अंतिम समय में वातरोग से पीड़ित होकर भी वह कहता है—

"वेदन वेदन लहरिपिटिक्कुम्
वेदन ! आनतिल् मुषुकट्टे।"

वेदना कवि में निराशा उत्पन्न करती है अवश्य, किन्तु वह उसमें अधिकाधिक तल्लीन होने तथा उसी को अपना जीवनसंगी बनाने का आग्रह प्रकट करता है।

चंगम्पुषा की अधिकांश कविताओं में विकार मूर्च्छा और विद्रोह के स्वर देखे जा सकते हैं। बचपन में एक झेंपू प्रकृति का बालक, यौवन में नास्तिक-सा दिखाई देने वाला भौतिकवादी चिन्तक और विद्रोही तथा अंतिम क्षणों में सबका उलझा हुआ रूप। ऊपर-ऊपर से देखने पर कवि का जीवन-विकास कुछ ऐसा ही लगता है। बाल्यकाल में संसार को मिथ्या, पाखंड एवं छल-कपट से परिपूर्ण देख उसका नादान हृदय कराह उठता है—

"कपटलोकत्तिलात्मार्थमायोरु
हृदयमुण्टायताणेन् पराजयम्।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अर्थात् इस कपट एवं प्रवंचना के संसार में सात्विक एवं पवित्र हृदय संपन्न होकर आया, यही कवि की सबसे बड़ी पराजय है। इसका परिणाम यह हुआ कि यौवनकाल में आते ही, वह कवि जो पहले वृन्दावन-सुषमा में अपने को तल्लीन कर बैठता था, 'मुनियों में मुनि' कार्लमार्क्स की ओर अपना लगाव दर्शाने लगता है। इससे भी आगे बढ़कर उमर खय्याम का अनुसरण करता हुआ हालावादी रचनाएँ लिख डालता है और रुबाइयात का अनुवाद भी प्रस्तुत करता है। संसार की अपरिमेय व्यथा-यातनाओं से दुखी एवं हताश हो शराब, मछली और मांस के भंडार-घर याने मधुशाला के भुवनतल स्वर्ग में बैठकर वेदान्त की हँसी उड़ाने तथा उसे निरर्थक सिद्ध करने का भी प्रयत्न करता है। साथ ही नियंता के आगे यह प्रश्नचिह्न भी डाल देता है कि मधुशाला रूपी इस संसार में मुझे किसलिए भेजा गया है?

कवि की चिन्तन-प्रधान कविताओं में 'राक्किळि' (Nightingale) अत्युत्तम स्थान प्राप्त कर सकती है। इस कविता ने समस्त केरल-साहित्य में विद्रोह का स्वर भर दिया है। 'वाषक्कुला' कविता इतनी प्रसिद्ध है कि केरल के बालक तक नित्य उसकी पंक्तियाँ दुहराते घूमते हैं। इसमें कृषकों के शोषण पर जीवित जमींदार वर्ग पर आक्रोश प्रकट किया गया है। इस प्रकार समग्र रूप में देखा जाए तो हम कह सकते हैं कि मिथ्यात्मक संसार, कपटी-दंभी लोगों का जीवन में उत्कर्ष, दीन-दुखी भाइयों की असहाय दशा पर भी वज्र कठोर मानव-हृदय, दीन-दुखी भाइयों की कराह, कृषकों की करुणा प्लावित अश्रुधारा, ये सब चंगम्पुषा की कविता के आधार बन गये और उनके चित्रण में कवि का आक्रोश-रूप भी प्रकट होता है और वह विधि के सामने प्रश्न-चिह्न भी अंकित कर डालता है। 'नाळेक्कु नाम्पटियेंट नालंचु नेल्लोल' (कल ही मुरझाने वाले धान्य के तीन चार पत्ते) यही कवि की दृष्टि में जीवन का मूल्य है। इसे समझे बिना पापाचरण में व्यस्त रहने वाले असामाजिक मनुष्य के प्रति कवि आक्रोश प्रकट करता है। वेदना निर्भर वेदान्त-चिन्तन कवि के दबाये व्यक्तित्व में क्रोध एवं प्रतिकारेच्छा उत्पन्न करता है।

कृष्णपिल्लै की इस परस्पर विरोधी प्रवृत्ति को देखकर कुछ आलोचकों ने उन्हें पलायनवादी कहा, किसी ने उसे क्रांतिकारी की संज्ञा दी तो एकाध ने उसे नास्तिक ठहराया। अतः देखना यह है कि कृष्णपिल्लै का जीवन-दर्शन क्या है? वास्तव में इसका उत्तर देना सहज कार्य नहीं है। आखिर जीवन क्या है? वह कितना अस्थिर एवं क्षणिक है? इस जीवन की आदि और इसका अन्त अविदित एवं अनिश्चित है। मात्र मध्य भाग विदित है; वह कितनी विचित्रताओं, वैविद्ध्यों से परिपूर्ण है। अतः अस्थिर, क्षणिक एवं नानामुखी इस जीवन के संबंध में कवि की भावना भी अस्थिर रही तो इसमें क्या आश्चर्य है? कवि के विमल हृदय से निसृत कविता ने जीवन के इन रूपों को प्रकट किया, इस स्वभाव का दर्शन कराया। उसके अतिरिक्त कवि का कोई निजी जीवन-दर्शन नहीं रहा। अगर किसी निजी जीवन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दर्शन से प्रेरित होता तो वह हमारे प्रगतिवादी या प्रयोगवादी कवियों के समान सिद्धान्त-प्रचारक रहा होता, तब ऐसी सुमधुर कविताएँ उसकी लेखनी से निसृत नहीं होती थीं। क्या कृष्णपिल्लै निराशावादी या पलायनवादी हैं? निराशा और विषाद के कुछ स्वर अवश्य उनकी कविता में गुंजित हो उठे हैं, पर इतने मात्र से उन्हें निराशावादी या पलायनवादी ठहराया नहीं जा सकता। उन्हें भौतिकवादी या नास्तिक भी नहीं घोषित किया जा सकता।

मिथ्यकल् क्कोक्केयुमप्पुरं निल्क्कुन्न
सत्यमे निन्ने ञान् विश्वसिप्पु।

(समस्त मिथ्याओं से परे जो सत्य है, उसपर मेरी आस्था है, विश्वास है।)

अर्थात् हमारा कवि शुभाप्तिविश्वासों को लिये चलता है। अश्रुओं, नैराश्यों को दबा डालने का कोई संकल्प उसके मन में था, यह मानना ही पड़ेगा। 'ईश्वरन् निरर्थकमप्पदं' (ईश्वर—यह शब्द ही निरर्थक है।) इतना मात्र सुनकर उसे नास्तिक कहना भी बालिश क्रीड़ा है, चपलता है। कवि की यह वाणी सुनिये—"आदि-मध्यान्तमट्टु निल्पू चित्तेजस्से।" (आदि, मध्यान्त रहित चित् स्वरूप तेजस्) यही भगवान है। आगे वह कहता है—

एङ्ङिनित्तिरयुवान् विण् वेळिच्चमे नित्य—
मेन्निल् ञानेन्नेत्तन्ने नीयायिट्टुपासिप्पू।"

(संसार की ज्योति! अब कहाँ तुम्हारा संधान करूँ! हृदय में मैं अपने को ही तुम समझकर उपासना करता हूँ।")

अपने को ही ईश्वर रूप में कल्पित कर उपासना करने वाला कवि नास्तिक तो नहीं हो सकता।

अब उसके विद्रोह के स्वर को क्रान्ति की संज्ञा नहीं दी जा सकती। उसके काव्य में विद्रोह की प्रवृत्ति है। वह सामाजिक दशा को देखकर है। उसके ये विद्रोह के स्वर भी हृदय के बाह्यतल के आवेश या क्षोभ की उपज हैं, शाश्वत उसका कवि-स्वभाव नहीं है। 'लोकः सुखिना भवन्तु' का उसका आदर्श है। 'प्राचीन रंतिदेव तथा शिबि', 'कई कर्मवीरों की जननी कर्मभूमि' आदि ने कवि के भावों को उद्वेलित अवश्य किया है। साथ ही भारतीय वेद-पुराण-इतिहास को जला डालने का आह्वान भी सुनायी देता है। अतः जैसे सूर्यरश्मि के पड़ते ही ओसकण बहुरंगी दिखाई देने लगता है वैसे ही हृदय-बिन्दु पर काव्यरश्मि के पड़ते ही वह बहुवर्ण-शबलिमा से युक्त हो जाता है। यही कृष्णपिल्लै के संबंध में कहा जा सकता है। तब-तब की जीवनानुभूतियों के अनुरूप वे हँसते-रोते रहे। हम अपने इस विचार की स्थापना में उनकी एक-दो कविताओं का विश्लेषण कर सकते हैं। जो कवि पलयनवादी या निराशावादी है, वह प्रकृति के सौन्दर्य का पारखी नहीं बन सकता। चंगम्पुषा की बात ऐसी नहीं है। हिन्दी में प्रकृति के मूर्धन्य कवि पंत जी का प्रकृति-सौन्दर्य हम

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चङ्ङम्पुषा में देख सकते हैं। 'आरामत्तिले पूवु' (चमन का पुष्प) में कवि के सामने सुन्दर कामिनी के समान पुष्प इठलाता है। वह पूर्ण विकसित है और कवि-हृदय को अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है, जैसे कोई नवयौवना अपने रूप-लावण्य से किसी मुग्ध पुरुष का ध्यान खींच लेती है। दूसरे क्षण कवि की पुष्प-संबंधी भावना बदल जाती है। कवि पुष्प को आधार बनाकर जीवन की क्षणभंगुरता पर भी प्रकाश डालता है। वसंत बीत गया। कवि की दृष्टि में वसन्त के उपरांत पृथ्वीतल पर पड़ा पुष्प अपनी मूक भाषा में संसार की क्षणिकता का संदेश देता है। और एक कविता है 'काव्यनर्तकी।' यह कविता मलयालम साहित्य में अनुपम स्थान रखती है। अन्य कलाओं की अपेक्षा नृत्य की कुछ खास विशेषताएँ हैं। कलाकार और उसका साधन किसी कला में मिल-जुलकर एकात्म हो जाते हैं तो अकेली नृत्यकला में ही। कवि 'कंकण किंकिणी नूपुर ध्वनि मयी मोहन शुभनर्तन्' देख रहा है। कवि का हृदय पुलकित हो उठता है। उस समय कवि के हृदय की जो भावनाएँ उमड़कर बाहर प्रकट होने की आशा रखती हैं, वे ही 'काव्य-नर्तकी' में रूपायित हुई हैं। अनुभूति की लहर कवि को कंपित कर डालती है, कवि एक स्वप्निल प्रभात देखता है। उस नर्तकी के हाव-भाव तथा हाथ-पाँव की गति एवं मुद्रा कवि को चौदहों भुवनों का दर्शन कराती है। उन चौदहों भुवनों को पार कर कवि जन्म देखता है, निर्वृत्ति पाता है और जन्म-जन्मांतर का सुख भोगता है। वह सहसा कह उठता है—

"सुन्दरं-सुन्दरं स्वर्ग समृद्धितन्
मन्दिरं तन्नयि लोकम्!"

(सुन्दर है, सुन्दर है। यह संसार स्वर्गीय वैभवों का प्रांगण है।)

कुछ स्थलों पर कवि अध्यात्मवादी बन गया है। अपनी आध्यात्मिक अनुभूतियों को उसने प्रतीकों के सहारे प्रकट किया है। ऐसी कविताओं में निक्षिप्त निगूढ़ चिन्तन-तत्वों तक साधारण व्यक्ति की पहुँच नहीं होती। वहाँ प्रत्येक पद में सुधा-बिन्दु निखरता है, हर बिन्दु में चिन्तन-समुद्र की गहराई भी है।

हमारा तात्पर्य यही है कि चङ्ङम्पुषा का अपना कोई जीवन-दर्शन नहीं था। उन्होंने जो देखा, जो अनुभव किया, उसी को वाणी दी। वास्तव में चङ्ङम्पुषा को कवि और मनुष्य के पृथक् रूपों में देखा नहीं जा सकता। वह मनुष्य ही कवि है और वही कवि मनुष्य है। चंगम्पुषा कवि रूप में पैदा हुए, कवि का जीवन बिताया और कवि रूप में ही चरमगति पा ली।

चंगम्पुषा मलयालम के प्रेम-गायक थे। उनकी प्रत्येक कविता की अंतर्धारा प्रेम की है। और ऐसी प्रेम कविताएँ लिखकर ही वे कैरली में शाश्वत प्रतिष्ठा प्राप्त कर सके। लेकिन कवि का विचार कुछ इससे भिन्न था। 'पाटुन्न पिशाचु' (गाता पिशाच) की भूमिका में कवि लिखता है "Call me not a poet, since it is seeds of sin I sow"। जीवन को उसकी समस्त विसंगतियों, वैविद्धयों, सुन्दरताओं,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कुरूपताओं के साथ दिखाने में वे आगे बढ़े थे। कवि का प्रेम आँसुओं से स्निग्ध है। चंगम्पुषा के पूर्व भी प्रेमगायक हुए थे—वेण्मणि मकन् तथा कुमारन् आशान्। वेण्मणि नारी को केवल भोग्या रूप में देखते थे। मांसदाह की शांति ही उनके प्रेम का आधार थी। वेण्मणि से लेकर वल्लत्तोल तक समस्त कवियों ने न्यूनाधिक मात्रा में प्रेम के इस वासनात्मक स्वरूप को प्रश्रय दिया था। पर आशान् इस दृष्टि के बिलकुल विपरीत थे। उन्होंने स्पष्ट कहा था "मांस निबद्धमल्ल रागम्" (प्रेम मांसल नहीं होता)। आज प्रेम भी यांत्रिक हो गया है। इस प्रकार मलयालम कविता में प्रेम के तीन रूप देखे जा सकते हैं—मांसल प्रेम, सात्विक प्रेम और यांत्रिक प्रेम। चंगम्पुषा केलिए प्रेम एक अनिवार्य आवश्यकता है, वह हृदय का सर्वस्व है। उसका प्रेम कभी चपल है, कभी शोकात्मक। कभी-कभी आत्मग्लानि परक भी। उसका प्रेम न मात्र शारीरिक है, न मात्र आत्मिक भी। वह देह और आत्मा के समन्वय पर जीवन-शिल्प को नवीन रक्तिमा प्रदान करने वाली एक अनुभूति है। वह जीवन-गंधी है। उसमें जीवन की गंध अपने असली रूप में परिव्याप्त है। ऐसा प्रेम न उसके पूर्व किसी ने चित्रित किया, न बाद में ही। कवि के प्रारंभ कालीन रचना 'रमणन्' में यौवन की समस्त चपलताएँ अपने वास्तविक रूप में दर्शित हैं। उसमें प्रेम का प्रौढ़ एवं परिपक्व रूप नहीं है। लेकिन कालान्तर की कृति 'मनस्विनी' में प्रेम का आदर्शात्मक रूप दिखाई देता है। वहाँ प्रेम चापल्य नहीं; जीवन के सात्विक धरातल पर निर्वृति की किरणें विकीर्ण करता हुआ प्रेम हमें स्पष्ट दिखाई देता है। यहाँ कवि प्रेम की आन्तरिक सत्ता से पूर्णतया परिचित है। कवि अपनी प्रेयसी की महिमा के सामने पुष्पार्चना करता-सा जान पड़ता है। अतः 'रमणन्' का मांसल प्रेम 'मनस्विनी' में आकर अपनी सात्विकता में मुग्ध करता है। प्रेम का यही मंगलमय रूप 'हेमन्त चन्द्रिका' में भी द्रष्टव्य है। लेकिन क्या कारण है बहुधा चंगम्पुषा अश्रुस्निग्ध प्रेम के गायक-से दिखाई देते हैं? उनके काव्य में प्रेम और शोक परस्पराश्रित, परस्पर संवलित एवं गाढाश्लेषित हैं। उन्होंने लिखा है—मेरा हृदय शत स्वप्नों की बिखरी टूटी अस्थियों का तप्त श्मशान है।" (स्वप्न शतंगळ् तन्नस्थिकळ् चिन्निय तप्त श्मशानं।" कवि के सारे स्वप्न अश्रु में स्निग्ध होते जा रहे हैं। वे स्वप्न और वे अश्रु परस्पर संयुत हो उसकी प्रेम-भावना को एक तप्त स्वर्ण की निखरी हुई कांति प्रदान करते हैं। दूसरा कारण यह भी है कि कवि मानव-हृदय का पारखी है। वह जानता है कि मानव-हृदय को प्रभावित करने की सामर्थ्य करुण एवं शृंगार में सर्वाधिक है। अतः करुणा एवं शृंगार को मिलाकर उसने बहुधा वियोग शृंगार की रचनाएँ लिखी हैं। यह बड़ा विरोधाभास ही है कि कवि कभी-कभी प्रेम के आलंबन स्वरूप नारियों के प्रति प्रतिकूल भावना प्रकट करता है—"नारिकळ्! नारिकळ्! विश्व विपत्तिन्टे नाराय वेरुकळ्, नारकीयाग्निकळ्।" (नारी! नारी! संसार की समस्त विपत्तियों केलिए आधार शिलाएँ हैं, नारकीय हैं।) लेकिन इसे कवि की शाश्वत

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मान्यता नहीं कहा जा सकता। प्रेम को ही जीवनाधार बनाकर चलने वाली प्रकाम्य नारियों के अनवद्य बिम्ब उसके काव्य में आद्यन्त देखे जा सकते हैं। अपने प्रिय के उत्कर्ष केलिए अपना जीवन तक उत्सर्ग कर डालने केलिए कटिबद्ध प्रेयसियाँ उसके पास मौजूद हैं।

चंगम्पुषा के काव्य में भावपक्ष की प्रधानता है या कलापक्ष की या दोनों का अद्‌भुत समन्वय, यह निश्चित करने का कार्य आलोचकों पर छोड़ देना उचित होगा। बात यह कि इस संबंध में आलोचक एकमत नहीं हैं। लेकिन एक बात उनके समर्थक और विरोधी समान रूप से स्वीकार करते हैं कि चंगम्पुषा कवि थे। उन्हें कवि न सिद्ध करने का साहस अब तक किसी आलोचक को प्राप्त नहीं हुआ। कुछ भी हो, केरलीय जनता में इतनी प्रतिष्ठा प्राप्त कोई दूसरा कवि नहीं; न वल्लत्तोल को सामान्य जनता का कवि बनने का भाग्य मिला, न आशान् को ही। केरल में कोई ऐसा बालक, युवक या वृद्ध नहीं है जिसे चंगम्पुषा की कुछ पंक्तियाँ याद न हों। अतः प्रश्न यह है कि उनकी कविता में कौन-सा अंश ऐसा है जो प्रभावकारी है, जो सबको अपनी ओर आकृष्ट करता है। इसका एक ही सर्वमान्य उत्तर है— उसका पद-लालित्य एवं संगीतात्मकता। वह प्रेम-गायक कवि था और प्रेम-भावना को अभिव्यक्त करने की कला में अद्वितीय था। उसका-सा पद-लालित्य किसी अन्य कवि में नहीं मिलता, यहाँ तक कि वल्लत्तोल की कविता में भी यह गुण इतनी मात्रा में नहीं मिलता। उसने सुमधुर शब्दों की स्वयं सृष्टि की और बहुधा अंग्रेज़ी रोमान्टिक कवियों का अनुसरण किया। मरकत हरीतिमा, हरी बांसुरी, लोलनीलालक, विटपछाया, स्वर्णिम स्वप्न, मधुस्निग्ध कोमल कलियाँ, चंदन शीतल छाया, चुंबन कुसुम, नीलांचित ज्योत्स्ना, मानस-वीणा, हृदय-वीणा, कुचकुंभ, छाती की कली, प्रभात लक्ष्मी, सरसिज नयन, मौन संगीत, स्वर्णिम स्वप्न, गीत विहग, हेमन्त यामिनी, हेमन्त चन्द्रिका, स्निग्ध ज्योत्स्ना, ये सारे प्रयोग उसकी कविता में कई बार आ गये हैं और ये सारे प्रयोग उसके अपने थे और मलयालम केलिए बिलकुल नूतन भी। शब्द-प्रयोग एवं शब्द-विन्यास की मधुरिमा, कथात्मक गीतशैली, किसी भी बात को कुछ फैलाकर अकृत्रिम भाषा-शैली में प्रकट करने की क्षमता—यह चंगम्पुषा की मौलिक विशेषताएँ हैं। फलतः मलयालम में चंगपुषा-काव्य की शैली निराली थी और अन्य कवियों की शैली से बिलकुल भिन्न भी। चंगम्पुषा अपनी शैली से सहज ही पहचाने जा सकते हैं। वे अपनी शैली में रोमान्टिक हैं। जीवन का अंतः संगीत ही उनकी कविता है। उसे उसी रूप में प्रस्तुत करने की सामर्थ्य सबके पास नहीं है। उनका संगीत भी ऐसा है जो सहृदयों की हृत्तंत्री को स्पंदित कर सके। पाठकों की हृदय-वीणा को झंकृत करने की उनके संगीत की क्षमता अनुभव-गम्य है। यही कारण है कि ग्रामीण बालक तक के कंठाग्र पर वे बहुधा नाच उठते हैं। ऐन्द्रिय संवेद्य उनकी कविता एक गान-निर्झरी ही है। केरलीय जन-मानस को उनके प्रयोगों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ने इतना आकृष्ट किया कि उसे देखकर अन्य कवि उनका उचित-अनुचित प्रयोग करके यश पाने का लोभ संवरण नहीं कर सके। गीतात्मकता, अर्थ की स्पष्टता, भावों की सहजता एवं ऋजुता और सरस पद-लालित्य इस गान-गंधर्व की निजी विशेषताएँ हैं।

उसकी काव्य-नर्तकी के आगमन का चित्र देखते ही बनता है—

कनक चिलङ्का किलुङ्ङ् किलुङ्ङ्
कांचन कांचि कुलुङ्ङ् कुलिङ्ङ्

अधिक क्या कहा जाए, चंगम्पुषा साहित्योद्यान के गीतविहग थे जिन्होंने अपनी पिक-ध्वनि से काव्य-नभोमंडल को गुंजित कर दिया।

चंगम्पुषा पाश्चात्य साहित्य से अत्यन्त प्रभावित थे और पाश्चात्य रोमान्टिक काव्यधारा का उन्होंने गंभीर अध्ययन भी किया था। उन कवियों का प्रभाव चंगम्पुषा पर स्पष्ट देखा जा सकता है। पहले-पहल शैली, कीट्स का उनपर गहरा प्रभाव पड़ा था—उनका-सा विद्रोही स्वर, प्रेम-सौन्दर्य की उपासना हमारे कवि की भी विशेषताएँ हैं। पाश्चात्य कवि वाल्ट विट्टमान से वे इतने प्रभावित थे कि उनके अतिमानव (Superman) का उन्होंने अनुवाद भी किया था। फ्रेंचकवि पोल वेरलेश्न के समान चंगम्पुषा भी अपने मधुर संगीत केलिए प्रसिद्ध हैं। उनकी कथन-शैली पर भी पाश्चात्य प्रभाव देखा जा सकता है। किसी भी बात को फैलाकर कहने की उनकी शैली पर संभवतः अलेक्सांडर पोप का प्रभाव परिलक्षित होता है। हिन्दी के कवियों में पंत का शब्द-चयन एवं काव्य-सौन्दर्य, महादेवी का विषाद, हरिवंशराय बच्चन का हालावाद, निराला का विद्रोही स्वर मलयालम कवि चंगम्पुषा में भी पाया जा सकता है। इसका यह तात्पर्य कदापि नहीं कि चंगम्पुषा केवल अनुकरणवादी थे। उनपर बाह्य प्रभाव था, लेकिन अनुभूति उनकी मौलिक थी।

कवि की इच्छा 'मंदार माल्यमेन् कंठत्तिल् चार्त्तुम्पोळ् मंदहसिक्कणे 'निङ्ङळ्', 'जयलक्ष्मी के पहनाये मंदारमाल्य' के साथ केरलीय जनमानस में शाश्वत प्रतिष्ठा पाकर अवश्य ही पूर्ण हुई है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जी. शंकर कुरुप की कविता

जी. शंकर कुरुप आधुनिक मलयालम काव्य-साहित्य में अप्रतिम स्थान के अधिकारी हैं। अपने 'ओटक्कुषल्' (बाँसुरी) काव्य-संकलन के लिए भारतीय ज्ञान-पीठ से पुरस्कृत होने के कारण वे केरल की सीमाओं का अतिक्रमण कर भारत के कविरत्न बन चुके हैं। उनका मलयालम काव्य-साहित्य में प्रवेश साहित्य कौतुकम् भाग 1 के साथ हुआ, जिसमें 1917 से लेकर 1922 तक लिखी उनकी कविताएं संगृहीत हैं। तब से आज तक उनकी काव्य-साधना विकासशील रही और उन्होंने लगभग तीस से अधिक काव्य-प्रसूनों से माता कैरली की दिव्यार्चना की। इनमें साहित्य कौतुकम् (चार भाग), पूजापुष्पम्, वनगायकन्, इनळुकळ् (दल), सूर्यकान्ति (एक पुष्प-विशेष), विलासलहरी, मुत्तुकल् (मोती), निमिषम्, मेघछाया, नवातिथि, चेंकतिरुकळ् (स्वर्णिम किरणें), अन्तर्दाहम्, ओटक्कुषल् (बाँसुरी), संध्या, विश्वदर्शनम् आदि काव्य कृतियां पर्याप्त प्रसिद्ध हैं।

जी. शंकर कुरुप का काव्यक्षेत्र में आगमन एक महत्वपूर्ण घटना है। यह वह समय था जबकि मलयालम साहित्य में ही नहीं, समस्त भारतीय साहित्य में अंध परंपराओं, रूढ़ियों के प्रति विद्रोह का स्वर मुखरित होने लगा था तथा साहित्य में एक नवोत्थान का श्रीगणेश हो रहा था। विश्व कवि रवीन्द्र की 'गीतांजलि' का प्रभाव भारतीय साहित्य पर पड़ना आरंभ हो चुका था और साहित्य में नया वातायन खुल रहा था। मलयालम साहित्य में एक नवीन काव्य-सरणी का सूत्रपात महाकवि वल्लत्तोळ् ने किया था, जिसको आगे विकसित एवं पुष्ट करने का श्रेय महाकवि चंगम्पुषा कृष्ण पिल्लै तथा जी. शंकर कुरुप को प्राप्त है। इस प्रकार मलयालम साहित्य में स्वच्छन्दतावादी काव्यशैली को प्रतिष्ठित करने वाले कवियों में श्री कुरुप अग्रगण्य हैं और वे बहुधा 'सिम्बोलिक कवि' के नाम से जाने जाते हैं।

राष्ट्रीय कवि

राष्ट्रीयता, देशप्रेम, मानवतावाद, प्रकृति-प्रेम, रहस्यानुभूति एवं प्रतीक-शैली श्री कुरुप की कविताओं की मुख्य विशेषताएँ हैं। अतः उनकी कविताओं में अभिव्यक्त इन्हीं बातों पर आगे प्रकाश डाला जाएगा। भारतीय असहयोग आन्दोलन एवं गांधीजी के अहिंसा-सिद्धान्त से प्रेरणा पाकर भारतीय राष्ट्रीय भावना की जो लहर महाकवि वल्लत्तोळ् के काव्य में परिव्याप्त थी, उससे प्रभावित कवियों में श्री कुरुप अग्रगण्य हैं और उनकी काव्य-रचना का उषाकाल वही राजनैतिक उथल-पुथल एवं सत्याग्रह-आन्दोलन का ही समय था। गांधीजी के प्रति परम श्रद्धालु महाकवि कुरुप ने उन दिनों साहित्य कौतुकम् के शीर्षक से जो पुस्तक लिखी उसमें गांधीजी के अहिंसा-सिद्धान्त को 'स्वर्णिम रथ' की संज्ञा दी। 'वनगायकन्' में संगृहीत

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अंतिम दो रचनाएँ इङ्ङने विरच्चालो' (ऐसा काँपे तो) तथा 'वंदनम् सुभाषचन्द्र' श्री कुरुप की राष्ट्रीय भावना के द्योतक हैं, जिनमें भारत की अतीत सांस्कृतिक गरिमा से ओतप्रोत कवि के हृदयोद्‌गार मुखरित हो उठे हैं और ये कविताएँ नव-युवकों के हृदय में देश के लिए आत्मोत्सर्ग की भावना जगाने में शक्तिशाली मंत्र सिद्ध हुई। वैसे महायुद्ध के समय विदेशों में जाकर अपना रक्त बहाने वाले भारत के वीर सैनिकों को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए लिखी उनकी 'रक्तबिन्दु' कविता 'चेंकतिरुकल्' काव्य-संग्रह में है जिसमें यह बताया गया है कि युद्ध-लिप्सा से प्रेरित न होते हुए भी लोक-कल्याण के लिए कर्तव्य की पुकार सुनकर गीता के देश के ये वीर सैनिक सागर के पार विदेशों में अपनी जीवन-समिधाएँ चढ़ा रहे हैं और कवि की कामना है कि इन वीरों के बलिदानों से विश्वशांति संभव होगी—

गीततन् राज्यत्तिकल् निन्नुमी विदूरत्ते–
व्भूतल नटुक्कटल् करयिल् स्वयमेत्ति,
जीवित यज्ञं चेय्युं योद्धाविन् हृदन्तमा–
णी विशिष्ट माणिक्यं विलयुं दिव्याकरम्।

(गीता के देश से दूर समुद्र के पार स्वयं पहुँच कर जीवन-यज्ञ चढ़ानेवाले इन योद्धाओं का हृदय विशिष्ट रत्नों की खान है।)

केरल और भारत के नाम के श्रवण मात्र से श्री कुरुप गर्वान्वित होते हैं और भारत के वेदों, उपनिषदों के निगूढ़ तत्वचिन्तन को वे मानव मात्र के लिए प्राणवायु मानते हैं। इन ज्ञानरत्नों का महत्व समझे बिना उनकी हँसी उड़ानेवाले मूर्खों पर उनका आक्रोश फूत्कार उठता है। श्री कुरुप के कुछ राष्ट्रगीत केरल से संबंधित हैं, कुछ भारत से संबंधित हैं और शेष गांधी-स्तोत्र के रूप में प्राप्त हैं। उनमें प्राकृतिक सुषमा से अभिमंडित एवं सांस्कृतिक वैभव से पूर्ण राष्ट्रगीत भी हैं। 'तिरुनावा' तथा 'अषिमुखत्तु' शीर्षक कविताओं में वीरप्रसू केरल के सांस्कृतिक वैभव का विस्मरण कर दूसरों की चरणधूलि पोंछनेवाले केरलवालों की हीनदशा पर कवि की हार्दिक सहानुभूति प्रकट हुई है। 'वन्दनम् परयुक' कविता में भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति पर उल्लसित कवि-हृदय के मंजुल उद्‌गार हैं और कवि की आशा है—

उन्मुखं हिमवानुं विध्यनुं मलयनुं
नम्मुटे पताकयुल् पुळकं दर्शिक्कट्टे।

(उत्तुंग हिमवान, विंध्याचल तथा मलयपर्वत हमारा लहराता ध्वज देख मन ही मन पुलकित हो उठते हैं।)

मानवतावाद :

'उन्मर्ष जयिक्कुन्नु' 'वन्दनं तथागत' 'भारतेन्दु' जैसे गीतों में जीवन के धार्मिक मूल्यों पर बल देनेवाले एक मानव-प्रेमी का दर्शन होता है। श्री कुरुप की राष्ट्रीयता धर्मों, संप्रदायों से निरपेक्ष है। वे मानव को मानवोचित सद्‌गुणों के साथ देखने केलिए

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उत्सुक हैं। वे राष्ट्रवादी से आगे विश्वमानवतावादी के रूप में प्रकट होते हैं। मनुष्य को राष्ट्रों, वर्गों, जातियों, भाषाओं के घेरे में विभक्त करनेवाली कृत्रिम खाइयों को तोड़कर वे एक विश्वमानव तथा विश्वराष्ट्र की कल्पना करते हैं और मनुष्य को मानव-प्रेम का महान संदेश देते हैं। चीन तथा इन्दोनेशिया को संदेश देती हुई उनकी दो कविताएँ इसी विश्वमानवतावाद का शिलान्यास करती हैं; हाँ, एकाध बार एशिया की प्रबुद्धता की ध्वनियाँ भी गूंज उठती हैं जब वे कहते हैं कि किसी को बिना भयभीत किए तथा किसी से बिना भयभीत हुए प्राची अपना मस्तक उठा रही है।

श्री कुरुप का मानवप्रेमी कवि-हृदय मानव द्वारा मानव के शोषण की भर्त्सना करता है। यही नहीं, मनुष्य के शाषण पर अधिष्ठित प्राचीनता को नष्ट-भ्रष्ट करने केलिए कवि क्रान्ति का आह्वान करता है। इस प्राचीनता के नष्ट होने पर कुछ चिन्तित होने की आवश्यकता नहीं है, इसकी समाप्ति एवं विनाश-भूमि पर ही नवीनता अंकुरित होती है। कवि का 'निमिष' एक महान क्रांतिकारी शक्ति है. जो ब्रह्मांड तक को विकंपित करती हुई आगे बढ़ रही है—

जीवितत्तिन् पषम्पूकळ् कोषिजाले–
न्तीविधमुल्ल चिरकटियाल् ?
नूरुनूरायिरमल्ल परिणाम
नूतन भंगिकळ् मोट्टिटुन्नु
अम्बरमध्यं तिळयुकुन्नोरादित्य–
बिम्बवुं केट्टुपोमेंकिलाट्टे
अक्करि यूतिप्पिटिप्पिच्चु मट्टोरु
तीक्कट्ट युण्टाक्कुं सर्ग शक्ति।

(निमिष की पंख मारकर उड़ती गति में जीवन रूपी पुराने बासी पुष्प अगर झड़ जाएँ तो क्या होगा ? उनके स्थान पर सैकड़ों नित्य नूतन पुष्पों की कलियाँ अंकुरित होती हैं। इस गति में पड़कर आकाश में प्रज्वलित सूर्य बिम्ब ही बुझ जाए। सृजनशक्ति उसकी राख को एकत्र कर, उसी से एक-एक नया शोला तैयार करेगी।)

जनप्रेम :

उपर्युक्त पंक्तियों में प्राचीनता के प्रति असन्तोष एवं नवीनता के प्रति आस्था प्रकट हुई है। कवि की क्रांतिकारी भावना नवीन जीवन-मूल्यों को लेकर है। वह मानव-जीवन के प्रत्येक कंपन से अनुप्राणित है। केरल के ग्राम प्रदेश के एक सामान्य परिवार में जन्म लेने और पालित होने के कारण श्री कुरुप सामान्य जनता की आशा-अभिलाषा, सुख-दुख, भावना-कल्पना से परिचित हो सके हैं और उन्होंने सामान्य जनता के हृदयगत भावों को सशक्त वाणी दी है। समाज की दलित, पीड़ित एवं असहाय मानवता के प्रति उनकी सहानुभूति प्रकट हुई है। 'तूप्पुकारी' (झाचलाने-झू

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वाली) तथा वृद्धा, जैसी कविताएं उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत की जा सकती हैं। उन्होंने इन दलितों के प्रति हार्दिक करुणा ही प्रकट नहीं की, अपितु उनके अधिकारों के लिए आवाज भी उठायी है। यह देखकर किसी-किसी ने उन्हें साम्यवादी घोषित किया है। वास्तव में देखा जाए तो श्री कुरुप की इन कविताओं में अभिव्यक्त क्रान्ति की भावना, एक मानव-प्रेमी कवि का निष्ठुर समाज के प्रति जिसने अपने ही एक अंग को तृषित एवं क्षुधित रखा है, के प्रति आक्रोश का परिणाम है। इस आक्रोश को देखकर अगर कोई उन्हें साम्यवादी घोषित करना चाहे तो ऐसा कर सकता है। किन्तु इतना तो निश्चत है कि उनका यह साम्यवाद समचित्तता से नियंत्रित एवं परिचालित है। इसलिए यहाँ साम्यवादियों के समान धमकाने की भावना नहीं है। वे एक मनीषी कवि हैं, उनकी संवेदनाएँ बुद्धि से परिचालित हैं। कृषकों-श्रमिकों के स्वेद कणों पर अपना पेट भरनेवाले मानवद्रोही धनिकों, कुबेरों के प्रति उनके मन में सद्भावना नहीं है और वे उन्हें समाज के लिए अभिशाप मानते हैं। समाज के शत्रु इन धनिकों का आनेवाले कल में कोई स्थान नहीं रहेगा। इसलिए कवि आनेवाले कल को देखकर उन्हें संत्रस्त एवं भयभीत हो कंपित पाता है। वह उन्हें चेतावनी देता है—

वेम्पुक ! विलरुक, विरकोल्लुक ! नोक्कू,
निन् पुरोभागत्तता धीरतेजस्सां नाले !

(भागो, निस्तेज बनो, कंपित हो जाओ। जरा पीछे मुड़ देखो, वीर एवं तेजस्वी कल का आगमन हो रहा है।)

प्रकृति प्रेम :

जी. शंकर कुरुप प्रकृति के गायक कवि हैं। प्रकृति की प्रत्येक वस्तु उन्हें प्रभावित करती है। उसके कण-कण के प्रति आत्मीयता एवं प्रगाढ़ अनुराग है। प्रकृति कवि के हृदय में एक गुदगुदी पैदा करती है और उसके रूप-सौन्दर्य के प्रति तन्मय हो कवि पुलकित हो उठता है। कुरुप का कवि प्रकृति की प्रत्येक वस्तु में अपनी आत्मा का स्पंदन अनुभव करता है। प्रकृति के प्रति कवि का यह अनुराग अनुभूति की उपज है। बहुधा कवि प्रकृति की नैसर्गिक सुषमा पर मुग्ध हो अवाक् रह जाता है और उससे प्राप्त अनुभूति एवं प्रकृति-सुषमा के प्रति रागात्मक तन्मयता ही कुरुप की कविता की उत्स भूमि है। कवि ने प्रभात-संध्या, दिन-रात, सूर्य-चन्द्र, ग्रह-तारे, ऋतुएँ, नदी, सरोवर, वृक्ष-लतादि सब को अपने काव्य में स्थान दिया है, किन्तु कहीं भी उसकी कविता में प्रकृति का यथातथ्य चित्रण नहीं मिलता। उसकी प्रकृति किसी अव्यक्त सत्ता की ओर संकेत करती है या कवि प्रकृति के प्रत्येक पदार्थ में उस परमसत्ता का आभास पाता है। इस प्रकार के प्रकृति-चित्रण को प्राकृतिक रहस्यवाद की संज्ञा दी जा सकती है। तृण से लेकर पर्वत पर्यन्त समस्त प्रकृति-वस्तुओं में विलसित उस परम दिव्यसौन्दर्य की अनुभूति से ओतप्रोत कवि-हृदय उस

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सौन्दर्य के निमित्त कारण ज्योतिस्वरूप एवं अमृत स्वरूप भगवान् का संधान करता है, तो वह पाता है कि प्रकृति की प्रति वस्तु उस दिव्य तेजोमय भगवान से परिचालित हो उसी का संधान कर रही है। श्री कुरुप के लिए वह दिव्य स्वरूप प्रिय अज्ञेय नहीं है, अनुभव गम्य है और वे प्रतिक्षण उसके स्पर्श से पुलकित होते हैं और उसके दर्शन से निर्वृति पाते हैं। इस प्रकार नाना प्राकृतिक वस्तुओं में उस एकत्व की अनुभूति ही उनके रहस्यवाद का आधार है। 'निशागीतम्', 'पंकज गीतम्', 'अन्वेषणम्', 'साक्षात्कारम्' जैसी अनेक कविताएं इस प्रकार की रहस्यात्मक अनुभूति से परिपूर्ण है।

कवि की हृत्तंत्री उस दिव्य चैतन्य के पुलक-स्पर्श से झंकृत होती है और उसका जीवन बांसुरी बन उसी का यशोगान करता है। यही क्यों, कवि का पुष्प दिव्य ज्योति के अवलोकन केलिए विह्वल है। उसे आशंका है कि कल्पद्रुम की शीतल छाया प्रिय के दिव्यानन को ढक देगी—

भयमाणेनिक्कल्पं कल्पक वृक्ष छाया
प्रिय दर्शनमाय निन् मुखं मरच्चालो।

(मुझे यही भय है कि कल्पवृक्ष की छाया दर्शन के लिए अभिकाम्य तुम्हारे मुख को आच्छादित कर ले तो क्या करूं!)

कवि का पुष्प संसार के लिए अवलंब-स्वरूप परब्रह्म केलिए स्तवक अर्पित करता है। उसी के रूप-सुधा-पान के लिए सागर बार-बार तरंग रूपी अपना मस्तक ऊपर उठाता है। कवि की दृष्टि में सांध्यतारा शांतिस्वरूप भगवान की मृदु मुस्कान का एक कण है और अभेदवाद का पल्ला पकड़ता हुआ कवि का उद्घोष है कि उसमें और अपने में एक ही दिव्य कण विराजमान है। कवि का पवन पागल की तरह उसी दिव्यचैतन्य के संधान में इधर-उधर घूमता-फिरता रहता है। उसका सा दिव्यानुराग मानव में भी दर्शित नहीं होता। उसको अंधाधुंध विचरते देखकर कवि उससे इस प्रकार भटकने के कारण पूछता है तो वह बतला देता है कि मैं परम तेजोमय प्रिय के दर्शनार्थ घूम रहा हूं। हमारा यह बिछोह बहुत पुराना है और उसकी स्मृति मुझे बेचैन कर डालती है। कवि को पवन यह भी बतला देता है—

कण्टवरिल्ल पारिल् कण्टुवेन्नुरप्पवर्
कण्टवरल्ल काणान् ञान् स्वयं यत्निक्केणम्।

(संसार में किसी ने उसे नहीं देखा; जो कहता है कि उसने उसे देखा है, वह वास्तव में देखा हुआ नहीं है। फिर भी उसे देखने के लिए स्वयं प्रयास करना चाहिए।) पवन इधर-उधर सब के पास उस दिव्यदर्शन के लिए पहुंचता है, पर कोई उसे प्रिय को दिखा नहीं पाता। अंत में निराश हो भूमि पर लोटपोट हो बिलखते पवन को ध्यानस्थ पर्वत आकाश की ओर इंगित करता है।

कवि उमड़ पड़ती लहरों के विलास में, वापी के अधरों पर तथा पंकजों के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आनन पर उस दिव्य चैतन्य के सौन्दर्य का दर्शन करता है और कवि उसके चरणों पर अपनी दुर्बलताओं को उपहारस्वरूप अर्पित करता है। 'साक्षात्कारम्' शीर्षक कविता में वही कवि आकाश को सनातन ब्रह्म का स्वरूप मानता है और उसके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करता है। फिर दोनों का पारस्परिक संबंध स्थापित करता हुआ कहता है—

ओरु हिमकणं मात्रमाणण्डया—
मिरविन् सन्ततियाय आनेंकिलुम्
भवदनुग्रहत्तिन्टेयाकस्मिक—
नव किरणमेन्नात्माविलेल्कवे,
इटयिलुण्टायिरुन्न तमोमय—
पटमतिनालुटनकन्नीटवे;
क्षणिकमाकिलेन्तेन्टेयिज्जीवित
कणिकयिल् कण्टितङ्ङ्ये तन्न आन्।

(मैं इस तमोमय अण्डकटाह की सन्तान स्वरूप एक हिमकण हूं। फिर भी आकस्मिक रूप से आप के अनुग्रह की एक किरण के, मेरी आत्मा में प्रवेश करते ही हम दोनों के बीच का तमोमय पर्दा हट गया। ऐसी हालत में मेरा जीवन क्षणिक है तो भी क्या हुआ, मैंने अपने लघु जीवन में आपका साक्षात्कार कर लिया।) वह दिव्य चैतन्य स्वरूप परब्रह्म कवि के हृदय को गुदगुदाता है और उस दिव्य-दर्शन की क्षणिक अनुभूति में आनंद सागर के लहरा उठने से कवि तटों को डुबाये जीवन-सागर को अपनी पूर्णता में देख पाता है। सारांश यह कि श्री कुरुप की कविताओं में रहस्यवादी जिज्ञासा, विरहानुभूति, मिलन से प्राप्त आनंद सब की ऐसी सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है कि वे मलयालम काव्य-साहित्य के सर्वोत्कृष्ट रहस्यवादी कवि सिद्ध होते हैं।

तत्व चिंतन :

श्री कुरुप मननशील एवं चिन्तक कवि हैं। उनके काव्य में तत्वचिन्तन की गंभीरता एवं गहराई है। उनका दार्शनिक दृष्टिकोण अद्वैतवादियों जैसा है। उनका दिव्य चैतन्य स्वरूप ब्रह्म अनादि, अनंत, अपरिमेय, ज्योतिर्मय एवं आनन्दमय है। उनका यह ब्रह्म संपूर्ण चराचर में व्याप्त है और संपूर्ण चराचर उसी के आलोक से आलोकित हैं। वह संपूर्ण जगत में और जगत उसमें परिव्याप्त है। आत्मा उसी ब्रह्म का एक ज्योतिर्मय किन्तु क्षुद्र कण है। अतः आत्मा एवं ब्रह्म में गुण भेद नहीं है। दोनों का स्वभाव एक ही है। ब्रह्म एवं जीव का संबंध भी काया-छाया का है। यह छाया अस्थायी एवं क्षणिक है, किन्तु जीव के भीतर समायी हुई आत्मा स्थायी एवं चिरंतन है। जीवन क्षुद्र एवं नश्वर है, जीव ईश्वर का सान्निध्य विस्मरण कर सो रहा है। जीव का जन्म स्वप्नतुल्य है। जीव इस जगत में आनंदरहित हो भटक रहा है और वह मृगतृष्णा का दास है। ब्रह्म अविचल एवं अचंचल पर्वत है, किन्तु

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जीव चंचल एवं चपल है। कवि बार-बार जीव को सचेत करता है कि यह संसार उसका स्थायी वासस्थान नहीं है, उसका गन्तव्य स्थान दूसरा है। ऐसी स्थिति में पथभ्रष्ट हो यहां भटकते रहना व्यर्थ है। यह जगत ब्रह्मरहित नहीं है, सभी में ब्रह्म का अधिवास है। किन्तु छायामय इस संसार का मिट जाना आवश्यक है क्योंकि यही सृष्टि का नियम है, अन्यथा यह संसार सत्य स्वरूप एवं परमसुन्दर ब्रह्म या भगवान का बाह्य रूप मात्र है।

एल्लात्तिलुम् परमसुन्दरमेक सत्य—
मिल्लाय्कयिल्लिवयतिन्टे बहि:स्वरूपम्

(सब में परम सुन्दर अद्वैत सत्य का निवास है। ये सब उसके बाह्यस्वरूप मात्र हैं।)

श्री कुरुप मृत्यु को सृष्टि का नाश या अंत नहीं मानते। यह मृत्यु नूतन सृष्टि के लिए भूमिका प्रदान करती है। एक वस्तु मिटकर अनेक वस्तुओं को जन्म देती है। अत: सृष्टि के संबंध में उनका दृष्टिकोण विकासवादियों से मेल खाता है।

कुरुप दार्शनिक तत्वों को भी मूर्त चित्रों के रूप में प्रस्तुत करते हैं ताकि वे सर्वजन-सुलभ एवं ग्राह्य बन सकें। जीवन को उन्होंने रूपकों द्वारा समझाया है। उन्होंने बतलाया है कि जीवन रूपी तितली देह-पंजर में आबद्ध हो, परतंत्र जीवन बिता रही है। इस बंधन से छुटकारा दिलानेवाली मृत्यु से जीव व्यर्थ भयभीत होता है। जब मृत्यु आकर इस बंधन से विमुक्त करे तब सानंद उसे धन्यवाद देना चाहिए। उससे घबराने, छटपटाने की आवश्यकता नहीं है। आगे कवि ने जीव को मृगतृष्णा में चरती भेड़ का उपमान दिया है और बताया है कि यह भेड़ वासना रूपी काँटों से भरे तारुण्य रूपी हरे-भरे सानुप्रदेश में आशा रूपी मृगतृष्णा को चरती जा रही है। उसका मुख काँटों के लगने से रक्तभरा है। यह भेड़ चारे से कभी संतुष्ट नहीं होती, उसका पेट तो भरा है, तो भी कभी न शान्त होनेवाली क्षुधा लेकर वह संसार रूपी राजपथ पर पड़ी रहती है। यह राजपथ किसी एक का नहीं, सब का चरागाह है। किन्तु गंभीरता से विचार करने पर पता चलेगा कि यह राजपथ केवल छायापथ है। सहसा किसी की आहट सुनकर भयभीत एवं कंपित भेड़ को कवि समझाता है कि यह ध्वनि किसी भेड़िये की नहीं, गड़रिये की है जिसने उसे प्रात:काल चरने केलिए यहाँ छोड़ दिया था। गड़रिया अब संध्या समय उसे अपनी शाला में ले जाने केलिए आ रहा है। ऐसी हालत में अपने वासस्थान को लौटते हुए भयभीत होने की क्या पड़ी है?

आलयिल् निन्नु निन्ने मेयुवान विट्टू काल—
त्तालयिल् पूकानन्तियकेन्तिनु [illegible]कन्न।

(तुझे प्रात:काल चरने केलिए शाला से छोड़ दिया था तो अब संध्याकाल अपनी शाला को लौटते हुए हतांश होने की क्या बात है?)

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भाषा एवं शिल्प :

जी. शंकर कुरुप का अभिव्यक्ति-पक्ष भी अनुभूतिपक्ष के समान सक्षम एवं सफल है। वे मलयालम काव्य में लाक्षणिक एवं प्रतीकात्मक शैली के जन्मदाता माने जाते हैं। उनके शिल्पपक्ष की सबसे बड़ी उपलब्धि उनकी प्रतीक-योजना है। अमूर्त एवं अगोचर वस्तुओं की सहज अभिव्यक्ति में जब भाषा असमर्थ या कुंठित होती है तब कवि लोग प्रतीकों का सहारा लेते हैं। अतः प्रतीक हृदयगत भावनाओं, अनुभूतियों की सफल अभिव्यक्ति का साधन है। महाकवि कुरुप रहस्यवादी कवि हैं और उन्होंने अपनी आध्यात्मिक अनुभूतियों, गंभीर विचारों एवं सूक्ष्म भावनाओं को प्रतीक-शैली में अभिव्यक्त किया है, जिस कारण उनकी शैली में एक प्रकार की मूर्तता एवं चित्रात्मकता का विशिष्ट गुण सहज ही आ गया है। उनके सारे प्रतीक प्रकृति के प्रांगण से गृहीत हैं और बिम्ब-धर्मी गुणों से युक्त हैं। आगे उनकी इस प्रतीक-योजना पर संक्षेप में विचार किया जाएगा।

प्रतीक-योजना :

कवि ने अपनी आत्मा को वनपुष्प, सांध्यतारा, पवन, सूर्यकान्ति आदि प्रतीकों द्वारा प्रस्तुत कर उसकी आशा-अभिलाषा, सुख-दुख आदि को सजीव रूप में अंकित किया है। उसकी वायु और आकाश परमतत्व ब्रह्म का प्रतीक है। 'सूर्यकान्ति' कविता क्रमबद्ध एवं सुगठित प्रतीकों की एक शृंखला है। उसमें कवि की समर्थ प्रतीक-योजना हमें विस्मय-विमुग्ध कर देती है। प्रतीक-योजना में कवि की पटुता ही समझिये, सूर्यकान्ति एक ही समय आध्यात्मिक पक्ष में ब्रह्म से मिलने के लिए उत्सुक किन्तु अपनी अयोग्यता पर सशंकित आत्मा का प्रतीक है तो लौकिक पक्ष में एक लजीली पतिसमागमोत्सुक नवतरुणी का प्रतीकत्व अपनाती है। दिवाकर की ओर उन्मुख नम्रमुखी सूर्यकान्ति एक साथ अनेक भावों की व्यंजना करती है। उसे आत्मा तथा दिवाकर को ब्रह्म मान लेने पर ब्रह्म की तेजोराशि के सम्मुख सलज्ज नम्रमुखी खड़ी आत्मा और उसे अपने कर-स्पर्श से ऊर्ध्वमुखी बनाने के लिए प्रयत्न-शील ब्रह्म का फोटोग्राफिक चित्र अंकित हो जाता है। उसका लौकिक पक्ष भी मोहक एवं आकर्षक है। अपने सामने नतमुख खड़ी सूर्यकान्ति रूपी सलज्ज प्रिया को अपनी उँगली के स्पर्श से ऊर्ध्वमुखी बनाने की चेष्टा में तल्लीन प्रिय का कमनीय बिम्ब अनायास अंकित होता है। यह प्रतीक-योजना आनुषंगिक न होकर समग्र है। आद्यन्त प्रतीक-योजना भावों का अनुसरण करती हुई पूरी कविता को सुन्दर एवं सफल अभिव्यक्ति प्रदान करती है। वैसे ही 'वेळी' (विवाह) कविता प्रतीकात्मक है। यहां ब्रह्म को वर, जीव को वधू, मृत्यु को विवाह, यमराज को पुरोहित, परलोक को ससुराल के प्रतीक प्रस्तुत करके मृत्यु के निकट आने पर ब्रह्म-प्राप्ति केलिए जिज्ञासु आत्मा की मनः स्थितियों, दशाओं, भावों, कल्पनाओं का सजीव वर्णन है। विवाह का मुहूर्त समीप आने पर नववधुएँ मोहक कल्पना-लोक में विचरण करने लगती हैं, उस परिणय

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

के मुहूर्त की कल्पना में वे उल्लसित एवं पुलकित होती हैं। यही बात आत्मा की भी है। अपने उल्लसित एवं पुलकित क्षणों में आत्मा अन्य नववधुओं के जैसे ही अपने ससुराल के संबंध में शंकाएँ भी प्रकट करती है। जो प्रथम बार ससुराल देखने जा रही है, उसे क्या पता कि ससुराल स्वर्ग है या नरक है—

हा तिरिच्चविटे निन्नागमियकुन्निल्लारु–
मोतीटान् अन्तः पुरम् नाकमो नरकमो।

(साधारण जीवन में वधुएँ ससुराल जाकर एकाध बार पीहर में आकर ससुराल के सुख-दुख सुनाया करती हैं। किन्तु यह ससुराल कुछ ऐसा है कि यहाँ से एक बार वहाँ जाने पर कोई नववधू वापस नहीं आती, जो यह बता सके कि वह स्वर्ग है या नरक है।)

जी. शंकर कुरुप के लौकिक प्रतीक भी कम आकर्षक नहीं हैं। उनकी 'नाळे' (आनेवाला कल) एक स्वर्णिम प्रभात का प्रतीक है तो 'नक्षत्र' कृषकों, श्रमिकों के स्वेद कणों पर जीवित धनिकों का प्रतीक है, जिन्हें स्वर्णिम प्रभात में निस्तेज होना ही पड़ेगा। वैसे ही जमीनदारों सामन्तशाहियों के प्रतीक रूप में 'कुकुरमुत्ता' तथा साम्य के अर्थ में 'हल' प्रयुक्त हुआ है। अधिक से अधिक राष्ट्रों को अपने अधीन में फँसाने की साम्राज्य-तृष्णा लेकर खड़े साम्राज्यवादी राष्ट्र को मकड़ी का प्रतीक दिया गया है और बताया गया है कि इस मकड़ी ने विस्तृत आकाश में अपना जाला बुन रखा है और उसमें फँसकर हाथ-पैर पटकते कीड़ों की अनधिकार चेष्टा को मदान्ध मकड़ी सह नहीं पाती। इसलिए वह अधिकार-गर्व लेकर कीड़ों को देखती रहती है और उन्हें समाप्त करने की सोचती है। जाले में फँसकर अपने पंख हिलाती तितली का घमण्ड वह सह नहीं सकती और इस कारण वह अपना बडप्पन हांकती हुई कहती है कि आठों दिशाएँ मेरे चरणों तले हैं। यह प्रतीक-योजना अपनी मूर्ति-विधायिनी क्षमता एवं भाव-संकुलता के कारण प्रभावोत्पादक है।

निष्कर्ष यह कि मलयालम काव्यधारा को नया दिशा-निर्देशन करने वाले कवियों में महाकवि जी. शंकर कुरुप का महत्वपूर्ण स्थान है। उनकी कविता प्रकृति एवं मानव पर केन्द्रित है और मानव की मंगलेच्छा ही उनकी कविता का अंतिम लक्ष्य है। उनकी कविता उनकी आत्मा की वाणी है। लोग आश्चर्य करने लगे कि श्री कुरुप एक ही समय रहस्यवादी एवं क्रान्तिकारी कैसे हो सकते हैं। उन केलिए यही उत्तर है कि श्री कुरुप का रहस्यवाद या क्रान्ति-भावना सबका अंतिम लक्ष्य मानव-कल्याण है। इसी लक्ष्य की प्राप्ति केलिए कभी उन्होंने अध्यात्म का सहारा लिया तो कभी क्रान्ति का। श्री कुरुप मानव-प्रेमी हैं और प्रकृति के उन्मुक्त गायक भी। इतना होते हुए भी हमें यह स्वीकार करना ही पड़ेगा कि वे महाकवि चंगम्पुषा कृष्णपिल्लै के समान जनप्रिय कवि नहीं बन सके। कारण यह कि जी. शंकर कुरुप का तत्व-चिन्तन एवं दार्शनिक विचार तथा उसकी अभिव्यक्ति केलिए स्वीकृत प्रतीक-शैली अपनी दुरूहता के कारण सामान्य जनता के अनुकूल नहीं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हो सकी। श्री कुरुप पंडित-कवि हैं और उनकी कविता सहृदय कल्पनाशील एवं विचारशील पाठक की अपेक्षा रखती है। इससे उनकी कविता का महत्व नहीं घटता, वह प्रबुद्ध एवं स्तरीय पाठक केलिए अमृतबिन्दु है। भारतीय अध्यात्मचिन्तन, संस्कृति एवं गरिमा के प्रवाचक श्री कुरुप युग-युगों तक अपनी शाश्वत प्रतिष्ठा बनाये रखेंगे, इसमें कोई संदेह नहीं है।

श्री कुरुप की तुलना हिन्दी के महाकवि जयशंकर प्रसाद से की जा सकती है। दोनों के भावों-विचारों में तथा उसकी अभिव्यक्ति केलिए अपनाये गये माध्यम में पर्याप्त समानता है। दोनों मानव-प्रेमी, भारतीय अध्यात्मचिन्तन के प्रबल समर्थक, प्रकृति के अनन्य गायक कवि हैं।

श्री कुरुप ने भारतीय अद्वैतवाद का पल्ला पकड़ा तो प्रसाद ने काश्मीरी शैवदर्शन से प्रतिपादित अभेदवाद का आश्रय लिया; पर दोनों के विचार लगभग समान ही हैं। हाँ संसार को सत्य मानने केलिए श्री कुरुप तैयार नहीं हैं। प्रसाद ने प्रकृति के कमनीय एवं गुरु-गंभीर स्वरूपों का चित्रण किया है तो कुरुप भी प्रकृति के उद्गीथ गाते रहे। हाँ, प्रकृति में रहस्य-वस्तु के संधान की भावना प्रसाद की अपेक्षा कुरुप में अधिक है। कुरुप की प्रकृति दिव्य ज्योति से विलसित एवं उल्लसित है। दोनों कवि भारतीय राष्ट्रीय चेतना के पुरोधा हैं; देशप्रेम एवं राष्ट्रीयता की भावना दोनों की नस-नस में प्रवाहित है। दोनों मानव-कल्याण के शुभेच्छु और भविष्य के प्रति आशावादी हैं। कविता का अंतिम लक्ष्य इसी मानव-कल्याण को माना है। अभिव्यंजना की दृष्टि से दोनों कवि चित्रात्मकता, लाक्षणिकता एवं प्रतीक-योजना के धनी हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आधुनिक मलयालम कविता में राष्ट्रीयता

'राष्ट्रीय' शब्द 'राष्ट्र' का विशेषण-रूप है और यह अंग्रेज़ी के नेशनल का पर्यायवाची शब्द है। साहित्य में 'राष्ट्रीयता' का प्रयोग दो-तीन अर्थों में किया जाता है। देश और जाति को एक इकाई मानकर जो काव्य-रचना होती है वह राष्ट्रीय कविता की संज्ञा प्राप्त कर सकती है। उसकी मूल प्रेरणा देश और जाति होती है। इस प्रकार देश और उसकी संस्कृति-सभ्यता तथा जनता की चित्त-वृत्तियों का प्रतिनिधित्व करती हुई लिखी गयी रचनाएँ 'राष्ट्रीय' कविता की श्रेणी में आ सकती हैं और सभी सभ्य एवं विकसित देश में ऐसी कविताएँ अधिक मात्रा में मिल जाती हैं। राष्ट्रीय कविता का व्यापक अर्थ में प्रयोग देश-प्रेम एवं देशभक्ति से परिपूर्ण रचनाओं केलिए होता है। ऐसी रचनाओं में देश की ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक विशेषताओं का गुणगान होने के अतिरिक्त कभी-कभी कवि का सुधारवादी दृष्टिकोण भी प्रकट होता है। इस प्रकार कविता में राष्ट्रीयता के संदर्भ में हम किसी कविता में अभिव्यक्त देश एवं जातिगत विशेषताओं, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक भावधाराओं तथा सुधारवादी दृष्टिकोणों का अध्ययन करते हैं।

सह्याद्रि एवं अरबसागर के बीच का भू-भाग केरल है और उधर की प्रान्तीय भाषा मलयालम है। मलयालम में 'मला' का अर्थ पर्वत तथा 'आषि' का अर्थ सागर है। अतः मलयालम का अर्थ है पर्वत तथा सागर के मध्यवर्ती भूभाग की भाषा। वैसे केरल की भाषा होने से इसको कैरली की भी संज्ञा दी जाती है। मलयालम कविता का आधुनिक काल उन्नीसवीं शती के उत्तरार्द्ध से माना जाता है, जबकि मलयालम कविता भाव और शिल्प दोनों दृष्टियों से नव्य रूप लेकर साहित्य-जगत् में पदार्पण करती है। मलयालम की आधुनिक कविता के उषाकाल के चार प्रतिभाशाली कवि हैं—उल्लूर एस. परमेश्वरअय्यर, कुमारन् आशान्, वल्लत्तोल नारायण मेनन और के. सी. केशव पिल्लै, जिन्होंने अपने भावगीतों एवं प्रबन्ध-काव्यों की स्वर्ण-रश्मियों से साहित्य-जगत् को तेजोमय एवं आलोकमय कर दिया। इन कवियों ने अन्य विषयों के समान राष्ट्र-प्रेम तथा देशभक्ति पर भी कविताएँ लिखी हैं। हाँ, हो सकता है कि इनमें किसी-किसी ने केरल और उसकी जनता के विचारों को वाणी दी हो, समूचे भारत को नहीं। फिर भी केरल और कैरली भाषा के कवि के नाते केवल उस देश के प्रति प्रेमी तथा उस देश की जनता की चित्त-वृत्ति को वाणी देने वाले ये कवि भी केरल के राष्ट्रीय कवि ही सिद्ध होते हैं। उनकी राष्ट्रीयता पर एकदेशीयता या संकुचित दृष्टिकोण का दोषारोपण करना वास्तव में अन्याय ही होगा। उल्लूर का 'उमाकेरलम्' एक प्रसिद्ध महाकाव्य है और उसमें कैरली-संस्कृति एवं केरलीय जनता की आशा-निराशा एवं हृदयगत भावनाओं को कवि ने सुन्दर एवं अर्थमय।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शब्दों में अभिव्यक्त किया है कि वे अपने 'उज्ज्वल शब्दाढ्यन्' की उपाधि को चरितार्थ करते हैं। केरल-माता उनकी आराध्य देवी है और उसके रूप-सौन्दर्य एवं महिमा की प्रशस्ति गाते वे अघाते नहीं :

नेटिय मलकिषक्कुम् नेरेषात्ताषि मेक्कुम्
वटिविलेळुकयायि तंचिटुं वंचिनाटे
अटियनितरियिक्कां अव्धि कांचियकु नीये
मुटि नटुविल् विळङ्ङुं मुख्य माणिक्य रत्नम्।
परनृपरेयशेषं निन् पितावाय
साक्षाल् परशुधर मुनीन्द्रन् वेन्नपोलेन्न पोले
परमिवर परिपालिप्पोरु राज्यतेयेल्लाम्
परम सुषमयाळुं नीयुमम्मे जयिपू।

(पूर्व में पर्वत तथा पश्चिम में सागर के बीच में स्थित हे केरल जननी तुम सागर की कांति बढ़ाती मरकत मणि हो। जैसे तुम्हारे पिता परशुमुनि ने दूसरे राजाओं को पराजित कर तुम्हारी शोभा बढ़ायी, वैसे उनसे शासित इस राज्य को तुम विजयी बनाओ। यह ध्यान रखना चाहिए कि केरल की उत्पत्ति के संबंध में प्रचलित किंवदन्तियों में से एक के अनुसार परशुराम ने इस भूभाग की सृष्टि की है, और फलत: उसको 'परशुराम क्षेत्र' भी कहा जाता है।)

किन्तु उल्लूर की राष्ट्रीयता केरल की चहार दीवारी के भीतर आबद्ध नहीं रही, समस्त भारत को अपनी जन्मभूमि मानते हुए उसके महार्घ संदेश 'तत्वमसि' 'सर्वंखल्विदं ब्रह्म' का अनुस्मरण करते हुए कवि का उद्घोष है—

तत्वमस्यादिम वाक्य रत्न महाखने मामक जन्मभूवे
निनकुपण्टे परदैवमल्ली गिरीशने पोले पयोधिशायी।
कुन्नेतु निन्निल् कुषियेतु पार्ताल् सर्व परब्रह्ममयं सवित्री

'जननि जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' के आर्षमंत्र से भी एक कदम आगे बढ़कर मलयालम के कवि उल्लूर भारतभूमि को परब्रह्म स्वरूपिणी मानते हैं क्योंकि उसमें निम्नोन्नतत्व जो है वह भी ईश्वर स्वरूप ही है। उन्नत हिमालय गिरीश शंकर का स्वरूप है तो निम्नतम पयोधि क्षीरसागरशायी विष्णु का स्वरूप ही है, इस प्रकार जन्म-भूमि के विराट् स्वरूप की कल्पना करके उसके प्रति श्रद्धा-स्तवक अर्पित करने वाले उल्लूर महाकवि की राष्ट्रीय भावना असंदिग्ध है।

उल्लूर के बाद हमारी दृष्टि कुमारन् आशान् पर पड़ती है। स्वयं ही पिछड़ी जाति में पैदा होकर अभिजात्य जाति की प्रताडनाओं से पीड़ित इस महाकवि की राष्ट्रीय भावना सुधारवादी एवं मानवतावादी दृष्टिकोण को लेकर प्रस्फुटित हुई है। स्वयं ही अस्पृश्य कुल में पैदा हुए इस महाकवि की हृदयवीणा सामाजिक कुरीतियों के आघात से झंकृत हुई तो उससे जो स्वर-साधना हुई वह सामाजिक कुरीतियों, रूढ़ियों,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परम्पराओं को तोड़ने में अत्यन्त सफल हुई। 'चण्डाल भिक्षुकी' खण्डकाव्य में छुआछूत की अंध-परम्परा पर आक्रोश प्रकट किया गया है और यहाँ तक कि वर्णाश्रम-व्यवस्था के प्रतिष्ठाता मनुमहाराज पर भी व्यंग्य के छींटे कसे हैं। उनका कहना है कि पिछले दिन की भूल आज का आचार-व्यवहार बन जाती है और वही कल शास्त्रसम्मत भी बन सकती है—

इन्नले चेय्तोरबधं मर्त्य किन्नत्ते आचारमाकां
नालत्ते शास्त्रमताकां अतिल् मूळाय्क सम्मतं राजन्।

यही नहीं कवि की चेतावनी है कि मिथ्याबोध से बनी शास्त्रीय विधियों को बदल दो, अन्यथा वे ही विधियाँ तुमको बदल देंगी।

"माट्टुविन् चट्टंगलें, स्वयं अल्लंक्किल् माट्टुं अतुकळी निङ्ङले तन्नतान्"

'चण्डालभिक्षुकी' में कवि ने यह दिखाया है कि एक उच्च वर्णीय भिक्षु एक नीच जाति की बालिका के हाथों पानी पीकर अपनी प्यास बुझाता है। संभवतः कुमारन् आशान् के प्रयासों के फलस्वरूप ही ट्रावन्कूर समस्त भारत में प्रथम देश है जिसने कानून बनकर छुआछूत को अवैध घोषित किया तथा चिरकाल से वंद मंदिरों के द्वार अस्पृश्यों की उपासना के लिए खोल दिये। आशान् ने 'करुणा' खण्डकाव्य में वेश्यावृत्ति की सामाजिक कुरीति का पर्दाफाश किया और वासवदत्ता की कहानी प्रस्तुत कर महिलाओं को इस कुरीति से बचने तथा अपने चारित्र्य की अमूल्य निधि की सुरक्षा करने केलिए सचेत किया। 'ओरु सिंह प्रसवम्' में आशान् ने यह दिखाया है कि हिंस्र जानवर में भी अपनी संतान के प्रति अपार प्रेम है। साथ ही प्रतीकात्मक-शैली में भारत की परतंत्रता पर प्रकाश डालकर यह स्पष्ट कर दिया है कि सरकार की छत्रछाया में सानंद जीवन बिताने वालों को भी परतंत्रता दुखात्मक है। कवि ने चण्डाल भिक्षुकी में प्रेम की महत्ता घोषित करते हुए बताया है कि संसार प्रेम से उत्पन्न है और प्रेम में उसकी उन्नति होती है। यह प्रेम संसार की शक्ति है और आनंद है। प्रेम ही जीवन है और प्रेम का अन्त ही मृत्यु है। नरक रूपी द्वीप में स्वर्गीय प्रासाद का निर्माण करने वाला यही प्रेम है। इस प्रकार प्रेम की महिमा का प्रतिपादन करते हुए आशान् ने जनता को परस्पर प्रेममय जीवन बिताने का संदेश दिया।

यह कितने दुख की बात है केरल के अधिकांश आलोचक कुमारन् आशान् की कविताओं में जातीय एवं सांप्रदायिक संकुचित मनोभावना के ही दर्शन कर सके हैं। यह उनके साथ बड़ा अन्याय है। मुसलमानी शासनकाल में पीड़ित एवं निराश्रित हिन्दू-जनता की आशा-आकांक्षा को वाणी देनेवाले भूषण कवि अगर हिन्दी के राष्ट्रीय कवि हो सकते है तो निम्न जाति की आशा-आकांक्षा तथा अधिकारों को वाणी देने वाले आशान् की राष्ट्रीय-भावना के प्रति शंका करने की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि केरल में उच्चवर्णीय जनता कम थी और निम्न जाति की जनता अधिक थी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और देश की सामान्य जनता की कोटि में वही निम्नवर्गीय जनता आती थी। यही नहीं है, अस्पृश्यता, वेश्या-वृत्ति आदि सामाजिक कुरीतियाँ केवल केरल तक सीमित नहीं, वे राष्ट्रीय समस्याएँ हैं और उनका उच्चाटन करने के लिए प्रयत्नशील कवि जातीय कवि न होकर अवश्य ही राष्ट्रीय कवि बन जाते हैं।

भारतीय प्रकृति के वे गायक-कवि हैं और दक्षिणापथ की प्राकृतिक छटा पर विमुग्ध उनकी कवि-दृष्टि राजस्थान की मरुभूमि से दूर स्थित दक्षिणापथ, मेघाम्बर-धारी विंध्याचल, महाटवी, हरिताभ-संकुल सानुप्रदेश तथा पार्श्व से सस्वर बहती सागरोन्मुखी रेवा नदी आदि का भी अवलोकन करती है। इस प्रकार भारतीय प्रकृति एवं भारतीय जनता के कवि आशान् राष्ट्रीय कवि सिद्ध होते हैं।

वल्लत्तोल नारायण मेनन केरल के राष्ट्रीय कवि थे और कैरली-साहित्य में उनका वही स्थान है जो कि हिन्दी साहित्य में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त का या तमिल वाङ्मय में सुब्रह्मण्य भारती का है। वे राष्ट्रीय भावना के साकार स्वरूप थे। अखण्ड भारत एवं परम्परागत राष्ट्रीय संस्कृति से प्रेरित उनकी कविताएँ भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम के दिनों में समस्त केरल प्रान्त में गुंजित हो उठी हैं। उन्होंने स्वयं लिखा है कि हे कविते, स्वाभिमानी सिपाहियों की कौंधती तलवारों की चमक में, मानिनी के विशाल नयनों के कटाक्षों में, सानंद लीलारत शिशु के कोमल कपोलों में मैं तुम्हारे मंजुल स्वरूप का दर्शन करता हूँ।

मानं चेर्न्न भटन्टे मिन्नल् चितरुं कैवाळिळक्कत्तिलुम्
मानं चेन्मिषि तन् मनोरमणत्तिल् चायुन्न कण्कोणिलुम्
सानंदं कलियाटिटुन्न शिशुविन् तूवेरप्पणि पूंकविळिन्
स्थलत्तुं निषलिच्चु काण्मू कविते, निन् मंजु रूपत्ते ञान्।

कहने का मतलब यह है कि वल्लत्तोल ने जहाँ वात्सल्य और शृंगार का सजीव वर्णन किया है, वहाँ भारत राष्ट्र की स्वतंत्रता केलिए कमर कसकर स्वतंत्रता-युद्ध में भाग लेते भारतीय सेनानियों की वीरता, साहस एवं स्वाभिमान भी उनकी कविताओं का विषय रहा है। महात्मा गांधी के अहिंसा-आन्दोलन को वाणी देनेवाले वल्लत्तोल राष्ट्रीय कवि थे। उनकी कविता में स्वदेश की स्वतंत्रता केलिए लड़ने का आह्वान है तो भारत के आर्षवैभव का अनुस्मरण करने का संदेश है और भारत की प्राकृतिक सुषमा को नयनों में बसाने तथा उसकी मिट्टी से प्रेम करने का उद्घोष है।

वल्लत्तोल भारतीय आर्ष संस्कृति से अनुप्राणित थे और उस संस्कृति के विगत वैभव को पुनः देखने केलिए उत्सुक थे। उस संस्कृति के प्रति जनता का आकर्षण बढ़ जाए, यही सोचकर उन्होंने अपनी रचनाओं केलिए विषय रामायण, महाभारत जैसी आर्ष रचनाओं से ग्रहण किये। ऋग्वेद की महिमा से प्रभावित हो महाकवि ने एक विस्तृत भूमिका सहित उसका मलयालम में अनुवाद किया। भारत राष्ट्र, भारतीय संस्कृति, भारतीय महापुरुष, भारतीय पवित्र नदियाँ सब पर उनकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चिर श्रद्धा और आस्था की भावना प्रकट हुई है। कभी कवि की सूक्ष्म अन्तः भेदिनी दृष्टि भारतवर्ष के प्राचीन मनीषियों की गौरवगाथा पर केन्द्रित होती है और उनको संसार की आधारशिला के अन्वेषक सिद्ध करता है तो कभी उसका वैष्णव व्यक्तित्व त्रेतायुग के श्रीमिथिलापुर की तीर्थयात्रा कर आता है। 'भारत वर्षत्तिले पूर्वरामृषीन्द्रन्मार् पारिनुल्लटिकल्लु पार्त्तुकण्डरिञ्ञवर' तथा 'त्रेतायुगत्तिले श्रीमिथिला-पुरम् भ्राताक्कन्मारिता मुन्निल् काण्मु' जैसी पंक्तियों में भारतीय संस्कृति पर कवि की चिर आस्था ही प्रकट होती है। साहित्य-मंजरी में संगृहीत 'एन्टे गुरुनाथन्' (मेरे आचार्य) कविता उनकी राष्ट्रीयता का मकुटोदाहरण है। गाँधीजी उनके आचार्य हैं और वे बुद्धदेव के अहिंसावाद, शंकराचार्य की कर्मनिष्ठा, रंतिदेव की दया भावना, ईसामसीह के त्याग तथा भगवान् कृष्ण के ज्ञानोपदेश की समन्वित ज्योति हैं। आगे कवि की यह मान्यता है कि केवल गंगा की पावन जलधारा से सिंचित तथा गीता की जननी भारतभूमि में ही ऐसे मंगलमय कल्पपादप का अवतार हो सकता है—

गंगयारोषुकुन्न नाट्टिले शरिक्कित्र
मंगलं काय्कुं कल्पपादपमुंडाय्वरु।

मिथिलापुरी के राजोपवन में विहार निरता उद्यान देवी जैसी विदेहजा, साधु शील विवेकानन्द के कर्ममय सिद्धान्त, कर्मभूमि भारत के शक्तिसंपन्न नादान शिशुओं के चरणारविन्द, ब्रह्माण्डहर्म्य के सृष्टिकर्ता परमात्मा, सावित्री की दृढ़चित्तता, किसी निगूढ़ाश्रम में तपस्यालीन दीनस्नेही शिवि, तथा चारित्र्य को अमूल्य संपत्ति समझने वाली भारतीय स्त्री—ये सब कवि का ध्यान आकृष्ट करते हैं और सबकी महिमा से ओतप्रोत भारतभूमि के प्रति वे श्रद्धावनत हैं। वैसे ही केरल में जन्मे तथा केरल की सुषमा से मंडित उनका हृदय हरीतिमा की चादर बिछाये, सह्याद्रि का उपधान तथा सागर का पादोपधान बनाये लेटी केरल माता तथा पश्चिमांबर पर लगायी उसके सुषमामय उद्यानों को देखकर भक्तिविह्वलता की चरमसीमा में पहुँच जाता है और कवि केरल माता की काव्य-प्रसूनों से श्रद्धायुक्त पूजा-अर्चना करके अपने को भी पवित्र बनाने का संकल्प रखता है। वल्लत्तोल की राष्ट्रीय भावना समन्वय पर अवस्थित है। सभी धर्मों, सभी संप्रदायों को एकता के सूत्र में पिरोकर ले चलने की उनकी अभिलाषा है। यही कारण है कि गीता, कुरान तथा बाइबिल, राम ईसा तथा मोहम्मद; हिन्दूत्व, ईसाइयत और मुसलमानियत सब उसकी दृष्टि में एक हैं। यही धार्मिक उदारता, संतुलन की चेष्टा उसकी राष्ट्रीयता का आधार है।

सहसा हमारा ध्यान भारतीय ज्ञानपीठ से पुरस्कृत महाकवि जी. शंकर कुरुप की साहिती सेवा पर केन्द्रित होता है जिन्होंने अन्तर्दाहम्, चेंकतिरुकळ्, नवातिथि, इतळुकळ्, सूर्यकान्ति, पूजापुष्पं, निमिषं, विश्वदर्शनम्, ओटकुष़ल् जैसी तीस से अधिक कृतियों का सृजन किया है। जी. शंकर कुरुप रहस्यवादी एवं प्रतीकवादी कवि हैं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और भारत की प्राचीन संस्कृति-गरिमा से वे ओत-प्रोत हैं। भारतीय असहयोग-आन्दोलन एवं गांधीजी के सत्याग्रह-आन्दोलन से प्रभावित होकर भारतीय राष्ट्रीय भावना की जो लहर वल्लत्तोल ने दौड़ायी थी उससे प्रभावित कवियों में महाकवि जी. अग्रगण्य हैं और उनकी काव्य-रचना का उषाकाल भी वही सत्याग्रह-आन्दोलन तथा राजनैतिक उथल-पुथल का समय था। गांधीजी के परमभक्त महाकवि जी ने उन दिनों में जो 'साहित्य कौतुक' पुस्तक लिखी उसमें गांधी के अहिंसा-सिद्धान्त को 'स्वर्णिम रथ' की संज्ञा दी है तो 'वनगायकन्' कविता-संग्रह को अन्तिम दो रचनाएँ इंगिनेविरच्चालो' (ऐसा कांपे तो) तथा 'वंदनम् सुभाषचन्द्र' राष्ट्रीय कविताएँ हैं। उन दिनों की उनकी कविताएँ राष्ट्रीयता एवं देश-प्रेम की भावना से परिपूर्ण हैं तथा केरल के नवयुवकों की नस-नस में उष्ण रक्त का संचार करने में अतीव शक्तिमयी मंत्र सिद्ध हुई। वैसे ही महायुद्ध के समय विदेशों में जाकर अपने रक्त को बहाने वाले भारतीय वीर सेनानियों पर श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए लिखी हुई उनकी 'रक्तबिंदु' कविता चेंकनिरुकळ् (स्वर्ण-रश्मियाँ) में संगृहीत है। उसमें कहा गया है कि युद्ध व्यामोही न होते हुए भी लोक-कल्याण केलिए धर्म की पुकार सुनकर गीता के देश के ये वीर सैनिक सागर पार विदेशों में अपना जीवन-यज्ञ कर रहे हैं और कवि की कामना है कि इन भारतीय वीरों के बलिदानों से विश्वशान्ति संभव होगी।

केरल और भारत के नाम सुनते ही महाकवि जी गर्वान्वित होते हैं और भारत के वेदों, उपनिषदों के तत्वचिन्तन को वे मानवमात्र केलिए प्राणवायु मानते हैं। उनकी खिल्ली उड़ानेवाले मूर्खों पर उनका क्रोधावेश फूत्कार उठता है। उनके कुछ राष्ट्रीय गीत केरल से संबंधित हैं, तो कुछ भारत से और शेष गांधी-स्तोत्र रूप में प्राप्त हैं। उनमें प्राकृतिक सुषमा से अभिमंडित सांस्कृतिक वैभव से परिपूर्ण राष्ट्रीयगान भी हैं। 'तिरुनावा' तथा 'अषिमुखत्तु' इन दोनों कविताओं में 'वीर केरल' के सांस्कृतिक वैभव का विस्मरण कर आज दूसरों की चरण-धूलि पोंछनेवाले केरलीयों की हीनावस्था पर कवि की हार्दिक वेदना प्रकट हुई है। 'वन्दनं परयुक' कविता में भारतीय स्वतंत्रता-प्राप्ति पर आनंदित कवि-हृदय के मंजुल उद्‌गार हैं और कवि की कामना है कि हिमवान्, विंध्य, मलयपर्वत हमारे राष्ट्रीय ध्वज को देखकर पुलकित होंगे—

उन्मुखं हिमवानुं विंध्यनुं मलयनुं
नम्मुटे पताकयुल् पुलकं दर्शिक्कट्टे।

जी के गांधी-स्तोत्रों में गंभीरता है। जन्मर्ष जयिक्कुन्नु, वन्दनं तथागत, 'भारतेन्दु' आदि गीतों में जीवन के धार्मिक मूल्यों पर बल देनेवाले एक मानव-प्रेमी के मधुर उद्‌गार लहराते दिखाई देंगे। उनकी राष्ट्रीयता में धर्मों-संप्रदायों केलिए स्थान नहीं है। वे कहा करते थे कि एक भले हिन्दू या एक भले मुसलमान या एक भले ईसाई

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

से श्रेष्ठ है एक भला मानव बनकर रहना। गांधीजी मानव-रूप में पैदा हुए, मानव-रूप में उन्होंने जीवन बिताया और मानव-रूप में उनकी मृत्यु हुई।

महाकवि जी राष्ट्रीयतावादी से आगे बढ़कर अपनी विचारसरणी से विश्व-मानवतावादी हैं। मनुष्य को राष्ट्रों, वर्गों, जातियों, भाषाओं में विभाजित करनेवाली कृत्रिम खाइयों को तोड़कर एक लोकराष्ट्र और विश्वमानव की वे कल्पना करते हैं। साम्राज्यवादी निष्ठुर हिंसावृत्ति की वे कटुशब्दों में भर्त्सना करते हैं और मनुष्य को मानवप्रेमी बनकर रहने का सन्देश देते हैं। यहाँ आकर उनकी राष्ट्रीयता विश्व-मानवतावाद में परिणत हो जाती है। चीन तथा इन्दोनेशिया को संदेश देती हुई उनकी दो कविताएँ इसी विश्वमानवतावाद का शिलान्यास करती हैं। हाँ, कभी-कभी एशिया की प्रबुद्धता की ध्वनियाँ भी गूंज उठती हैं जब वे कहते हैं कि किसी से बिना भयभीत हुए तथा किसी को बिना भयभीत किये, प्राची अपना मस्तक उठा रही है।

प्रेम तथा सौन्दर्य के मादक गीतों से केरलीय जनता के हृदय में शाश्वत प्रतिष्ठा प्राप्त महाकवि चंगम्पुषा कृष्ण पिल्लै को इस प्रसंग में विस्मृत नहीं कर सकते। उनकी रचनाओं में प्रसाद जी की सी भावना एवं कल्पना, पंत जी का-सा काव्य-सौन्दर्य, निराला का-सा दार्शनिक विचार एवं क्रान्ति-संदेश तथा महादेवी का-सा दुखवाद तथा बच्चन का-सा हालावादी भाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। श्री चंगम्पुषा वैविध्यों के साकार स्वरूप हैं। वे गान-गंधर्व हैं जिन्होंने सरस गेय शैली से कैरली का अभिषेक किया। उनकी राष्ट्रीयता मानवतावाद की दृढ़ भित्ति पर आधारित है। गांधीजी के सिद्धान्तों का कविता-रस पूरित राग-विशेष ही श्री चंगुम्पुषा हैं। 'सर्वे सन्तु सुखामयाः' का जो भारतीय आदर्श है, वही राष्ट्रीयता का आधार है। 'प्राचीन शिवि तथा रन्तिदेव' अनेकानेक 'कर्मवीरों की जननी कर्मभूमि' आदि ने उनकी राष्ट्रीय भावना को उत्तेजित किया है। किन्तु उनकी मानसिक कल्पना के प्रतिकूल सामाजिक परिस्थितियों ने उनको क्रान्तिकारी बना दिया तथा वे मानव-जीवन-विकास में बाधक सामाजिक बंधनों को तोड़ने केलिए प्रयत्नशील हुए और जनता को कुरीतियों का सामना करने का सन्देश दिया। वे एक पीढ़ी के तमाम स्वप्नों को रूप देनेवाले कवि हैं। उसके लिए उनको कभी साम्यवादी बनना पड़ा, कभी फासिस्ट, कभी शून्यवादी, कभी अराजकवादी, इस प्रकार वे कई जामे पहने हमारे सम्मुख आते हैं। सहानुभूति से उद्भूत सामाजिक बोध उनकी कविता का प्रेरणासूत्र रहा है। इस प्रसंग में उनकी 'वाषकुला' कविता स्मरण आती है। इस कविता ने जनता पर जो प्रभाव डाला है, शायद ही उतना प्रभाव किसी अन्य कवि की कविता ने डाला होगा। इसका उद्देश्य जमीन्दारी प्रथा पर कुठाराघात करना है और कवि की चेतावनी है कि भावी पीढ़ी इस अनाचार एवं अत्याचार का बदला अवश्य लेगी—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इतिनोक्के प्रतिकारं चेय्यातटङ्गुमो
पतितरे निङ्ङल् तन् पिन्मुरक्कार ।

स्वतंत्रता-संग्राम के दिनों में भारत के इतर भाषा-भाषी कवियों के समान केरलीय जनता के कानों में पी. भास्करन के राष्ट्रीय गीतों ने शंखध्वनि बजायी और जनता में नवोन्मेष एवं जागृति पैदा करने में वे सफल हुए । उनके 'नवकाहळ्' में संगृहीत विजयगान, आह्वान, नम्मुटे भारतं, 'मुन्नोट्टु' में अंग्रेज़ी साम्राज्य-तृष्णा की कटुनिन्दा तथा स्वतंत्रता केलिए लड़ने तथा जेल जाने का आह्वान है । पराधीनता की जंजीर तोड़ने तथा मर्दक शासकों के विरुद्ध कतार में वीर सेना तैयार करने का सन्देश है । उनका 'पताका गान' अत्यन्त प्रेरणात्मक रहा है । वैसे ही आर्ष भारत के वैभवों का यशोगान करता उनका 'नम्मुटे भारतं' गीत भी अत्यन्त प्रसिद्ध है जो प्रयाणगीत की तान पर रचित है । उसमें भारतीयों को भेद-भाव छोड़कर एकात्म-भाव से देश केलिए तथा देश की ध्वजा केलिए मर मिटने का आह्वान भरा सन्देश है । हिन्दू, ईसाई, मुसलमान सब भारतीय संतानें हैं और परस्पर भ्राता हैं, हम आर्षभूमि में पैदा हुए हैं और यहाँ हथकड़ी-बेड़ी पहने रहना अपमान की बात है । वैसे ही देश की दु:स्थिति, निर्धनता, ज़मींदारी प्रथा पर भी उनका क्षोभ प्रकट हुआ है और उन सब के प्रतिकार केलिए क्रान्ति मचाने का आग्रह है । उन्होंने किसानों, मज़दूरों को संगठित होने का संदेश दिया है और उनके सामने एक नवीन मोहक संसार का चित्र भी प्रस्तुत किया है । एक प्रजातांत्रिक शासन की कामना तथा मज़दूरों के खून के पसीने पर जीते ज़मीनदारी वर्ग के प्रति विरोध उनकी कविता में प्रकट है । वे पूछते हैं "चतुर अंग्रेज़ हँसते-हंसते सानंद जीवन बिता रहे हैं और भारत-माता हृदयभेदी स्वरों में विलाप कर रही है । क्या इसको देखते हुए हम परतंत्रता के अंधेरे में रहेंगे ?"

वर्तमान कवियों में ओ. एन. वी. कुरुप, वयलार रामवर्मा, पी. भास्करन, बालामणियम्मा, वेण्णिकुलम् गोपाल कुरुप, सुगतकुमारी आदि की कविताओं में राष्ट्रीयता के स्वर मुखरित हो उठे हैं । इनमें से अधिकांश की राष्ट्रीयता किसी न किसी राजनैतिकवाद से प्रभावित है । फिर भी राष्ट्रीय संकट जैसे भारत पर चीनी आक्रमण, भारत-पाकिस्तान के आक्रमण के समय अपने वादों को भुलाकर सभी एकमत हो एक वाणी में भारत का यशोगान करने तथा भारत के विगत वैभव के चित्र जनता के सामने प्रस्तुत कर उसको स्वतंत्रता केलिए सर्वत्याग की भावना जनता के मन में उत्पन्न करने का स्तुत्य प्रयास किया है और उन राष्ट्रीय गीतों का विशेष महत्व है । उपर्युक्त कवियों में पी. भास्करन का राष्ट्रवादी कवियों में विशेष स्थान है ।

पच्चीस मार्च को पश्चिमी पाकिस्तान के सैनिक शासन ने पूर्वी बंगाल पर अन्याय एवं अत्याचारपूर्ण आक्रमण आरंभ किया और वहाँ पर जो नृशंस क्रूर कृत्य

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हुए, वे इतने पाशविक हैं कि ऐसी नरहत्या एवं निष्ठुरता का उदाहरण विश्व के इतिहास में नहीं मिलेगा। इससे भारत में बड़ी संख्या में शरणार्थी आये और उनकी सुरक्षा तथा भोजन और आवास की व्यवस्था का भार भारत पर पड़ा। वैसे ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से भी पूर्वी बंगाल हमसे अभिन्न हैं। अतः पूर्वी बंगाल की इस विकट परिस्थिति से अवगत कराने तथा उसके समाधान में उठाये गये भारत के प्रयत्नों में प्रत्येक भारतवासी का सहयोग एवं सद्भावना पैदा करने केलिए विभिन्न भाषा-भाषी भारतीय कवियों ने कविताएँ लिखीं और केरल के भी कुछ कवियों ने इस प्रसंग में अपना दायित्व निभाया। अतः ऐसी कविताओं को भी राष्ट्रीय भावना से युक्त माना जा सकता है। एन. वी. कृष्ण वारियर, वैलोप्पिल्लिल् श्रीधर मेनन, सुगतकुमारी जैसे कवियों की लेखनी से निसृत बंगलादेश पर कविताएँ सामयिक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहीं। सुगतकुमारी की 'स्वर्णाभियां बंगभूमि' में लेखिका की बंगभूमि के प्रति आत्मीयता, वहाँ की हरिताम्रवनों, और तालवनों की छटा, वहाँ के सांस्कृतिक जीवन का अनुस्मरण, टागोर भवन का यशोगान तथा वर्तमान में अपनी संतानों के मृत या आहत होने तथा वीरान होने पर हताश सलज्ज नम्रमुखी प्रेततुल्य बंगमाता का कारुणिक दृश्य द्रष्टव्य है।

एन. वी. कृष्ण वारियर की 'बंगला देश' कविता शोकात्मक एवं वीभत्सात्मक रुण्ड-मुण्डों से भरे बंगदेश की एक झाँकी प्रस्तुत करती है। वैलोप्पिल्ली की 'बंगला-देश' कविता अत्यन्त बिम्बात्मक है। उन्होंने यह दिखाया है कि बंगलादेश पाकिस्तान में अनिच्छापूर्वक जन्मी शिशु है और वह क्रूर माता अपने लौह करों से उसका गला दबाकर हमारे देखते हमारी सीमा में फेंक देना चाहती है। किन्तु हमारे समझाने पर कि उस नादान शिशु पर क्षमा करो, अमर्ष से उसका गला दबाती उस माता की निष्ठुरता का वर्णन पर्याप्त प्रभावकारी है। इस प्रकार वयलोप्पिल्ली ने पाकिस्तान की क्रूरता, बंगलादेश की विवशता तथा भारत की नाजुक परिस्थिति के अच्छे चित्र अपनी कविता में अंकित किये हैं।

आधुनिक मलयालम कविता राष्ट्रीयता की भावना से समृद्ध है। कैरली साहित्यकार अपने देश एवं संस्कृति के प्रति आस्थावान एवं सजग हैं। यहाँ के कवियों ने देश की एकता, जनता की पारस्परिक मैत्री तथा वर्गों-जातियों का उच्चाटन कर सर्वधर्म-समन्वय की आवश्यकता पर बल दिया है। साथ ही सामाजिक परिस्थितियों का दिग्दर्शन कराकर जनता को उद्बोध भी दिया गया है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मलयालम में हास्य-व्यंग्य-लेखन और सुकुमारन्

सात्विक भाव एवं सदाचार निष्ठा के स्रोत से ही स्नेहसम्पन्न तथा सोद्देश्य व्यंग्य-साहित्य की उत्पत्ति होती है। अधर्म एवं असत्य के प्रति द्वेष एवं घृणा हास्य-व्यंग्यमयी शैली में जब प्रकट होती है, तब वह सामान्य जनता को सोचने केलिए विवश कर देती है। शताब्दियों से सामाजिक एवं धार्मिक स्तर पर प्रचलित अधर्म तथा अत्याचार का पोल-खोल कर जनता की आँखें खोलने वाले समर्थ हास्य-व्यंग्य लेखक हास्य-व्यंग्य की आंतरिक सत्ता तथा उसके उद्देश्यों से परिचित हैं। सच्चा हास्य-व्यंग्य जहाँ पाठक या श्रोता को हँसाता है, वहाँ उसे सोचने केलिए भी बाध्य कर देता है। व्यंग्य केवल शब्द-प्रयोग पर निर्भर नहीं, किन्तु प्रासंगिकता, औचित्य दीक्षा तथा शब्दों के नूतन प्रयोग में व्यंग्य की सप्राणता निहित है। हास्य-व्यंग्य में शब्दों के वाच्यार्थ की अपेक्षा व्यंग्यार्थ में उसका सौन्दर्य झलकता है। श्लेष, वक्रोक्ति, गूढ़ोक्ति, व्याजोक्ति, विरोधोक्ति, अतिशयोक्ति आदि अचूक व्यंग्य के उपस्कारक अंग हैं और इनके माध्यम से अभिव्यक्त व्यंग्य सहृदय-हृदय में चिर प्रतिष्ठा प्राप्त करता है। अतः व्यंग्य के रसभोक्ता रसिक लोग होते हैं। व्यंग्य-लेखक जहाँ हमारे मन को गुद-गुदाता है, वहाँ हमारी बुद्धि को भी उत्तेजित करता है। अतः सहृदयत्व, बुद्धिगत संस्कार, रसास्वादन की क्षमता—ये सब हास्य-व्यंग्य की आधार शिलाएँ हैं और ऐसा हास्य-व्यंग्य जीवन एवं साहित्य में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने में सक्षम प्रमाणित होता है।

मलयालम-साहित्य में हास्य-व्यंग्य का श्रीगणेश कब हुआ, यह तो असंदिग्ध रूप से नहीं बताया जा सकता है। अन्य भाषाओं की तुलना में मलयालम में व्यंग्य-लेखन का पूर्ण विकास हुआ है और व्यंग्य-लेखन की एक दीर्घकालीन परंपरा यहाँ देखने को मिलती है। इस व्यंग्य लेखन का आदिम स्रोत जगद्गुरु शंकराचार्य की रचनाओं में खोजा जा सकता है। पर आदिशंकर का यह व्यंग्य-लेखन देववाणी संस्कृत के माध्यम से निसृत हुआ। इसलिए उसे भले ही मलयालम व्यंग्य-साहित्य न भी कहे, तो भी इतना तो स्वीकार करना ही होगा कि केरल की मिट्टी में जन्मे शंकर के व्यंग्य में केरल का संस्कार अवश्य प्रतिबिंबित होता है। मलयालम व्यंग्य-लेखन का सुसंस्कृत एवं सुदृढ़ रूप संभवत: मणि-प्रवाल शैली के प्रादुर्भाव के साथ आरंभ होता है तथा 'चाक्यार कूतु' (चाक्यार जाति का नृत्यगान) में अंकुरित यह व्यंग्य तोलकवि, चन्द्रोदयकर्ता, चम्पूकवि, कृष्णगाथाकार, एषुत्तच्छन्, कुंचन् नंपियार, वेण्मणि कवि आदि में पल्लवित होता हुआ वर्तमान साहित्यकारों में पुष्पित हुआ है। आधुनिक लेखकों ने उसे नूतन भाव एवं नयी शैली प्रदान की। संजयन्, ई. वी. कृष्णपिल्लै, मलबार सुकुमारन्, राजराज वर्मा, सीता रामन्, आनंदकुट्टन्, कृष्णन कुट्टि तथा विक्रमन् व्यंग्य-साहित्य के स्वर्णिम युग के प्रतीक हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मलयालम साहित्य का प्रारंभिक व्यंग्य रूप 'चाक्यार कूत्तु' में प्राप्त होता है। सामान्य जनता को हास्य-व्यंग्य के सागर में निमज्जित करना उसका लक्ष्य रहा। इस 'चाक्यार कूत्तु' नामक नृत्य-विधा में केरल में प्रचलित सामाजिक रूढ़ियों, कुप्रथाओं, अंधपरंपरा के ब्राह्मणों और उनके दकियानूसी विचारों का पर्दाफाश करते हुए उनपर करारा व्यंग्य कसा जाता था, जिसे सुनकर श्रोता लोग हँसते-हँसते लोट-पोट हुआ करते थे। मूर्ख मांत्रिकों तथा देवदासियों पर आसक्त ब्राह्मणों पर गूढ़ोक्तियाँ पैनी छुरी सिद्ध होती थीं। उन दिनों 'चाक्यार कूत्तु' नृत्य के अभिनेता चाक्यार लोगों को किसी पर भी अपने व्यंग्य-बाण चलाने की पूरी छूट थी। 'चाक्यार कूत्तु' में हास्य-व्यंग्य प्रासंगिक एवं क्षणिक होता था। नायक के श्लोक के उत्तर में विदूषक के श्लोक बहुत व्यंग्यपूर्ण होते थे। चाक्यार तथा नंग्यार के संयुक्त 'कूत्तु' में प्रेक्षकों को हँसाने की प्रभूत सामग्री प्रस्तुत थी। चाक्यार के हाथ में पड़कर छोटी से छोटी घटना तक हास्यात्मक रूप में निसृत होती थी। यही कारण है, आज भी हास्य-व्यंग्य साहित्य में 'चाक्यार कूत्तू' को सर्वश्रेष्ठ-स्थान प्रदान किया जाता है।

मलयालम साहित्य के मध्यकाल में तोलकवि हास्य-व्यंग्य लेखकों में अग्रणी थे। लेकिन आज भी तोलकवि के संबंध में हमारी पूर्ण जानकारी संभव नहीं हुई है। मलयालम-साहित्य के प्रकांड विद्वान् समीक्षक कुञ्ञिकुट्टन तम्पुरान् का मत है कि तोलकवि का वास्तविक नाम नीलकंठ था। वे व्यंग्य-लेखकों में शीर्षस्थ थे। यमक, अपूर्व शब्द-प्रयोग तथा अर्थ की विवक्षा किये बिना व्यंग्य का प्रयोग उनकी विशेषताएँ थीं। एक ही आशय को ठेठ मलयालम तथा ठेठ संस्कृत में व्यंग्यात्मक शैली में प्रस्तुत करने की उनकी असाधारण क्षमता थी। मलयालम-व्यंग्यकारों में सर्वश्रेष्ठ कुंचन नंपियार के वे पथ-प्रदर्शक थे।

तोलकवि के उपरांत व्यंग्य-साहित्य में चंपूकवियों का स्थान रहा। सामाजिक व्यवस्था पर व्यंग्य करते हुए उनकी कटु उक्तियाँ प्रकट हुई थीं। किन्तु चंपू-काव्यों की निन्दा में लिखा गया 'भरत वाक्य' नामक ग्रंथ का इस प्रसंग में विशेष स्थान रहा। समाज में प्रचलित वेश्यावृत्ति का अनुमोदन करने वाले कवियों को उसने सावधान कर दिया। इस अभिनयात्मक रचना के व्यंग्य प्रेम तथा कामिनी के इर्दगिर्द घूम आते नंपूतिरी कवियों पर केन्द्रित हैं। मलयालम के ये चम्पू-काव्य हास्य-व्यंग्य की दृष्टि में अपना महनीय स्थान रखते हैं। इनमें कई व्यंग्यात्मक प्रसंग हैं। पूनम् कवि की चम्पूरामायण तथा मषमंगलम् का नैषध काव्य हमारी आँखें खोल देता है तथा सामाजिक प्रथाओं की निरर्थकता पर हमें सोचने केलिए विवश कर देता है। 'कल्याण-सौगंधिक' में पत्नी के इंगित पर नाचते भीम का प्रसंग उठाकर स्त्रीलंपट पुरुषों पर हास्य-व्यंग्य के छींटे कसे गये हैं। 'नैषध' में दमयन्ती के स्वयंवर केलिए उपस्थित कामी तथा शृंगारी ब्राह्मणों की खूब खिल्ली उड़ायी गयी है। नंपूतिरी, ज्योतिषी तथा मांत्रिक को अपने व्यंग्यों का केन्द्र बनाया गया है। 'रामायण चम्पू'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

केवल हँसाता नहीं, वह सोचने की सामग्री भी प्रदान करता है। अनमेल विवाह पर कठोर प्रहार किये गये हैं। 'उण्णियाटि चरित' में शृंगारिक पद-रचना में दत्तचित 'मणि-प्रवाल' कवियों को आड़े हाथ लिया गया है। प्रसंगोचित व्यंग्य-हास्य केलिए नंपूरि कवि पर्याप्त सतर्क रहे, यह बात उनकी चंपू कविताओं तथा उनकी सुन्दर एवं शिष्ट शैलियों में प्रकट होती है।

'कृष्णगाथा' के रचयिता 'चेरुश्शेरी' भी अपने हास्य-व्यंग्य-लेखन केलिए पर्याप्त प्रसिद्ध हैं। श्रीकृष्ण की बाल-लीला प्रसंग में श्रीकृष्ण की शरारतों पर शिकायत करती गोपिकाओं की उक्तियों में हास्य-परिहास की मात्रा अधिक है। सुभद्रा तथा कपट तपस्वी अर्जुन पारस्परिक प्रेम की पराकाष्टा पर पहुँचकर अपनी सुध-बुध खो बैठते हैं। उनके चापल्य एवं करतूतों का प्रसंग सुनकर हँसते-हँसते पाठकों का दम घुटने लगता है। रस-भाव को सहृदय सामाजिक के मन में संचरित करते चेरुश्शेरी कवि की प्रसादपूर्ण रोचक शैली इतरसाधारण है। ऋतुवर्णन में उनकी चातुरी दर्शनीय है। चेरुश्शेरी का भाव-वैदग्ध्य, हास्य रसपूर्ण वर्णन-शैली तथा अक्लिष्ट पद-प्रयोग मलयालम व्यंग्य-साहित्य की अक्षयनिधि है।

मलयालम-साहित्य के सुरुचिपूर्ण व्यंग्यगीतकारों में कुंचन् नंपियार सर्वोपरि हैं। सत्रहवीं शती में 'तुळ्ळल्' नामक एक नवीन काव्यात्मक नृत्य-शैली का प्रादुर्भाव हुआ था जिसने व्यंग्य-साहित्य का आगे विकास किया। इस 'तुळ्ळल्' नृत्य शैली के उन्नायक कुंचन् नंपियार की मान्यता रही कि कविता पंडित एवं पामर जनता केलिए समान रूप से आकर्षक एवं रसात्मक हो। विद्वेष की कालिमा की अपेक्षा मित्रता की मुस्कान को उन्होंने महत्व दिया। सामाजिक कुरीतियों, अत्याचारों, अनीतियों तथा वर्ग-वर्ग की खाइयों का उन्मूलन करने केलिए उन्होंने अपने हास्यमय व्यंग्य का सदुपयोग किया। हास्य-व्यंग्य के जितने भी प्रकार संभव हैं, सब के एक से एक बढ़कर नमूने उनके काव्य में प्राप्त हैं। एक उदाहरण देखिए—

कोल भूपस्य नगरे, वासरा हरि वासराः
मशकैर्मक्कुणैश्चापि रात्रयः विवरात्रयः ॥

मर्मभेदी चुटकियाँ तथा सुरुचिपूर्ण गालियाँ देनेवालों में नंपियार सर्वोपरि हैं। 'कूत्तु' केलिए जैसे नाना प्रकार की वेष–सज्जा से युक्त हो चाक्यार लोग उपस्थित हुआ करते हैं, वैसे ही पांडवों की राजधानी इंद्रप्रस्थ के दर्शनार्थ वेष-भूषादि से सज्जित हो आते कौरवों का हास्यावह चित्रण नंपियार की तूलिका से निसृत हो पाठकों को खूब हँसा देता है। स्थल-जल विभ्रान्ति से पीड़ित हो कोई जलपूर्ण नदी में उछल पड़ता है, तो पानी की गहराई में पहुँचकर ऊब-डूब होने लगता है। किसी न किसी प्रकार से हाथ-पाँव मारकर हाँफता हुआ वह किनारे लग पाता है तो उस रास्ते से निकलते भीम और द्रौपदी का परिहासजनक प्रश्न है—"शृंगारिक सज्जा से युक्त हमारा मित्र गहरे नदी में डुबकियाँ लगाने लगा; भला, इस समय आप

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहाँ से आ रहे हैं ?" इसमें चलाये गये व्यंग्य के चोखे बाण केवल अनुभव-गम्य है।

'कल्याण सौगंधिकम्' नंपियार की बहुचर्चित रचना है। द्रौपदी की इच्छा-पूर्ति केलिए पुष्प की तलाश में भटकते कामलोलुप भीम का परिहास करते हुए हनुमान के कठोर शब्द उस समय के केरलीय जीवन का एक नया अध्याय ही खोल देते हैं। "छोकरी, लौंडी के फरमाते ही स्थूलकाय, मोटू तथा महामूर्ख तुम किधर निकल पड़े। पत्नी का दास्य करने वाले तुम्हें चाहिए था कि कोच्ची में (कोचिन में) पहुँच कर अंड़ा सेका करते।" ऐसे प्रसंगों में व्यंग्य का स्रोत ही बह चलता है।

भावुकता विहीन तथा संवेदनाहीन समालोचकों के प्रति नंपियार का अमर्ष प्रसिद्ध है। वे उन्हें अरसिक की संज्ञा दिया करते थे। नंपियार के व्यंग्य-बाण से उन दिनों कोई वर्ग बच नहीं सका था। उनके व्यंग्य का पूरा जादू श्लेषोक्ति में है। सुप्रसिद्ध समीक्षक ई. वी. कृष्णपिल्लै की मान्यता है कि नंपियार विश्व के सर्वश्रेष्ठ व्यंग्य-लेखक हैं।

अठारहवीं शताब्दी तक आते-आते व्यंग्य-साहित्य ने पूरा उत्कर्ष प्राप्त कर लिया। यही वह समय था, जबकि व्यंग्य-क्षेत्र में वेण्मणि कवियों का पदार्पण हुआ। भावनारहित कवियों तथा हृदयहीन वेश्याओं के प्रति उनका आक्रोश 'पूरप्रबन्धम्' में देखने योग्य है।

संस्कृत के संदेश-काव्यों, नाटकों ने मलयालम-साहित्यकारों को दिशाभ्रष्ट कर दिया था। ऐसे दिवांध कवियों को डाँट-फटकार सुनाते हुए विवोलि नारायणन् नंपूतिरी तथा मुंशीरामकुरुप व्यंग्य-साहित्य के क्षेत्र में उतर पड़े। नारायणन्‌नंपूतिरी का केवल 20 श्लोक वाला 'दात्यूह सन्देश' अंधपरंपरा पर जाने वाले कवियों केलिए सिरदर्द का विषय बन गया। 'नाटकान्तंकवित्वं' का नारा बुलन्द होते ही 'कवियशः प्रार्थी' अनेक साहित्यकार सामने आये तो उनकी खिल्ली उड़ाता हुआ मुंशी रामकुरुप का 'चक्की-चंकरन्' नाटक सामने आया, जिसने अंधपरंपरा के नाटककारों का पोल खोल दिया।

अबतक व्यंग्य का माध्यम कविता रही, पर बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ से अंग्रेजी जैसे साहित्य की देखा-देखी मलयालम-गद्य में भी व्यंग्य-प्रहार आरंभ हुआ। केसरी, सी. वी. तथा चंतुमेनन् इस क्षेत्र में पर्याप्त ख्याति प्राप्त कर सके। चंतुमेनन् का व्यंग्य सुधारवादी था तो सी. वी. ने भी सामाजिक दंभ, अहंकार, अत्याचार एवं अन्याय पर कठोर व्यंग्य किया। 'केसरी' के उपनाम से प्रसिद्ध वेङ्ङयिल् कुंजिरामननायर प्रकृत्या व्यंग्यकार थे। उग्र शैली और शय्यागुण उनकी विशेषता रही। अंग्रेजी-शिक्षित कूप-मण्डूकों पर उनके चुभते व्यंग्य-बाण अनुभवगम्य हैं। केरलीय संस्कृति एवं कला के पुनरुद्धार में उनका योगदान प्रशंसनीय रहा।

व्यंग्य-लेखन का परिमार्जित तथा सुष्ठु रूप संजयन् तथा ई. वी. कृष्णपिल्लै में देखा जा सकता है। यह बीसवीं शती का पूर्वार्द्ध था। सामयिक घटनाओं,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

समस्याओं को रूप प्रदान करने में संजयन् का हाथ रहा तो ई. वी. ने विभिन्न प्रकृति की जनता का धरातल अपनाया। संजयन् पंडित व्यंग्यकार हैं तो ई. वी. सहृदय-लेखक। 'संजयन्' के उपनाम से प्रसिद्ध एम. आर. नायर प्रतिभा एवं प्रत्युत्पन्नमति के साहित्यकार हैं और गत चालीस वर्षों की इस लंबी अवधि में उन्होंने प्रभूत साहित्य प्रदान किया। प्रगतिशील विचारधारा का शत्रु बन खड़ी अंधपरंपरा का खोखलापन प्रकट करने तथा उज्ज्वल भविष्य का आशावादी स्वर मुखरित करने में संजयन् सफल हुए। 'कोषिक्कोड् मुनसिपालिटी' तथा 'मिस्टिक कवि' उनके व्यंग्यपरक प्रसिद्ध लेख हैं। 'पेरड़ी' के प्रणेता के रूप में उनका महत्वपूर्ण स्थान है। साधारण से साधारण घटनाओं, पात्रों पर आधारित ई. वी. कृष्णपिल्लै का व्यंग्य-साहित्य अपने क्षेत्र में अकेला है। उनकी 'एम. एल. सी. कथाएँ', 'आत्मकथाएँ' जैसी रचनाएँ इतनी हँसा देती हैं कि वे जन-प्रिय व्यंग्यकार के रूप में यशस्वी बन गये। उनके हास्यपरक लेखों में समाज की दलित-पीड़ित जनता के प्रति करुणाश्रु उमड़ पड़ते हैं तो दूसरी ओर मनुष्य को मनुष्य रूप में रहने की प्रेरणा भी निहित है। वैद्य, पत्रकार, पेंशन-भोगी मामा, दुल्हन, वृद्ध, दलाल कोई भी वर्ग उनकी दृष्टि से बच नहीं पाया।

आधुनिक व्यंग्य-लेखकों में मलबार सुकुमारन् (के. सुकुमारन्), वाणक्कुट्टि, चेम्मनम् चाक्को आदि के नाम लिये जा सकते हैं। इनमें के. सुकुमारन् विशेष ख्याति प्राप्त कर सके। कारण यह था कि जब अधिकतर लेखक इतिहास तथा पुराण-प्रसिद्ध कथाओं का आधार लेकर हास्य लिख रहे थे, तब सुकुमारन् यथार्थवादी दृष्टि से तुच्छ एवं नगण्य सामाजिक जीवन पर लिखने लगे थे। इस वर्ष केरल भर में हास्य लेखक के. सुकुमारन् की जन्म-शताब्दी मनायी जा रही है।

के. सुकुमारन् का जन्म सन् 1876 में मलबार में एक 'तीय' परिवार में हुआ। यह 'तीय' परिवार शिक्षा की दृष्टि से काफी सम्मानित था। उन्होंने मद्रास प्रेसिडेंसी कालेज में शिक्षा ग्रहण की थी। 1894 से लेकर 1931 तक वे एक लिपिक के रूप में कार्य करते रहे। सन् 1956 में उनकी मृत्यु हुई।

सुकुमारन् का साहित्यिक जीवन कवि के रूप में प्रारंभ हुआ था, किंतु आगे चलकर उन्होंने गद्य की अनेक विधाओं में प्रयास किया। कहानी, उपन्यास और निबंधों के द्वारा हास्य का अजस्र स्रोत प्रवाहित किया। आज उनका नाम मलयालम के प्रथम श्रेणी के हास्यकारों में लिया जाता है। सुकुमारन् स्वभाव से हँसमुख व्यक्ति थे। उन्होंने हास्य को ही कहानी, उपन्यास या निबंध का जामा पहनाया। कथा कहना या निबंध लिखना उनका उद्देश्य नहीं था; वे लोगों को हँसाना चाहते थे और उसके लिए उन्होंने साधन या माध्यम के रूप में कहानी या उपन्यास या निबंध का सहारा लिया। मलयालम के प्रसिद्ध समीक्षक प्रोफसर गुप्तन् नायर का कथन है कि सुकुमारन् कथाकार नहीं, मुख्य रूप से हास्य-लेखक थे। इसलिए संभव है कि उनकी कथाएँ शास्त्रीय दृष्टि से खरी न उतरें। पाठकों को उनकी कथावस्तु के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विकास में अस्वाभाविकता का अनुभव हो सकता है। सुकुमारन् ने कथाशिल्प की ओर ध्यान नहीं दिया। वे केवल जनता को हँसाना जानते थे। आलोचकों की इस बात में भी शिकायत है कि सुकुमारन् के पुरुषपात्र एक प्रकार के मानसिक रोगी हैं, जो स्त्री-सौन्दर्य के उपासक, काम के शिकार तथा कुंठित वासनाओं से आक्रान्त हैं। यह आक्षेप न्यूनाधिक मात्रा में सही है; पर कथन-शैली में अन्तर्लीन हास्य के प्रवाह में आकर बहुआ पाठक इस दोष की ओर ध्यान नहीं देता।

सुकुमारन् ने चालीस से अधिक पुस्तक लिखी हैं। तम्पुरान्टे मकळ् (ब्राह्मण देवता की बेटी), आरान्टे कुट्टि (किसी का वच्चा), कूनिचिकित्सा, चूरकाट्टिल् चोर कण्णन् (बेंत के वन की खूनी आँखें) आदि कहानियों ने पर्याप्त प्रसिद्धि पायी। 'तम्पुरान्टे मकळ्' में कथावस्तु महत्वपूर्ण नहीं है। इसमें पुरुष-विद्वेषी श्रीकुमारी को वश में करने केलिए नायक सुकुमारन् नायर के प्रयत्न हँसने केलिए बाध्य करते हैं। श्रीकुमारी पर आसक्त नायक पहले उसकी दासी को अपनी वशवर्त्तिनी बनाता है और उसके द्वारा नायिका को अपनी ओर आकर्षित करने का स्वप्न देखता है। असफल नायक संन्यासिनी का प्रच्छन्न वेष धारण कर एक मठ में रहता है। धार्मिक स्वभाव की श्रीकुमारी संन्यासिनी के मायाजाल में फँस जाती है। संन्यासिनी का छद्म वेषधारी नायक उससे कहता है कि आज हम दोनों साथ सोएँगे और मैं धीरे से तुम्हारी पीठ सहलाता जाऊँगा; तुम मुझमें पुरुषत्व का आभास प्राप्त करती जाओगी। स्त्री के छद्म वेषधारी नायक के ये शब्द किसी अपरिचित संसार से संबंधित लगते हैं।

सुकुमारन् की हास्य कथाओं के स्वाभाविक विकास में संवाद-शैली का अपना विशिष्ट योगदान है। उनकी कहानियाँ संवाद-शैली में विकसित होती हैं। 'आरान्टे कुट्टि' कहानी इस कथन को प्रमाणित करेगी। कहानी का नायक अपने मित्र का स्वागत करने केलिए रेल्वे-स्टेशन पर पहुँचता है। स्त्रियों के डिब्बे के सामने आते ही उसकी दृष्टि अन्दर बैठी कोमलांगी स्त्रियों के लावण्य पर अटक जाती है। स्त्री-लावण्य पर मुग्ध हो निश्चल खड़े युवक की ओर एक सुन्दरी बढ़ती है और अपने हाथ के वच्चे को उसके हाथ में सौंपकर सामान चढ़ाने की व्यग्रता के बहाने वहाँ से गायब हो जाती है। गाड़ी के छूट जाने पर भी उस स्त्री को गायब पाकर नायक को अपनी मूर्खता का आभास होता है। वह उस पराये बच्चे से पिंड छुड़ाने की तरकीब सोचता है और रेल्वे-पुलिस इन्स्पेक्टर के पास जाता है।

इन्स्पेक्टर : क्यों आये ? जल्दी बोलो। मैं काम में व्यस्त हूँ।
युवक : एक संदेह-निवारण करना है।
इन्स्पेक्टर : संदेह ? मुझसे ? दूसरा कोई नहीं मिला ?
युवक : यह संदेह आप ही दूर कर सकेंगे।
इन्स्पेक्टर : यह निश्चित है ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

युवक : हाँ निश्चित ।

इन्स्पेक्टर : तो जल्दी बोलो ।

युवक : कोई परायी वस्तु रेल्वे-स्टेशन पर मुझे मिले तो उसे किसके सुपुर्द करूँ ।

इन्स्पेक्टर : पुलिस को सुपुर्द करना होगा ।

युवक : पुलिस के किसी भी जवान को सुपुर्द कर दूं ।

इन्स्पेक्टर : नहीं, रेल्वे-स्टेशन पर मिली वस्तु हमारे पास ही सुपुर्द करनी होगी ।

युवक : नहीं तो ?

इन्स्पेक्टर : नहीं तो अपराध माना जाएगा ।

युवक : तो आपको सुपुर्द करने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं ?

इन्स्पेक्टर : बिलकुल नहीं ।

युवक : ऐसी लायी वस्तु आपको स्वीकार करनी ही पड़ेगी ?

इन्स्पेक्टर : तभी तो हमें यहाँ रखा गया है ।

युवक : अर्थात् मेरा कर्तव्य है आपको सुपुर्द कर देना और आपका कर्तव्य है उसे अपने पास रख लेना ।

इन्स्पेक्टर : बिलकुल ठीक ।

युवक : इसमें कुछ संदेह तो नहीं रह गया ?

इन्स्पेक्टर : नहीं ।

युवक : ठीक, बड़ा उपकार है, तो लीजिए, अपना कर्तव्य निभाइये, जल्दी लीजिए ।

यह है सुकुमारन् की हास्यमय संवाद-शैली की विशेषता। उनके हास्य-व्यंग्य का एक उदाहरण है 'कूनि चिकित्सा ।' यह कहानी उन दिनों लिखी गयी थी, जब गांधीजी के 'सादा जीवन उच्च विचार' का बोलबाला था और कुछ लोगों ने इसे एक फैशन मान लिया था । चीज़ें महँगी होती जा रही थीं। एक गृहस्वामी चिन्तित था । उसने देखा कि 'कूनि चिकित्सा' ही बचत का एकमात्र उपाय है। अतएव खाद्य-सामग्री को कच्चा खाकर नमक-मिर्च का अपव्यय रोकने तथा चाय-काफी बन्द करने का उसने निश्चय किया। उसका अनुमान था, महीने में पचास-साठ रुपये के हिसाब से वर्ष में छः-सात सौ की बचत होगी । उसने अपनी पत्नी को यह उपाय सुझाया । उसे भी ठीक जँचा । फिर क्या था, 'कूनि चिकित्सा' जोरों पर चली । पहले दो दिन तक कुछ विशेष कठिनाई नहीं हुई । पर सप्ताह के अंत में स्वादिष्ट भोजन की ललक असह्य हो उठी । यहाँ तक कि नमक तक में दृष्टि केन्द्रित होती गयी । पर आश्चर्य था, श्रीमती जी में कोई विशेष परिवर्तन नहीं दिखाई दिया । वह पर्याप्त संयम के साथ चिकित्सा जारी रखे रही । पर श्रीमान्जी से सहा नहीं गया,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तो पत्नी को कानों-कान खबर किये बिना वह पड़ोसियों का आतिथ्य ग्रहण करने निकल पड़ा। उसकी 'कूनि चिकित्सा' से परिचित पड़ोसियों ने केवल ठंडे पानी से उसकी सेवा की। वह लाचार था। एक दिन अपने एक मित्र का स्वागत करने वह रेल्वे-स्टेशन पर पहुँचा। वहाँ पास की दूकान से स्वादिष्ट पकवान की महक नाक के भीतर घुस गयी तो उससे रहा न गया; कई स्वादिष्ट चीज़ों का आर्डर दे दिया। चीज़ें एक के बाद एक मेज़ पर परोसी गयीं और उनपर टूट ही रहा था कि एकदम पड़ोसी मेनन् सामने आ खड़ा हुआ। कूनि चिकित्सा और यह स्वादिष्ट भोजन! मेनन कुछ समझ नहीं पा रहा था। वह रह-रहकर मेज़ और उसकी ओर देखता जा रहा था। उसने मेनन् को बताया कि उसका मित्र उस गाड़ी से आ रहा है और उसी केलिए यह व्यवस्था हो रही है। मेनन् ने बताया कि उसका मित्र उस गाड़ी से नहीं आ रहा है; फिर क्या था, मेनन् ने सारी चीजें अपनी ओर खींच लीं और खा लीं। चारों ओर से निराश होकर उसने एक दिन अपनी पत्नी को बताया कि उसके चाचाजी आ रहे हैं और उनके लिए कुछ स्वादिष्ट भोजन तैयार करना होगा। पत्नी ने खूब सारी मिठाइयाँ बनाईं। आधी रात को वह धड़कता हृदय लेकर दबे पाँव रसोई में गया। बर्तन उलटकर देखे तो सब खाली। तब उसे थोड़ी देर पहले बर्तन के खनकने का स्मरण आया और बिल्ली को कोसने लगा। दो दिन बाद पत्नी के रिश्तेदारों के आगमन के बहाने उसने पत्नी से खूब पकवान बनवाये। रात बिल्ली की आवाज़ सुनी तो धीरे-धीरे रसोई के दरवाज़े पर पहुँचा और भीतर झाँका तो पत्नी अकेली बैठी सब चीज़ें खाती नज़र आयी।

वह एक दम चीख उठा—"चोर, गत बार भी तुम्हीं बिल्ली बनी थी ?"

"गड़बड़ न करो ···· तुम भी आखिर इसी केलिए तो आये थे !"

"हमारी भी क्या जोड़ी मिली है !"

यह है सुकुमारन् का हास्य। उनकी कुछ कृतियाँ अप्रकाशित पड़ी हैं। वे प्रकाशन की प्रतीक्षा कर रही हैं। जन्म-शताब्दी मनाने के साथ ही साथ उन कृतियों को प्रकाश में लाने का प्रयत्न होना चाहिए। यही उनके प्रति हमारी श्रद्धा के फूल होंगे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पुरस्कृत साहित्य : अक्षरम्

[बुद्धिजीवी और बुद्धि-विलासी वर्ग में काव्य सदा विनोद का विषय रहा है और यह वर्ग किसी अपने विशिष्ट स्तर पर काव्य की सम्यक्-समीक्षा के बाद उसे सम्मान भी प्रदान करता रहा है। इसी श्रेणी और वर्ग के केन्द्रीय संस्थान साहित्य अकादमी ने मलयालम के काव्य-संकलन 'अक्षरम्' को 1975 का अकादमी-पुरस्कार प्रदान किया है। कवि ओ. एन. वी. कुरुप को केवल बुद्धिजीवी वर्ग की मान्यता प्राप्त नहीं है, अपितु केरल के जनमानस को भी उन्होंने प्रभावित किया है। इसका कारण यह है, मलयालम साहित्य-क्षेत्र में उन्होने विद्रोही कवि के रूप में पदार्पण किया और केरलीय जनमानस की भावनाओं और संवेगों से साक्षात्कार किया। इसका उनके काव्य पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा और उनके काव्य में अनुभूति की तीव्रता, संवेग और आक्रोश प्रबल हो उठे, जिससे उनका काव्य जन-साधारण की वाणी बन गया। इस जन-वाणी की यह भी एक विशेषता है कि साहित्य-क्षेत्र में जिन काव्य-गुणों और विशेषताओं पर ध्यान दिया जाता है वे इस काव्य में अपने उत्कर्ष पर हैं।]

साहित्य अकादमी से पुरस्कृत यह कृति विविध विषयों पर लिखी बीस कविताओं का संकलन है।[1] इन कविताओं को विविध श्रेणियों में रखा जा सकता है; कुछ प्रकृतिपरक हैं तो कुछ रहस्यात्मक हैं। कुछ प्रणय और प्रेम की कविताएँ हैं तो अन्य कुछ शोक-विरहपरक। किन्तु सभी में कवि का निजी व्यक्तित्व पाठकों को मंत्राभिभूत कर देता है। प्रथम कविता के नाम पर ही पुस्तक का नामकरण हुआ है। कोरे सफेद कागज पर खिले पुष्परूपी अक्षर को कवि नाना रूपों में चित्रित करता है। दूसरी कविता 'फिनिक्स' प्राचीन मिस्रवासियों के आराध्य पक्षी पर केन्द्रित है। यवन-यहूदी धार्मिक ग्रन्थों से परिचित लोगों केलिए यह फिनिक्स पक्षी कोई नयी वस्तु नहीं है। कवि की कल्पना है कि मरुभूमि में दग्ध-भस्मीभूत यह पक्षी अपनी राख से पुनर्जीवन पाकर आवेगमयी उड़ान भरता है। यह पक्षी विनाश से अविनश्वरता की ओर बढ़ने वाली मानवीय अभिलाषा का प्रतीक है।

ओ. एन. वी. के काव्य-कल्लोल के अन्तर में वैयक्तिक तथा सामाजिक दुःखों की अन्तर्धारा प्रवाहित होती-सी प्रतीत होती है, किन्तु वे दुःख 'फिनिक्स' (Phoenix) के दुःख हैं। वह दुख अग्नि में तपाये निखरे सुवर्ण के समान अपनी पवित्रता एवं पावनता के साथ बाहर प्रकट होते हैं। अतः कवि पलायनवादी नहीं, पूर्ण कर्मठता का उपासक है। 'कोटुं काटिनु मुम्पु' (तूफान से पहले) कविता में विकस्वर से

---

1. अक्षरम्; कवि—ओ एन. वी. कुरुप; प्रकाशक: साहित्य प्रवर्त्तक सहकरण संघम्, कोट्टयम्।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

निनादित वन में घूमते-भटकते अंधड़ को कवि अपने तप्त निश्वासों का नैवेद्य अर्पित करता है और अपनी कविता को पूजा-नैवेद्य का रूप प्रदान करता है। यही नहीं, संसार-सागर में डूबने के पूर्व ही कवि पवन से आग्रह करता है कि वह उसका एक बार आश्लेष करे, अपने स्पर्श का चन्दन-तिलक लगादे तथा अपने हाथ की मुरली के सुमधुर रव को कवि के प्राणों के छिद्रों में फूंक दे। यह कविता पढ़ते ही कविवर सुमित्रानन्दन पन्त की 'सिखा दो न मधुप कुमारी अपना मीठा गान' का स्मरण हो आता है।

'सोपान संगीतम्' का स्वर भक्तिभाव पूरित है जिसमें देवी मां को—सत्य-सौन्दर्य-वात्सल्य ज्योत्स्ना को, प्रेम के अगाध सागर को, दुख-वेदना-विषाद को मधुपर्क में बदल डालने वाली देवी महामाया को, सप्त वर्णांचित रेणुओं से प्रशोभित एवं उज्ज्वल माता को नेत्र भर देखने तथा हाथ जोड़ प्रणाम करने की कवि की लालसा, व्यग्रता दर्शनीय है। माँ के मंगल सोपान सन्निधि में श्रद्धा-भक्ति की तरंग-पूरित वाणी सामगान बनकर विलीन होने तथा अपने पृथक् अस्तित्व को मिटा देने की अभिलाषा प्रकट करके रह जाती है। आनन्दाश्रु सुरसरिता बनकर माँ का स्नान कराने वह निकलना चाहता है और कवि उस परम ज्योति का स्तुति-गीत गा-गा कर तन्मय होना चाहता है।

'बसु-कात्तु' (बस की प्रतीक्षा में) प्रतीकात्मक एवं दार्शनिक कविता है। कवि बस की प्रतीक्षा में सड़क पर खड़ा है। कई बसें बिना रुके ही आगे निकल गयी हैं। कितने ही यात्री बसों में बैठकर अपने लक्ष्य स्थान पर पहुँच गये ! पर कवि अब भी बस की प्रतीक्षा में खड़ा है। दूसरा पथिक दिन भी आगे प्रतीक्षा करने को अपनी असमर्थता के कारण चला जाता है। किन्तु कवि निस्पन्द संगीत बनकर, भग्नशिला-बिम्ब बनकर खड़ा है, वह कभी न आ पहुँचने वाली बस की प्रतीक्षा में है।

'मैकलाञ्जलो मापु' (माइकलांजलो माफ करो) कविता अपनी भाव प्रेरणा एवं सशक्त अभिव्यंजना-शैली के कारण बहुत ही कमनीय एवं हृदयस्पर्शी है। यह कविता लिखने की प्रेरणा कवि को तब मिली जब उसने सुना कि मई 21, 1972 को किसी नौजवान ने माइकेलांजलो की उत्कृष्ट कलाकृति 'लापियत्ता' को भारी हथौड़ा मारकर नष्ट-भ्रष्ट कर दिया है। 'क्रास' के नीचे ईसामसीह की जड़ देह गोद में लिये शोकार्त्त कन्यका मरियम की पावन मूर्ति ही लापियत्ता है। कविता आद्यन्त करुणा-प्लावित है। कवि की सच्ची हृदय विदारक अनुभूति तथा सशक्त भाषा-शैली समस्त घटनाओं का फोटोग्राफिक चित्र पाठकों के सम्मुख अंकित कर देती है।

अगली कविता 'चित्रा पौर्णमी' महाकवि कुमारन् आशान् की जन्म शती के अवसर पर रची गयी है। महाकवि कुमारन् आशान् कैरली में रोमान्टिक काव्यधारा के प्रवर्त्तक कवि रहे। ओ. एन. वी. अपने भाव, भाषा एवं शैली के लिए बड़ी मात्रा में कुमारन् आशान् के ऋणी हैं। आशान् चैत्र पौर्णमी को जन्मे थे और चैत्र पौर्णमी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कवि को एक शतक पूर्व महाकवि आशान् के जन्म की स्मृति दिलाती है। कवि की दृष्टि में यह चैत्र पौर्णमी विश्व-जननी है जिसने आशान् के रूप में महोज्ज्वल रत्न 'नभस्संतान' को जन्म दिया है। अपनी चक्की में चार और छ: (वेद और शास्त्र) को घुमाने की क्षमता रखने वाले तेलो (भक्तोत्तंस महाकवि एषुत्तच्छन्) से लालित-पालित कैरली-वृक्ष पर चैत्र की कोकिला बन अनश्वर पिकस्वर मुखरित करने वाले आशान् के प्रति कवि की श्रद्धा एवं आस्था के स्वर अवश्य ही मनोमुग्धकारी हैं।

'निशागंधी' कविता में भाव और भाषा का मणि-कांचन संयोग है। निविड अनुभूति एवं ऊंची कल्पना से प्रेरित यह कविता अपनी भाव-सम्पन्नता में बेजोड़ है। प्रकृति का मानवीकरण निशागंधी को एक लावण्यमयी नारी रूप में हमारे सामने प्रस्तुत करता है। छाया-सर्प अंधे हो रेंग रहे हैं और उन्हींके मध्य किसी अदृश्य सत्ता को अपने में समाविष्ट कर तथा मदोना की स्मिति और अनाघ्रात लावण्य लिये खड़ी निशागंधी को चाँदनी को भी ललचाने वाली मधुरता, मृदुता एवं स्निग्धता प्राप्त है। तुषार-रश्मियों में तपस्यालीन यह कन्यका तमिस्रा को चीरकर सहस्रांशु के प्रकट होते ही स्वयं मृत्यु को प्राप्त करती है।

'हस्तदानं' वियतनाम के एक मित्र से भेंट की स्मृति में लिखी गयी कविता है। मावेलिनाटु (केरल) की संतान यह कवि वियतनाम के समरांगण से नवागत उसी मित्र की आँखों में भीष्मप्रतिज्ञा, पार्थतीत का प्रण, पार्थ के विषाद को उज्ज्वल साहस में बदल डालनेवाले कृष्ण की मांत्रिक शक्ति, सहस्रों अश्वरथ, अस्त्र-शस्त्र से आतंकित कुरुक्षेत्र की निस्तब्धता का दर्शन करता है। दोनों परस्पराश्लेष में आबद्ध हो क्षणभर खड़े ही रह जाते हैं तो कवि को यह भासित होता है कि भारत तथा वियतनाम के मोह-दाह, मोहन स्वप्न, आशा-निराशा, सुख-दुख सबमें अद्भुत समानता है। कवि का विश्वमानवतावादी स्वर तथा भारतीय महात्माओं के प्रति अपार श्रद्धा की परिचायक यह कविता है।

'दर्शनम्' कविता में कवि नाना वस्तुओं में दिव्य परमतत्त्व का दर्शन कर गद्‌गद् पुलकित हो उठता है। सीपी के मोती में, पुष्प की सुगन्धि में, कन्यका के प्रेमानुराग में, मेघों की वाष्प-कणिका में, वीणा के तारों की झंकार में, नर्तकी की मंद मुस्कान तथा आतम-स्फुलिंग में, सूर्य-चन्द्र से बढ़कर पृथ्वी को अपना प्रेम उँडेलने-वाले मनुष्य-स्नेही कवि के अश्रुनीर में कवि उस दिव्य पुरुष का साक्षात्कार पाता है।

'चत्तवेरुकळ्' (मृत जड़ें) में बाल्य-प्रणय की, मधु-मक्खियों के छत्ते के समान विकार तरलित तथा विषाद मधुर सौम्यालाप के स्वर मुखरित हैं। पंतजी की 'भावी पत्नी के प्रति' कविता में जैसे प्राकृतिक उपादानों से अपनी प्रेयसी के रूप-लावण्य का उत्कर्ष दिखाया गया है वैसे ही ओ. एन. वी. भी प्राकृतिक वस्तुओं के माध्यम से अपनी बाल्य सहचरी की रूप-सज्जा करने के साथ ही साथ उसकी भाव-चेष्टाओं तथा क्रिया-कलापों में षड्ऋतुओं का दर्शन भी करता है। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंधों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पर आधारित बिम्बों से युक्त यह कविता अपनी सुषमा में अद्वितीय है। कवि अपनी प्रेयसी से प्रार्थना करता है कि वह बीते क्षणों को पुन: प्रदान करे। इस कविता में वर्णित विरह-दुख हमें कालिदास के मेघदूत, या मलयालम के उण्णुनीलि संदेशम् की स्मृति दिलाता है, हाँ अन्तर इतना है कि यहाँ मेघ, यक्ष सब अकेला कवि है, विरहिणी यहाँ नहीं है। कवि को लगता है कि उसकी प्रणय-कथा के नायक-नायिका मर चुके हैं।

तेट्टिय मन्त्रम् (भूला मंत्र) का स्वर भी करुणार्द्र है, प्रेम-निराशा से ओत-प्रोत है। कवि अपनी प्रेयसी में वैदेही, दमयन्ती, सैरन्ध्री का ही दर्शन नहीं करता, अपितु स्वयं चिता में जौहर होते सतीत्व का भी दर्शन करता है।

'कोच्चु दुखम्' एक मामूली-सी बात का हृदयाकर्षक चित्रण है। स्कूल जाते एक बालक के हाथ से 'टिफिन बॉक्स' नीचे गिर पड़ता है, तो एक राहगीर की दृष्टि उसपर पड़ती है। वह उसे उठाकर बालक के हाथ में दे देता है। 'बॉक्स' के गिरते ही बालक के नेत्रों से दो बूंद अश्रुकण टपक पड़ते हैं, इसलिए नहीं कि उसे दोपहर को भूखा रहना होगा बल्कि इसलिए कि उस टिफिन बॉक्स में से नीचे गिरकर बिखरे 'टापिओका' के दो चार टुकड़ों को राहगीर ने देख लिया। 'टापिओका' केरल की निर्धन जनता की भोजन-सामग्री है और यह निर्धनता का प्रतीक है।

ओ. एन. वी. मानव-प्रेमी या मानवतावादी कवि हैं। वर्तमान सामाजिक विषमता तथा कृषक वर्ग की निर्धनता एवं दीनता के प्रति आक्रोश के स्वर भी उनकी कविताओं में मुखरित हो उठे हैं। 'नरनायिङ्ङने' आदि कविताओं में आक्रोश के स्वर प्रज्वलित हैं। कवि सामयिक सामाजिक परिस्थितियों से अवगत है और ग्रामीण जनता की दीन-हीन दशा के प्रति जागरूक भी। तभी तो 'स्नेहमेन्न भारं' कविता में बाह्याकाशगामी वैज्ञानिक प्रयास पर व्यंग्य के छींटे कसता है और समझाता है कि मनुष्य चन्द्रमण्डल या मंगलग्रह हो आये, किन्तु पृथ्वी-माता की स्नेहमयी गोदी में आकर ही चिर शान्ति पा सकता है। कविवर पंत ने लिखा था "वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान।" ओ. एन. वी. के सम्बन्ध में यह उक्ति पूर्णतया सत्य-सी लगती है। वे प्रेम के गायक हैं, वे प्रेम करना और प्रेम पाना चाहते हैं। ग्रामीण जनता के प्रति उनका प्रेम अपार है और वे ग्रामीण जनता के कवि बने रहना चाहते हैं। उनके गान उनके दुखार्त्त हृदय के उद्‌गार हैं। वे स्वयं यह स्वीकार करते हैं कि उनके गीत हृदय-भेदी आहों के स्वर हैं। कवि-दृष्टि में संतप्तहृदया तथा स्नानोपरान्त गीले फटे-पुराने चियड़ों में लिपटी ग्रामीण कन्यका, इधर-उधर बिखरे धुंधले रविवर्मा के चित्रों के समान फैले ग्रामीण सरोवर, कुष्ठरोगी के दुबले-पतले सूखे चरणों के समान निष्प्रभ एवं म्लान पद्मदल सब पड़ते हैं। उनकी दृष्टि में ढोर चराते आगे बढ़ते श्लथ मन्द चरण वाले बालक भी आ जाते हैं। वे ऐसी धीमी चाल से चलते हैं मानो 'धीरे-धीरे रे मना धीरे सब कुछ होय।' पर दूसरी ओर तूफानी चाल में पटरियों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

को कंपित करती हुई आगे बढ़ती मद्रास गाड़ी या दिल्ली जयन्ती एक्सप्रेस भी कवि दृष्टि से बच नहीं पाती। कवि द्वारा चित्रित ये दोनों दृश्य भगवतीचरण की 'भैंसागाड़ी' का अनुस्मरण कराते हैं। समाज के शोषण एवं अनैतिक भ्रष्टाचार पर जीते उच्चवर्गीय ब्राह्मण भी कवि के करारे व्यंग्य के पात्र बन जाते हैं। लोकगीतों की शैली में रची गयी 'पषयोरु पाट्टु' कविता में सामाजिक कुरीतियों के प्रति तीखा व्यंग्य है। ब्राह्मणों की कामासक्ति और तद्द्वारा निम्न जाति के लोगों के क्लेश का सजीव चित्र खींचा गया है। यह कविता जहाँ सामाजिक सुधार की आवश्यकता पर हमारा ध्यान आकर्षित करती है, वहाँ दूसरी ओर सामान्य जनता की गीत-शैली एवं जन-भाषा का सौन्दर्य भी दर्शाती है। जन-साधारण की समस्याओं को जन-सामान्य की शैली में प्रस्तुत कर सामान्य जनता का कवि बनने की ओ. एन. वी. की अभिलाषा प्रशंसनीय है।

केरल की मिट्टी में जन्मे और पले ओ. एन. वी. कुरुप केलिए यह कोई आश्चर्य नहीं कि उनकी कविता में केरल की रंग-शबलिमा एवं सुगन्धि है। प्रकृत्या प्रकृति सुषमा केलिए प्रख्यात केरल की भूमि ने इस कवि को प्रकृति-पर्यवेक्षक बना दिया और प्रकृति के प्रत्येक कंपन से उसे परिचित कराया। फलतः उसकी कविता में प्रकृति-सुषमा के एक से एक सुन्दर चित्र प्राप्त होते हैं। मेघ-घटाओं का आरव, मोतियों की वर्षा, सागर की उत्ताल लहरियों के नृत्य-गान, हजारों पुष्पों से सुरभित सुवासित उषा और उसके चुम्बनों के सीत्कार, घने बांसों के ताल-नृत्य, हरीतिमाच्छन्न खेत, वन, पर्वतश्रेणियाँ सब उसके काव्य में नयी भंगिमा के साथ प्रस्तुत हैं।

ओ. एन. वी. में चिन्तन, मनन और रहस्यात्मक अनुभूतियों की कमी नहीं है। उनके चिन्तन-मनन का केन्द्र मानव है तो अनुभूतियों का आधार प्रकृति, उसका शिशु मानव और सब का कर्त्ता धर्ता अव्यक्त परमतत्त्व है। कवि ने अपने चिन्तन एवं अनुभूतियों को सशक्त वाणी दी। अपनी वाणी को सक्षम अभिव्यंजना प्रदान करने केलिए उसे बहुधा प्रतीकों का सहारा लेना पड़ा। ओ. एन. वी. प्रतीकों के सघन कवि हैं। उनके ये सारे प्रतीक प्रकृति के परिवेश से गृहीत हैं। पतित पद्म, मुरझाये सकुचाये सरसिजदल, उन्हें कतरते-काटते लटकते कीड़े-मकोड़े, गीले तथा धब्बों वाले चिथड़ों में अपनी शरीरयष्टि को छिपाये ग्राम-युवती, सभी घुन लगे कन्यात्व के सशक्त एवं चिरपरिचित प्रतीक हैं। चींटियों की कतार के समान ढोर चराते आगे मन्द गति से चलते कृषक बालक, विद्युत् गति में या तूफानी चाल में अपने लक्ष्य की ओर लपकती जयन्ती एक्सप्रेस, कोरे कागज में खिले पुष्प, रविवर्मा के विरचित बिखरे धुंधले चित्रों से ग्रामीण पोखरे, टीन शेड पर तपती दोपहरी में छाया केलिए तरसते कपोत, मृत जड़ें, आग्नेय पंखों वाला पक्षी, तप्त निश्वास, फिनिक्स पक्षी सभी जीवन के नाना रूपों, भावों, विसंगतियों के प्रतीक बनकर आते हैं। चिर-परिचित धरातल में चुनेगये इन प्रतीकों में दुरूहता का अभाव है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ओ. एन. वी. की कविता अपने समाकलित सघन बिम्बों के कारण अत्यन्त प्रेषणीय है। अपने भावों को सहृदय संवेद्य बनाने केलिए ये सारे बिम्ब पर्याप्त समर्थ एवं सक्षम हैं। ये बिम्ब प्राकृतिक, पौराणिक, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक परिवेशों से संग्रथित हैं। चक्काल पष्वन् (चक्काल जाति का वयोवृद्ध—एषुत्तच्छन्), वैदेही, राम, कृष्ण, दमयन्ती, गरुड़, मावेली (महाबली), भीष्म, पार्थ, क्रास पर लटकते ईसा, फीनिक्स पक्षी, लापियत्ता, मदोना सब ऐतिहासिक पौराणिक बिम्ब बनकर काव्य की चारुता एवं संवेद्यता बढ़ाते हैं। उर्वशी, यक्ष, यक्षी जैसे मिथक बिम्ब भी बहुमात्रा में पाये जा सकते हैं। इन बिम्बों को ऐन्द्रियानुभूति से संवलित कर प्रस्तुत किया गया है। फलतः उनमें ऐन्द्रियता एवं मूर्त्तिमत्ता आ गयी है। तप्त शर, सौवर्णमुखी राग, तप्त तूफान, नीहारार्द्र दलांजली, सौवर्ण मूर्त्ति, इन्द्र नीलाभ नेत्र, आर्द्रनयन, आसुर पक्षी, शोण रेखाएँ,क्षोणित धब्बे, आश्लेष करती मृत्यु, हर्षोन्मद सीत्कार, हस्तरूपी श्वेत कमल, निरालम्ब शोक, मृदूष्मल अंगूर रस, तप्त विश्वास आदि चाक्षुष, घ्रातव्य, स्पृश्य, श्रव्य, आस्वाद्य संवेदनाओं की एक-एक परत निकाल रखते हैं। आँख मींचती रातें, अनाघ्रात लावण्य निर्मलता, दृगनीर रूपी पुष्प आदि भी बिम्बधर्मी सुन्दर प्रयोग हैं। कवि उपास्य देवी का बिम्ब प्रस्तुत करते हुए लिखता है—वह सौवर्ण मूर्ति है, उज्ज्वल, निश्चल अकंपित स्वरूपिणी है, पावक तल्प पर विराजित है जिसे पावक अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है। वह धीर, उदार एवं सौम्यमूर्त्ति है। एक उदाहरण कवि के बिम्ब के प्रसंग में उल्लेख्य है। यहूदियों द्वारा कीलित ईसामसीह, उसकी जड़ देह को गोद में लिये आर्द्रनयना कन्यका मरियम्, शोण रेखाओं से भरे कुमुद के समान रक्तपूरित ईसा का निर्जीव शरीर, सब मिलकर पुरानी घटना का सजीव एवं मर्मस्पर्शी चित्र अंकित करते हैं।

ओ. एन. वी. सशक्त गीतकार हैं। आत्माभिव्यंजना, संक्षिप्तता, संगीतात्मकता एवं गेयता का अद्भुत सामंजस्य उनके गीतों का प्राण है। महाकवि चंगम्पुषा कृष्ण पिल्लै के समान पदलालित्य, स्वर-लय-ताल की एकान्विति, स्वर-मैत्री आदि उनके इन गीतों की विशेषताएँ हैं।

भाव एवं शिल्प पक्ष की दृष्टि से ओ. एन. वी. की कृति मलयालम काव्य साहित्य के विकास-क्रम में एक अद्भुत उपलब्धि है और संभवतः अत्याधुनिक मलयालम कविता की क्षमता जिस चरम बिन्दु को छू सकती थी, उसे 'अक्षरम्' ने छू लिया है। कवि कें काव्य-विकास का यह उत्तुंग शिखर है।

मलयालम साहित्य के अनश्वर कवि ओ. एन. वी. कुरुप सन् 1931 ई. में कोइलोन जिले के चवरा नामक गाँव में पैदा हुए। मलयालम साहित्य में एम. ए. की उपाधि प्राप्त करके वे प्राध्यापक पद पर कार्यरत हैं। कविता लिखने की प्रेरणा उन्हें बाल्यकाल में ही प्राप्त हुई थी और उनकी प्रारम्भिक कविताओं का संग्रह सन् 1950 के आस-पास प्रकाशित हुआ। मलयालम साहित्य में एक विद्रोही कवि के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रूप में उनका पदार्पण हुआ था। केरल के सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक क्षेत्र में जो क्रान्तिकारी परिवर्तन एवं आन्दोलन होते आ रहे थे, उनको वाणी देते हुए उनकी प्रारम्भिक कविताएँ निकली थीं। सामाजिक विषमता एवं आर्थिक असमानता के प्रति आक्रोशपूर्ण स्वरसाधना में तल्लीन ओ. एन. वी. की बाद की काव्यदिशा बदल गयी। उनके अनुभव बढ़ते गये और उनके अनुरूप उनका दायित्व भी बढ़ता गया। उन्होंने केरलीय जनमानस की भावनाओं, आवेगों, संवेदनाओं को परख लिया और उन्हें अपनी कविता का विषय बनाया। फलतः उनकी बाद की कविताएँ तीव्र अनुभूति, सबल संवेग एवं त्वरित आक्रोश से ओत-प्रोत होकर केरल की सामान्य जनता की वाणी बन गयी हैं। अबतक उनकी लगभग बीस काव्यकृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं जिनमें से अक्षरम्, अग्निशलभङ्ङल् (जुगनू), मयिलपीलि (मोरपंख), ओरुतुल्लि वेलिच्चं (एक बूंद प्रकाश), ञान् निन्ने स्नेहिक्कुन्नु (मैं तुम्हें प्यार करता हूँ), माट्टुविन् चट्टङ्ङले (कानून बदल डालो), दाहिक्कुन्न पान पात्रं (प्यासा प्याला), नीलक्कण्णुकल् (नीली आँखें), मरुभूमि, तामर पोय्क (कमल-सरोवर), ओरु देवतयुं रण्टु चक्रवर्त्तिमारुं (एक देवता तथा दो सम्राट), गानमाला, गानमेला, गानोत्सव आदि विशेष उल्लेख्य हैं। एक गीतकार के रूप में भी ओ. एन. वी. पर्याप्त ख्याति प्राप्त कर चुके हैं। उन्होंने चलचित्रों तथा नाटकों केलिए भी कई गीत लिखे हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गर्भश्रीमान् महाराजा स्वातितिरुनाळ्

कैरली के अनुपम पुजारी, राष्ट्रवाणी हिन्दी के प्रथम दक्षिणी गीतकार तथा कर्णाटक एवं हिन्दुस्तानी संगीत-सार्वभौम गर्भश्रीमान् महाराजा स्वातितिरुनाळ् रामवर्मा अपनी कला-चातुरी, सुमधुर शास्त्रीय संगीत एवं अपार पांडित्य के कारण आज केरल की सीमा पार करके भारतीय कलाकारों की प्रथम श्रेणी में स्थान एवं सम्मान प्राप्त कर चुके हैं। कैरली तथा कैरली-भक्तों केलिए यह अत्यंत गौरव की बात है कि आज से लगभग दो शताब्दी पूर्व भारत के सुदूर दक्षिण में स्थित केरल प्रांत ने स्वातितिरुनाळ् के रूप में एक गीतकार को जन्म दिया, जिसकी यशगाथा आज समस्त भारत में परिव्याप्त है।

स्वातितिरुनाळ् का जन्म तिरुवितांकूर के राजवंश में 16 अप्रैल 1813 को हुआ था। 'स्वाति' नक्षत्र में जन्म लेने के कारण वे स्वातितिरुनाळ् के नाम से प्रसिद्ध हुए। तिरुवितांकूर के राजवंश के राजा बहुधा अपने जन्म-नक्षत्र के नाम से पुकारे जाते हैं। स्वातितिरुनाळ् का वास्तविक नाम रामवर्मा था। तिरुवितांकूर राजवंश की रानी लक्ष्मीबाई के वे सुपुत्र थे। उनके जन्म के पूर्व राज्य के उत्तराधिकारी के रूप में किसी राजकुमार के अभाव में स्वयं रानी ने शासन-भार अपने हाथ में ले लिया था। जब स्वातितिरुनाळ् का जन्म नहीं हुआ था, और वे माता के केवल गर्भ में ही थे तभी जनता ने उन्हें भावी शासक स्वीकार कर लिया था और इसी कारण वे 'गर्भश्रीमान्' के उपनाम से प्रख्यात हुए। स्वातितिरुनाळ् सन् 1830 ई. में अपने सत्रह वर्ष की अवस्था में सिंहासनासीन हुए और अल्पकाल के भीतर एक प्रबल एवं प्रतापी शासक के रूप में जनता के आराध्य बने। वे एक दूरदर्शी शासक थे। उन्हीं के प्रोत्साहन से केरल में अंग्रेज़ी-प्रणाली की शिक्षा-दीक्षा का प्रचार हुआ। शासन के क्षेत्र में वे कई सुधार लाये। लेकिन ये प्रतापी शासक अधिक समय तक प्रजा की सेवा नहीं कर सके; तेंतीस साल की अल्पायु पाकर 25 दिसंबर 1846 ई. में इनका स्वर्गवास हुआ।

महाराजा स्वातितिरुनाळ् सर्वकला-सार्वभौम, बहुभाषाविद्, सरस गायक कवि एवं उच्चकोटि के संगीतज्ञ थे। उन्होंने मलयालम, संस्कृत, मराठी, कन्नड़, तमिल, अंग्रेज़ी और हिन्दी का गहरा अध्ययन किया था। उनका समय दक्षिण भारत में कर्णाटक संगीत का स्वर्णयुग था। त्यागराज, श्यामाशास्त्री और दीक्षितर् का वह युग था। संगीतकला के ये त्रिमूर्ति और उनकी शिष्य-परंपरा जब समस्त दक्षिण भारत को संगीत-सुधारस में निमज्जित किये हुए थे, तभी केरल में स्वातितिरुनाळ् तथा उनके सभासद उसी काम में दत्तचित्त थे। उन्हीं के सद्प्रयास से केरल को एक संगीत-परंपरा प्राप्त हुई। सर्वकलाओं में पारंगत महाराजा स्वातितिरुनाळ् उच्च-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कोटि के सरस गायक एवं गायक-कवि थे। संस्कृत, तेलुगु, तमिल, मलयालम और हिन्दी में उन्होंने कविता लिखी है। संगीत के अनन्य प्रेमी एवं विद्वान् महाराजा ने केरल में संगीत का सुन्दर वातावरण प्रस्तुत करने की अभिलाषा से प्रेरित हो श्रीरंग अय्यंगार, चिन्तामणि भागवतर (सारंगी विद्वान) और रघुनाथ राव (वीणा वादक) को अपनी राजसभा में नियुक्त किया।

स्वातितिरुनाळ् ने कई भाषाओं में कविता लिखी। किन्तु वे संस्कृत पर असाधारण अधिकार रखते थे, इस कारण अन्य भाषाओं को अपेक्षा उनकी संस्कृत रचनाएँ सर्वोच्च हैं। उनके 600 कीर्त्तन अब तक प्रकाशित हो चुके हैं। वे या तो संस्कृत या मणिप्रवाल में हैं। उनकी रचनाओं के पाँच विभाग किये जा सकते हैं—पद, वर्ण, कीर्त्तन, तिल्लना और प्रबन्ध। संगीतात्मक रचनाओं में 'नवरत्न मल्लिका' और 'नवविध भक्ति मंजरी' विद्वानों से विशेष समादृत हैं। नायक-नायिका को आधार बनाकर जो शृंगारिक पद लिखे हैं, उनके भाव मूलतः आध्यात्मिक हैं। तिरुवितांकूर के राजा लोग अपने को अनन्तशयन श्री पद्मनाभ का दास मानकर शासन करते थे और श्रीपद्मनाभ उनके कुल-देवता हैं। अतः स्वातितिरुनाळ् ने भी पद्मनाभ को अपनी कविता का नायक बनाया है। 'पन्नगेश शयनम्' में जो आठ पद्य हैं, उनमें श्रीपद्मनाभ को प्रिय मानकर कवि ने प्रेमिका-रूप में अपने हृदयगत भावों को अभिव्यक्त किया है। 'नव रात्रि कीर्त्तन' नाम से उन्होंने अनेक कीर्त्तन भी लिखे हैं। वे त्यागराज के समकालीन थे और उनके कीर्त्तनों से इतने प्रभावित थे कि उन्हें अपनी सभा में सम्मिलित करने का काफी प्रयत्न किया था। भक्तिमंजरी, श्रीपद्मनाभ शतकम्, अजामिलोपाख्यानम्, स्तानन्दूरपुरवर्णन प्रबंधम् और कुचेलोपाख्यानम् उनकी संस्कृत रचनाएँ हैं। 'उत्सव प्रबंधम्' उनकी मलयालम-रचना है। उनके लिखे कई गीत भी मलयालम में उपलब्ध हैं। इन गीतों में एक विरहिणी नायिका के संतप्त हृदय के भावोद्गार हैं। महाराजा ने अपने को एक गोपिका मानकर श्रीपद्मनाभ रूपी प्रिय के लिए अपने हृदय-पुष्प को अर्पित किया है। इन गीतों पर जयदेव के गीत गोविन्द का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। कुछ विद्वानों ने इन गीतों को भक्तिरस-प्रधान घोषित कर दिया है तो अन्य ने उनकी शृंगारिक प्रवृत्ति देखकर उन्हें लौकिक शृंगार के अन्तर्गत रखने का प्रयास किया है।

स्वातितिरुनाळ् ने हिन्दी भाषा पर अधिकार प्राप्त कर लिया था। उन्होंने हिन्दी कैसे सीखी, उनके आचार्य कौन थे—ये सब शोध के विषय हैं। उनके लिखे 37 हिन्दी पद अब तक प्राप्त हो चुके हैं। ये पद कुछ तो कृष्ण, शिव, राम और सरस्वती संबंधी स्तुति-पद हैं तो शेष विरह-मिलन के प्रसंगों पर आधारित हैं। सरस्वती की स्तुति में उन्हें शर्वाणी, त्रिभुवन सुखदायी तथा विद्या-स्वरूपिणी माना गया है।

जय जय देवि जय जग-जननी जय-जय सरस्वती माई ।। टेक
जय जय भवानी जय शर्वाणी जय त्रिभुवन सुखदाई ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तेरी ही माया अनन्त अपार-न्यारा जा कु कोई नहीं पाई ।।
हस्त-कमल मो बीण विराजे जा में सबे सुर गाई ।
दूसरो हाथ विराजत पुस्तक वेद श्रुति उपजाई ।।
तेरो रे रूप भयो सब विद्या सुर नर चरण मनाई ।
पद्मनाभ-प्रभु-चरण सरोरुह-सेवक के मन भाई ।।

शिव की वंदना करते हुए उन्हें करुणा-निधान, जन्म-मृत्यु की फाँसी तोड़नेवाले, सब कुछ कहा गया है तो कवि-दृष्टि उनके रूप पर भी पड़ी है । उनके श्रीराम-दरबार का वर्णन बड़ा ही मोहक है ।

अवध सुखदाई अब बाजे बधाई
रतन सिंघासन के पर रघुपति सीता सहित सुहायो ।
राम भरत सुमित्रानंदन ठाढ़े चामर चतुर डुलायो ।। अवध०
गाँव-गाँव जन मंगल गावत देवन बजायो ।
राम रावण मारे असुर सब मारे राज विभीषण पायो ।। अवध०
मात कौसल्या करत आरती निज मन वांछित पायो ।
राम पद्मनाभ प्रभु फणि पर शायी त्रिभुवन सुख करि आयो ।। अवध०

इन स्तुति-गीतों में कवि की अगाध भक्ति, दास्य-भावना एवं आत्मसमर्पण की भावना स्पष्ट व्यंजित होती है । यह विशेष ध्यान देने योग्य है कि स्वातितिरुनाळ् पर न राजसी ठाट-बाट या वैभव का कोई प्रभाव पड़ा, न उस काल की विलासिता का । वे स्वभाव से संत थे और तिरुवनंतपुरम श्रीपद्मनाभ मंदिर में प्रतिष्ठापित अनन्त-शय्या पर विराजित भगवान उनके चिराराध्य थे । यही बात उनके सरस्वती या शिव संबंधी स्तुति-गीतों में स्पष्ट है । वे पद्मनाभ-प्रभु का विस्मरण नहीं कर सकते । यही कारण है, सरस्वती-स्तुति में वे कहते हैं कि 'पद्मनाभ प्रभु-चरणसरोरुह-सेवक के मन में सरस्वती भाती हैं ।' शिव की वंदना करते समय भी पद्मनाभ-प्रभु का स्मरण बराबर रहता है और कहते हैं—'पद्मनाभ कमलनयन त्रिनयन त्रिभुवन शंभु महेश भज ले ।' यही पद्मनाभ-प्रभु के प्रति अनन्य निष्ठा एवं शरणागति की प्रार्थना उनकी भक्ति-साधना का आधार है । यह अनन्य भाव उनकी समस्त रचनाओं में पाया जा सकता है । महाकवि तुलसीदास में और सूरदास में अनन्य भक्ति का जो दर्शन होता है वही भाव महाराजा स्वातितिरुनाळ् में दर्शित होता है । सूरदास ने लिखा था—

"मेरा मन अनंत कहाँ सुख पावै
जैसे उड़ि जहाज़ को पंछी फिरि जहाज़ पर आवै ।"

तुलसीदास यहाँ तक पूछ बैठे 'जाऊँ कहाँ तजि चरन तुम्हारे ।'
श्रीराम की विनय में स्वातितिरुनाळ् बिलकुल इसी अटल भक्ति एवं अनन्य भाव का परिचय देते हैं—

रामचन्द्र प्रभु ! तुम बिनु प्यारे कौन खबर ले मेरी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाज रही जिनकी नगरी मो सदा धरम की भेरी
जाके चरण-कमल की रज से तिरिया तन कू फेरी
औरन कूँ कछु और भरोसा हमें भरोसा तेरो। (रामचंद्र०)
पद्मनाभ प्रभु फणि पर शायी कृपा करो क्यों देरी। (रामचंद्र०)

श्री कृष्ण के नाना रूपों का वर्णन स्वातितिरुनाळ् ने किया है। फिर भी श्रीकृष्ण के मुरलीधर, गोपी-चितचोर पीतांबरधारी कुंजविहारी रूप पर उनकी चिर आस्था है। वे सदा उनसे एक ही प्रार्थना करते हैं कि अनन्य शरण देने की कृपा करें। देखिए—

(1) कबहुं नहीं मोकू नाथ बिसारो।
(2) काटो मेरे दुरिद फंद पद्मनाभ-पद रे।

स्वातितिरुनाळ् का भक्त-हृदय इस बात से भली-भाँति परिचित है कि उसके भगवान् ने कई पतितों का उद्धार पहले किया है—

एक क्षण में केते पतित सिधारे प्यारे।
पीता तारे सुदामा तारे वेस्वा तारे अजामिल न्यारे
× × ×
भज ले रामकृष्ण मधुसूदन पुरुषोत्तम ब्रजराज मुरारे
जंबवत राखे अधम उधारण पद्मनाभ प्रभु नाथ हमारे॥

स्वातितिरुनाळ् ने गोपालक श्रीकृष्ण की बाल-सहज सरलता एवं भोलेपन पर भी पर्याप्त प्रकाश डाला है। सूरदास बाल-मनोविज्ञान के पारखी थे और उन्होंने श्रीकृष्ण की मधुर लीलाओं के सरस पद गाये हैं। स्वातितिरुनाळ् ने कृष्ण-लीला पर अधिक पद नहीं लिखे, किन्तु जितना लिखा अवश्य ही मोहक एवं स्वाभाविक है। सूरदास का बालकृष्ण यमुना तीर पर गोचारण केलिए जाते हुए संकुचाता था क्योंकि बलराम और सखा लोग यह कहकर उसकी खिल्ली उड़ाते थे कि वह 'मोल को लियो' है। लेकिन स्वातितिरुनाळ् का बालकृष्ण और कारण से लज्जित हो गोचारण से दूर रहना चाहता है। देखिए, कवि ने उसके भोलेपन एवं नादानगी का कैसा स्वाभाविक वर्णन किया है। वह माता यशोदा के सामने शिकायत करता है—

मैं तो नहिं जाऊँ जननी जमुना के तीर।
इतनी सुन के मात जसोदा पूछति मुरहर से
क्यों नहिं जावत धेन चरावन बालक कह हम से। मैं तो०
कहत हरी सब ग्वालिन मिल हम मींचत घन कुच से
जब सब लाज भरी ब्रजवासिन कहे न कहो दृग से। मैं तो०
तौ भी कहत सबे मधुसूदन बोलत जसुमति से
जब तक गोपिन सब हरि के मुख ढाँकत निज कर से। मैं तो०
ऐसी लीला कोटि कियो कैसे जायो मधुवन से

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पद्मनाभ प्रभु दीन उधारण पालो सब दु ख से । मैं तो०

स्वातितिरुनाळ् के गीतों में शृंगार-पक्ष का सरस वर्णन हुआ है । शृंगार के दोनों पक्षों—संयोग एवं वियोग के क्षणों का संयत वर्णन उनके काव्य में उपलब्ध है । श्रीकृष्ण को आलंबन-रूप में खड़ा करते हुए एक गोपी उनकी रूप-छटा का वर्णन अपनी सहेली से करती है—

बसी वाले ने मन मोहा ।
बोली बोले मीठी लागे दर दस उमंग करावे । (बंसी)
बेणत बाजे तान गावे निसिदिन गोपियाँ रिझायो । (बंसी)
साँवरो रँग मोहबो अंग सुमिरण तन की भुलावे । (बंसी)
कालिन्दी के तीर ठाढ़े मोहन बाँसुरी बजावे । (बंसी)
पद्मनाभ प्रभु दीनबंधु सुर न चरण मनावें ।। (बंसी)

यमुना का कछार ही इस प्रेम-प्रसंग का अनुकूल स्थान है । वहाँ का कुंज, यमुना की जलधारा और कोयल की मादक कूक उद्दीपन का कार्य करती है तो प्रेमार्त्ता नायिका श्रीकृष्ण को यमुना के कगारे पर रमण करने का आमंत्रण देती है और समझाती है कि लाख प्रयत्न करने पर भी वह उन्हें जाने नहीं देगी—

चलिये कुंजन मो तुम हम मिल श्याम हरी
देखा जमुना रे बही सुन्दर अतिनीर भरी । (चलिये)
छोड़िये कैसे मारेकूं मैं तो तेरो हाथ धरी । (चलिये)
सुनिये कोइल के बोल पिया क्या कह री । (चलिये)

यही क्यों, श्रीकृष्ण और गोपियों की रासलीला के प्रसंग का भी सरस वर्णन स्वातितिरुनाळ् के गीतों में प्राप्त है । स्वयं संगीत में पारंगत होने के कारण रास-लीला का अत्यन्त मोहक एवं कमनीय चित्र अंकित किया है कि पूरा चित्र उभर आता है ।

साँवरो तेरी मुरली धुन से बावरी भयी
सबे व्रजनारी ।
झननन सननन छुंछनननह
बाजत धुनन गिरधारी । (साँवरो)
थिरकत थैतक धोंतरि किटतक नाचत सब मिल
श्रुतिगति कारी सयनन से सब के दुःख नासत
पद्मनाभ छवि में बलिहारी । (साँवरो)

संयोग-शृंगार के समान वियोग के भी मार्मिक वर्णन उनके यहाँ प्राप्त हैं । स्वाति-तिरुनाळ् की नायिका कई प्रकार के उपालंभ देकर प्रिय को समागम केलिए प्रोत्साहित करती है और उसका संग पाने केलिए सब कुछ करने केलिए तैयार है—

भई लो पिया चाँदनी रात अब रहियो मोरे साथ ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बिजरी से पीत डुलाऊँ भुज में भुजाहिं मिलाऊँ
सब फल हार बनाऊं मन भर-भर भूषण पाऊँ। (भई लो)
तन को अबीर लगाऊँ अंगिया के कोर खुलाऊँ
दिल के वियोग वुझाऊँ तोसे चुनरि हमारी रंगाऊँ। (भई लो)

स्वातितिरुनाळ् की नायिका विरह-ताप से बुरी तरह जली हुई है। असह्य विरह-ज्वाला में तप्त नायिका को देखिए—

सुनो सखी मेरे मन की दरदरी।
जब फिरती मैं रंग महल में
सेज पलंग पर तड़के जाती। (सुनो)
बेला चमेली दौना मरुवा
चंपे गुलाब की हार बनाती। (सुनो)
जैसे जल बिन तरसत पंछी
तरस रही मेरो पिय बिन छाती। (सुनो)
सूवत नाहि लगे गोरी निद्रा
उठ बीच-बीच पिया कू वुलाती। (सुनो)
निस दिन भर-भर चूवा रे चन्दन
अतर अरगजा अंस लगाती। (सुनो)

श्रीकृष्ण के विरह में उदास एवं श्रीहीन वृन्दावन एवं गोकुल का वर्णन भी हुआ है। श्रीकृष्ण के विरह से दुखी गायों ने तृण-नीर त्याग दिया है, सारे ग्वालबालक दुख-सागर में डूबे हुए हैं। यमुना का जल मलिन हो गया है और कुंज घड़ी भर में कुम्हला गया है। गोपियाँ वियोग में हास-परिहास से भी मुकरती नहीं। श्रीकृष्ण के छल-कपट पर व्यंग्य करती हुई गोपी उद्धव से कह रही है—

अँसुवन से हम अँचल धोवें सदा
कुवजा से प्रेम राख्यो या में कौन भलाई।

गोपियों को आँसुओं से अंचल धोने छोड़कर कुब्जा के प्रेम में फँसे कृष्ण पर कैसा करारा एवं तीखा व्यंग्य है! साथ ही गोपियों के विरह की उत्ताल लहरों का भी यहाँ आभास मिल जाता है। परनारी के साथ रात बिताकर आये श्रीकृष्ण को देखकर नायिका का मन क्षुब्ध हो उठता है—

आये गिरधर द्वारे मेरे गोरी।
अंजन अधर ललाट महावर नयन उनींदे चल आये।
शयन समय प्रभु छल बल करके कौन तिया कू बिरमाये।

अधरों पर अंजन की रेखा, ललाट पर महावर का चिह्न और उनींदे नेत्र नायक के परनारी-समागम की कथा का रहस्य खोल देते हैं। भला, अपने अधिकार को नष्ट होते देख कौन स्त्री चुप रह पाएगी!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

स्वातितिरुनाळ् पर हिन्दी के भक्तिकालीन कवियों का प्रभाव अवश्य पड़ा था, यह उनके गीतों से स्पष्ट है। मीरा, सूर तथा तुलसी के भाव उन्होंने अपनाये थे और उनको आधार बनाकर अपनी कविता लिखी थी। अपने भावों की सहज अभिव्यक्ति केलिए उन्होंने व्रजभाषा, खड़ीबोली और दक्खिनी मिश्रित हिन्दुस्तानी को अपनाया। यहाँ उनके समन्वयात्मक दृष्टिकोण का परिचय मिलता है क्योंकि उस समय व्रजभाषा का प्रचार था। लेकिन व्रजभाषा में खड़ीबोली और दक्खिनी के शब्दों को मिलाकर उन्होंने भाषा के सर्व-साधारण एवं अकृत्रिम स्वरूप का आदर्श सामने रखा। वे संगीतज्ञ थे और संगीत के स्वर-लय-ताल के अनुरूप उन्होंने शब्दों की मात्राओं में कमी-बेशी की और इस प्रकार भाषा-प्रयोग में अपनी स्वच्छन्दवृत्ति का परिचय दिया। उनकी भाषा विचारों की अभिव्यक्ति में अत्यन्त सक्षम है :

'आजु उनींदे चले आये ठाढ़ो मोरे अंगना'
'ब्रज नारी को वञ्चन करके कैसे प्रीतम सुख पाये'
'जैसे जल बिन तरस पंछी तरस रही मेरी पिय बिन छाती'
'छोड़ो हमरे प्रीतम कू हम आँचल धोवें अंसुवन से'
'अंसुवन से हम अंचल धोवें सदा, कुबजा से प्रेम राख्यो या में कौन भलाई ?'
'कमल सरोवर से उड़ पंछो कैसे जीवे बिन नीर'
औरन कूं कछु और भरोसो, हमें भरोसो तेरी'

आदि निगूढ़ भावों की अभिव्यक्ति में अतीव समर्थ हैं। भाषा की सहजता एवं सरलता, अनलंकृत स्वाभाविक भाषा-शैली यही इन गीतों के कलापक्ष की विशेषता है। उनके ये सारे पद सुन्दर गीत-शैली में लिखे गये हैं। अति संक्षिप्तता, गेयता, संगीतात्मकता एवं आत्माभिव्यक्ति इन गीतों के प्राण हैं। स्वातितिरुनाळ् एक मौलिक संगीतकार के रूप में समस्त भारत में प्रसिद्ध हैं। कर्नाटक संगीत तथा हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत दोनों का गहरा ज्ञान उन्हें प्राप्त था। संगीत में गीत, वाद्य और नृत्य का अद्भुत समन्वय देखा जा सकता है। स्वातितिरुनाळ् के समस्त गीत राग एवं ताल को दृष्टि में रखकर रचे गये हैं। भैरवी, विहाग, गौरी, अठाण, विभास, खम्माज, काफी, सुरती आदि रागों में उनके गीत निबद्ध हैं। लेकिन रागों के प्रयोग में उन्होंने थोड़ी-सी स्वतंत्रता दिखायी है। कर्णाटक संगीत एवं हिन्दुस्तानी संगीत में समन्वय लाने की उनकी दृष्टि रही। ख्याल, ध्रुपद, ठप्पा आदि गीत-भेद उनके काव्य में मिल जाते हैं। उनके अधिकतर गीतों में वाद्य एवं नृत्य का सुन्दर समावेश हुआ है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

(1) झनक झनक कनक कनक तोंत तारि तनत नारि
धिकिधा धितांक मधुर धुन बनावे।
थिरक थिरक थैय थैय दीतथीं ततक थथैय्य।
ध्रुकटधीं ध्रुकटधीं तधिन्नतान सुर मिलावे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

(2) भस्म त्रिनेत्र गलें रुण्डमाला
भूतन के संग नाचत भृंगी ।
त्वनन तनन नन घुम गुम बाजे
देव मुनी सब गगन विराजे ।

सारांश यह कि स्वातितिरुनाळ् का मलयालम एवं संस्कृत में ही नहीं, हिन्दी में भी अद्भुत अधिकार था। काव्य को संगीत से समन्वित कर उन्होंने उसकी चारुता एवं प्रभविष्णुता बढ़ायी। अपने समय की समस्त कला-प्रवृत्तियों को उन्होंने आत्मसात किया और कला के क्षेत्र में वे एक युग का प्रतिनिधित्व करते हैं। दक्षिण के प्रथम हिन्दी-गीतकार के रूप में उनका नाम अमर रहेगा। अबतक उनके 37 हिन्दी गीत ही प्राप्त हुए हैं, खोज करने पर बहुत संभव है, और भी गीत प्राप्त हों। इस दिशा में अनुसंधाताओं का ध्यान आकृष्ट होना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हिन्दी-सेवी मलयालम के लेखक

स्वतंत्रता-प्राप्ति तथा राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी को अपनाने के साथ ही साथ हिन्दी प्रचार-प्रसार आन्दोलन की एक लहर समूचे भारतवर्ष में व्याप्त हुई, जिसके फलस्वरूप सुदूर दक्षिण में स्थित केरल प्रान्त में भी—हिन्दी के पठन-पाठन की ओर विशेष अभिरुचि एवं लगन उत्पन्न होने लगा। इसका तात्पर्य यह कदापि नहीं कि स्वतंत्रता-प्राप्ति के पूर्व केरल में हिन्दी का प्रचार नहीं था; उसके पूर्व भी हिन्दी का अध्ययन होता रहा और कई केरलीयों ने हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त कर ली थी। जब से हिन्दी प्रचार को स्वतंत्रता-आन्दोलन का एक अंग माना गया, तब से केरल में मंद गति से ही सही, हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन होता रहा। स्वतंत्रता-प्राप्ति के उपरांत हिन्दी के प्रचार-प्रसार के कार्यों में ऐसी गति आ गयी कि केरल की आबाल-वृद्ध जनता में इस भाषा के प्रति उत्साह उत्पन्न हुआ, जिसका परिणाम यह हुआ कि आज केरल प्रान्त में कई गण्यमान्य हिन्दी साहित्यकार उपलब्ध हैं। आगे मलयालम-भाषी शीर्षस्थ हिन्दी-लेखकों तथा उनके हिन्दी केलिए योगदान पर संक्षेप में विचार किया जाएगा।

मलयालम-भाषी हिन्दी-लेखक इस बात पर गर्व अनुभव कर सकते हैं कि आज से लगभग 150 वर्ष पूर्व, जबकि केरल प्रान्त में हिन्दी का कहीं प्रचार नहीं था, केरल ने एक ऐसे हिन्दी-कवि को जन्म दिया, जिनका नाम आज बड़े आदर के साथ लिया जाता है। केरल के तिरुवितांकूर राज्य के महाराजा स्वातितिरुनाळ् रामवर्मा हिन्दी के महान् कवियों में से एक माने जा सकते हैं, जिनके लिखे 37 गीत आज उपलब्ध हैं। महाराजा स्वातितिरुनाळ् के ये भजन-भक्ति संबंधी गीत अपनी सहजता, सरलता, पद-लालित्य एवं विचार-सौष्ठव की दृष्टि से उच्चकोटि के हैं। भक्तिरसामृत से ओत-प्रोत ये गीत व्रज, खड़ीबोली तथा दक्खिनी हिन्दी मिश्रित भाषा में लिखे गये हैं। उनके ये सारे गीत शास्त्रीय संगीत की दृष्टि से उत्तम कोटि के हैं। उनके बाद लगभग एक सौ वर्ष तक केरल ने अपनी किसी संतान को हिन्दी में काव्य-रचना करने की प्रेरणा नहीं दी, पर स्वतंत्रता-प्राप्ति के उपरांत इस क्षेत्र में कुछ सृजनशील प्रतिभाओं का आगमन हुआ, जिनमें देव केरलीय, पी. वी. विजयन, डा. एन. चन्द्रशेखरन नायर, श्रीमती भारती देवी, पी. नारायण आदि उल्लेखनीय हैं। इनमें भी डा. चन्द्रशेखरन नायर की काव्य-पटुता प्रशंसनीय है। 'हिमालय गरज रहा है', उनका बहुचर्चित खण्डकाव्य है, जिसकी प्रत्येक पंक्ति में देशप्रेम एवं राष्ट्रीयता का स्वर मुखरित हो रहा है। पी. वी. विजयन ने भी इस क्षेत्र में सराहनीय कार्य किया है। इनके कुछ व्यंग्य गीतों का संग्रह 'कथ्य और तथ्य' के शीर्षक से प्रकाशित हुआ है, जो भारत सरकार की ओर से पुरस्कृत भी हुआ है। दूसरे कवियों ने लघुगीत लिखे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हैं, जो समय-समय पर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। 'देव केरलीय' के उपनाम से पी. नारायणदेव की कई कविताएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं और 'आरती' नाम से उनकी कविताओं का एक संकलन भी प्रकाशित हुआ है। उनकी कविता अपनी सरलता एवं सहजता की दृष्टि से प्रशंसनीय है। 'नरन्' उपनामधारी पी. नारायण की फुटकर कविताएँ 'ललकार' जैसी पत्रिकाओं में समय-समय पर प्रकाशित होती रही हैं। उनकी प्रगतिशील विचारधारा इन कविताओं में स्पष्ट है। भाषा पर उनका अधिकार विशेष द्रष्टव्य है। केरल के प्रथम हिन्दी प्रचारकों में अग्रगण्य विद्वान् के. वासुदेवन् पिल्लै ने कई फुटकर कविताएँ रचीं जो 'राष्ट्रवाणी' पत्रिका में स्थान पाती रहीं। केरल की महिमा में लिखे गये उनके कुछ दोहे विशेष प्रशंसनीय हैं। डा. दामोदर प्रसाद की लघु कविताओं का एक संग्रह 'तीन मूर्त्ति' नाम से पुस्तकाकार प्रकाशित हुआ है। एस. गणेश अय्यर कई संभावनाएँ लिये हुए तरुण कवि हैं। उनकी फुटकर रचनाएँ कालेजी पत्रिका में स्थान पाती आ रही हैं। इनके अतिरिक्त कृष्णन् कुट्टी, गीता, जैसे इने-गिने कवियों में काव्य-प्रतिभा का आभास मिलता है, जो अनुकूल वातावरण मिलने पर भविष्य में सुन्दर कविताएँ लिख सकेंगे। साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा काव्य-रचना की ओर बहुत कम मलयालम-भाषियों ने ध्यान दिया है। हिन्दी भाषा-भाषी कवियों की स्पर्धा में अपनी कविताओं के टिक पाने की आशंका ने संभवतः इस दिशा से लोगों को विरत कर दिया है।

साहित्य की अन्य विधाओं जैसे कहानी नाटक, निबंध, समीक्षा आदि में केरल के प्रबुद्ध साहित्यकारों ने अपना अनुपम योगदान दिया है। मलयालम-भाषी हिन्दी कहानीकारों में डा. गोविन्द शेनाय, डा. चन्द्रशेखरन नायर, विद्वान् के. नारायणन् आदि के नाम बड़े सम्मान के साथ लिये जा सकते हैं। डा. गोविन्द शेनाय ने रेखाचित्रात्मक कई व्यंग्य कहानियाँ लिखी हैं जो 'मिस्टिक साहब का कुर्ता' के नाम से प्रकाशित हुई हैं। यह कहानी-संग्रह भारत सरकार की ओर से पुरस्कृत हुआ है। उनकी दूसरी व्यंग्य-रचना है 'आगे कौन हवाल।' प्रकृति से सहृदय शेनाय की कहानियाँ हास्य-व्यंग्य का अजस्र स्रोत हैं और भाषा पर उनका विशेष अधिकार भी लक्षित होता है। डा. चन्द्रशेखरन नायर की आठ मौलिक कहानियों का संग्रह 'हार की जीत' के नाम से प्रकाशित हुआ है और उनकी ये सारी कहानियाँ भावुकता एवं कल्पना के रंगीन चित्रों से समालंकृत हैं। उनका दूसरा कहानी-संग्रह 'प्रोफसर और रसोइया' के नाम से हाल ही में प्रकाशित हुआ जो केन्द्र सरकार से पुरस्कृत भी हुआ। पात्र-सृष्टि में डा. नायर को विशेष सफलता प्राप्त हुई है। के. नारायणन् की कहानियाँ देश की प्रसिद्ध पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं और वे एक लंबे समय से कहानियाँ लिखते आ रहे हैं। और भी कई कहानीकार हैं, जो समय-समय पर पत्रिकाओं में लिखते आ रहे हैं। ऐसे प्रतिभावान कहानीकारों में के. परमेश्वरन् पिल्लै,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

के. कृष्ण मेनन, सी. जी. गोपाल कृष्णन् आदि के नाम लिये जा सकते हैं, जिनकी कहानियाँ समय-समय पर केरल भारती, युग प्रभात, राष्ट्रवाणी, केरल ज्योति आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं। इतना होते हुए भी यह स्वीकार करना पड़ता है कि पुस्तकाकार प्रकाशित कहानियाँ अभी कम हैं। यह बड़े दुख की बात है कि किसी भी मलयालम-भाषी हिन्दी-साहित्यकार का ध्यान उपन्यास-रचना की ओर नहीं गया। उपन्यास-रचना केलिए आवश्यक पर्यवेक्षण दृष्टि, जीवनानुभव तथा व्यावहारिक भाषाज्ञान का अभाव इसका कारण हो सकता है। कुछ भी हो उपन्यास-क्षेत्र उनकी दृष्टि से उपेक्षित रहा।

यह बड़े गर्व के साथ कहा जा सकता है कि मलयालम के कुछ हिन्दी-प्रेमियों ने नाटक के क्षेत्र में ऐसा महान कार्य करके दिखाया है, जिसका भविष्य में हिन्दी-साहित्य का इतिहास लिखते समय अवश्य ही मूल्यांकन होगा। हाँ, यह दूसरी बात है कि ये नाटक बहुत कम ही प्रकाशित हुए हैं। डा. चन्द्रशेखरन नायर तथा के. वी. कृष्णन् कुट्टी की रचनाओं ने प्रकाशित होने का सौभाग्य प्राप्त किया है। डा. चन्द्रशेखरन नायर मूलतः नाटककार हैं और उन्होंने नाटक और एकांकी के क्षेत्र में अत्यन्त प्रशंसनीय कार्य किया है। उनका 'देवयानी' नाटक हिन्दी में विशिष्ट स्थान का अधिकारी है। कथावस्तु, पात्र-सृष्टि, भाषा-सौष्ठव एवं उद्देश्य की दृष्टि से इस नाटक का विशिष्ट स्थान है और भारत सरकार ने उसे पुरस्कृत कर उसकी गरिमा में चार-चाँद लगाये हैं। 'कुरुक्षेत्र जागता है', डा. नायर का एकांकी-संग्रह है और इसमें संगृहीत सभी एकांकी अभिनय की दृष्टि से पूर्णतया सफल हैं। 'युग-संगम' उनका एक और नाटक भी पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका है। के. वी. कृष्णन कुट्टी का 'लघुरूपक' शीर्षक से प्रकाशित एकांकी-संग्रह बालकों केलिए शिक्षाप्रद है।

पुल्लाट्टु लक्ष्मीक्कुट्टि अम्मा सृजनात्मक प्रतिभा से युक्त एक सफल नाटककार हैं। उनका 'तीन एकांकी' शीर्षक से युक्त एकांकी-संग्रह एकांकी-कला की दृष्टि से पर्याप्त उच्चकोटि का है और यह संग्रह भारत सरकार से पुरस्कृत भी हुआ है। नाटक या एकांकी की रचना में और कोई लेखक आगे नहीं आ पा रहा है। वास्तव में इस दिशा में पर्याप्त कार्य होना चाहिए और केरल में अन्य प्रान्तों की अपेक्षा नाटक केलिए अनुकूल वातावरण है।

मलयालम-भाषी हिन्दी-निबंधकारों की संख्या पचास से ऊपर होगी। इस विधा ने कई प्रभविष्णु साहित्यकारों को प्रेरणा दी है और उनके कई ललित एवं साहित्यिक निबंध देश की प्रमुख पत्रिकाओं में प्रकाशित होते आ रहे हैं। इन निबंधकारों को तैयार करने में केरल भारती, साहित्यमंडल पत्रिका, केरल ज्योति, और युगप्रभात जैसी पत्रिकाओं का वरदहस्त रहा है। आज कई हिन्दी निबंधकार तैयार हो चुके हैं, जिनके निबंध भारत के उच्चस्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में स्थान पाते आ रहे हैं। इन निबंधकारों में डा. विश्वनाथ अय्यर, डा. मलिक मुहम्मद, डा. एन.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चन्द्रशेखरन नायर, डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, श्रीमती लक्ष्मीकुट्टिअम्मा, पी. कृष्णन्, डा. के. हरिदासन पिल्लै, डा. गोविन्द शेनाय, डा. भास्करन नायर, के. रविवर्मा आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। डा. चन्द्रशेखरन नायर के निबंध-संग्रह 'भारतीय साहित्य और कलाएँ' तथा 'भारतीय साहित्य' के नाम से प्रकाशित हैं। डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै के 'हिन्दी निबंध', 'प्रबन्ध प्रदीप' और 'अध्ययन और अनुसंधान' साहित्यिक एवं समीक्षात्मक निबंध-संग्रह हैं। मलयालम साहित्य और उसकी विभूतियों को निबंध के माध्यम से हिन्दी-जगत् में उजागर करने में डा. चन्द्रशेखरन नायर, डा. कुट्टन पिल्लै तथा पी. कृष्णन् का विशेष हाथ रहा है। डा. मलिक मुहम्मद के संपादकत्व में हाल ही में 'अमीर खुसरो' शीर्षक पर कुछ समीक्षात्मक निबंधों का एक संग्रह निकला है। मलयालम की साहित्यिक विधाओं पर कई निबंध पी. आर. भास्करन नायर ने तैयार किये हैं जो आकाशवाणी, मद्रास से प्रसारित भी हुए हैं।

आनंदशंकर माधवन उच्चकोटि के निबंधकार हैं। 'अनल शलाका' और 'हिन्दी आन्दोलन' उनके विचारोत्तेजक चिन्तन-प्रणाली से युक्त निबंधों के संग्रह हैं। सशक्त अभिव्यक्ति एवं गंभीर विचार उनके इन निबंधों की मौलिकता है। डा. चन्द्रशेखरन नायर का निबंध-संग्रह 'निबंध मंजूषा' तथा डा. विश्वनाथ अय्यर का 'निबंधोपहार' विद्यार्थियों को दृष्टि में रखकर लिखा हुआ है जो विषय-प्रतिपादन की शैली की दृष्टि से बहुत ही उपयोगी है। डा. पी. के. कुञ्जिरामन् ने मलयालम-साहित्य से संबंधित कई निबंध लिखे हैं जो केरल भारती, युग प्रभात जैसी पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। कर्णाटक संगीत के विद्वान् पी. नारायणन् ने संगीत-संबंधी अपने कई लेख लिखे हैं, जो अवश्य ही श्लाघनीय हैं। पी. कृष्णन्, एम. के. रवीन्द्रन्, डा. एन. आर. इलेडम्, डा. वेल्लायणि अर्जुनन्, डा. के. आर. शशिधरन् पिल्लै, डा. रामन् नायर, रविवर्मा, के. जे. जोण, डा. सरला देवी, वी. डी. कृष्णन् नंपियार, के. जे. थोमस आदि भी निबंध-लेखन के क्षेत्र में विशेष रुचि दिखाते आ रहे हैं। इस प्रसंग में श्रीमती लक्ष्मी मेनन् का पृथक् व्यक्तित्व है। उन्होंने संस्मरणात्मक निबंध लिखने की प्रणाली का सूत्रपात किया है। सहजता एवं निर्व्याज अभिव्यक्ति इन निबंधों की विशेषता है। उनका संस्मरणात्मक निबंध-संग्रह 'यादें' केन्द्र सरकार द्वारा पुरस्कृत हुआ है।

हिन्दी आलोचना-साहित्य में केरल के साहित्यकारों का प्रशंसनीय योगदान रहा है। केरलवासियों का यह आलोचना-साहिय दो रूपों में प्राप्त होता है—एक शुद्ध समीक्षात्मक रचनाएँ और दूसरा शोध-प्रबंध। शुद्ध आलोचनात्मक रचनाएँ लिखने वालों में डा. सरलादेवी, डा. विश्वनाथ अय्यर, डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, एन. वेंकटेश्वरन, पी. के. केशवन नायर, डा. के. भास्करन नायर आदि प्रमुख हैं। डा. सरलादेवी की आलोचनात्मक पुस्तक 'हिन्दी साहित्य में नारी' भारत सरकार

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

से पुरस्कृत हुई है। डा. विश्वनाथ अय्यर ने 'कुमारन् आशान् : व्यक्तित्व और कृतित्व' नामक पुस्तक का संपादन किया है। आलोचना के क्षेत्र में डा. कुट्टन पिल्लै ने विशेष कार्य किया है। 'पंत : छायावादी व्यक्तित्व और कृतित्व', 'प्रसाद और कामायनी' तथा 'संत कबीर' उनकी प्रकाशित आलोचनात्मक रचनाएँ हैं। एन. वेंकटेश्वरन् ने 'केरल संस्कृति' लिखकर तथा पी. के. केशवन नायर ने 'दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार-आन्दोलन का समीक्षात्मक इतिहास' लिखकर स्तुत्य कार्य किया है।

समीक्षा के क्षेत्र में और भी कई विद्वानों ने अपनी महती सेवा अर्पित की है। उनमें डा. विश्वनाथ अय्यर, श्रीमती रत्नमयी देवी, डा. पी. कृष्णन् नायर, ए. अरविन्दाक्षन्, प्रोफसर पी. लक्ष्मीक्कुट्टि अम्मा, डा. रामन् नायर, डा एच. परमेश्वरन्, टी. के. विश्वन्, डा. रामचन्द्रदेव, जे. रामचन्द्रन् नायर और एस. तंकमणि अम्मा का योगदान अविस्मरणीय है। 'राष्ट्रभारती को केरल का योगदान' तथा 'प्राचीन कवि केशवदास' डा. विश्वनाथ अय्यर की समीक्षात्मक कृतियाँ हैं। श्रीमती रत्नमयी देवी ने 'कैरली साहित्य-दर्शन' लिखकर हिन्दी-प्रदेश में मलयालम साहित्य को उजागर करने का स्तुत्य कार्य किया है। 'मलयालम साहित्य स्रष्टा' डा. पी. कृष्णन नायर की तूलिका की उपज है। ए. अरविन्दाक्षन् ने 'महादेवी वर्मा के रेखाचित्र' लिखकर आलोचना के क्षेत्र में प्रशंसनीय कार्य किया है। यह कृति उत्तर प्रदेश शासन से पुरस्कृत हुई है। प्रोफसर लक्ष्मीक्कुट्टि अम्मा बड़ी भावुक लेखिका हैं और उनकी रचना 'केरल का स्वर्गिक स्थान गुरुवायूर' गुरुवायूर मंदिर और वहाँ प्रतिष्ठित भगवान की अनुकंपा पर परम श्रद्धांजलि अर्पित करती है। पाश्चात्य काव्यशास्त्री होरेस के विचारों को हिन्दी के माध्यम से विद्वानों के समक्ष प्रस्तुत करने का श्लाघनीय कार्य डा. रामन् नायर की 'होरेस की काव्य-कला' नामक कृति ने किया है। यह कृति लेखक के गंभीर अध्ययन एवं विषय-प्रतिपादन की अपूर्व क्षमता की परिचायक है। विवरणात्मक भाषा-विज्ञान जैसे दुरूह विषय को सुगम शैली में प्रस्तुत करने का कार्य डा. एच. परमेश्वरन् ने किया है और उनकी पुस्तक 'भाषिकी' अपने ढंग की अकेली रचना है। यह कृति भारत सरकार तथा उत्तर प्रदेश सरकार दोनों द्वारा पुरस्कृत हुई है। टी. एन. विश्वन् का 'कहानी: स्वर और स्वरूप' तथा डा. रामचंद्रदेव के 'तुलसी और कुंचन्' तथा 'मलयालम साहित्य का सर्वेक्षण' भी उल्लेखनीय ग्रंथ हैं। प्रोफसर जनार्दन नायर केरल के उत्साही हिन्दी कार्यकर्ता एवं प्रचारक हैं। उन्होंने हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि में अपना अमूल्य योगदान दिया है। उनके सुपुत्र जे. रामचन्द्रन् नायर तथा सुपुत्री एस. तंकमणि अम्मा ने भी आलोचना के क्षेत्र में प्रशंसनीय कार्य करके दिखाया है। रामचंद्रन् नायर की समीक्षात्मक कृति 'छायावादी काव्य-दर्शन' अपनी संक्षिप्तता एवं लघु आकार के बावजूद भी छायावादी काव्य के भावपक्ष एवं शिल्पपक्ष का समुचित मूल्यांकन प्रस्तुत करती है। एस. तंकमणि अम्मा ने 'मलयालम के खंडकाव्य' में कैरली

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

के प्राचीन एवं आधुनिक खंडकाव्यों का सुन्दर परिचय प्रस्तुत किया है। यह कृति उत्तर प्रदेश शासन का पुरस्कार भी प्राप्त लर चुकी है। स्पष्ट है, मलयालम-भाषियों ने हिन्दी-आलोचना के क्षेत्र में सराहनीय कार्य किया है और करते आ रहे हैं। उनकी इस साहित्य-साधना के समुचित मूल्यांकन की आवश्यकता है।

केरल के कई हिन्दी-प्रेमियों ने शोध-प्रबंधों के द्वारा भी हिन्दी-साहित्य की श्रीवृद्धि की है। ये शोध-प्रबंध कुछ तो तुलनात्मक हैं तो अन्य मौलिक विषयों पर हैं। हिन्दी तथा मलयालम साहित्य की प्रवृत्तियों, युगों एवं साहित्यकारों के तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा उत्तर-दक्षिण के बीच सेतु का कार्य संपन्न हुआ है। इन तुलनात्मक शोधकर्त्ताओं में डा. के. भास्करन नायर (हिन्दी और मलयालम में कृष्णभक्ति काव्य), डा. एन. आई. नारायणन् (मलयालम और हिन्दी नाटकों का तुलनात्मक अध्ययन), डा. रामन् नायर (हिन्दी और मलयालम के भक्तिकालीन काव्य में वात्सल्य रस), डा. एम. जार्ज (एषुत्तच्छन् और तुलसीदास), डा. पी. के. विजयन् (प्रसाद और आशान् का तुलनात्मक अध्ययन), डा. गोविन्द शेनाय (वर्तमान हिन्दी और मलयालम कथा-साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन), डा. के. एस. मणि (वल्लत्तोल और मैथिलीशरण गुप्त का तुलनात्मक अध्ययन), डा. एन. चंद्रशेखरन् नायर (हिन्दी तथा मलयालम के कवि), डा. विश्वनाथ अय्यर (हिन्दी और मलयालम काव्य की रूपरेखा), डा. पी. के. कुंजिरामन् (आधुनिक हिन्दी तथा मलयालम के खण्डकाव्यों का तुलनात्मक अध्ययन), डा. सुभद्राम्मा (हिन्दी और मलयालम का रामकाव्य), डा. दामोदर प्रसाद (हिन्दी और मलयालम के उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन), डा. पद्मावती (हिन्दी और मलयालम का प्रगतिवादी काव्य), डा. इलेडम् (हिन्दी और मलयालम में साहित्य-समीक्षा : एक तुलनात्मक अध्ययन), डा. शीला (तकपी और प्रेमचन्द के कथा-साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन), डा. जस्टिन अब्रहाम (हिन्दी और मलयालम का कहानी-साहित्य) और डा. राधादेवी (बालामणि अम्मा और महादेवी वर्मा का तुलनात्मक अध्ययन) विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

स्वतंत्र विषय लेकर शोधकार्य करने वाले बहुत कम हैं। इनमें डा. गणेशन् का कार्य प्रशंसनीय रहा। उन्होंने हिन्दी उपन्यास-साहित्य के उद्भव और विकास पर गहरा अध्ययन प्रस्तुत किया है। डा. रामचन्द्रदेव का शोधप्रबंध निर्गुण-भक्ति साहित्य के दार्शनिक स्रोत पर रहा। डा. सरलादेवी ने 'मैथिलीशरण तथा प्रसाद के नारी पात्र' विषय पर सराहनीय कार्य किया है। डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै ने 'पंत-काव्य में बिम्ब-योजना' विषय पर अपना शोध-प्रबंध लिखा जो उत्तर प्रदेश सरकार से पुरस्कृत भी हुआ है। डा. सुनीता ने 'मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में सांस्कृतिक पक्ष' पर शोध-कार्य किया। डा. सिस्टर क्लेमेन्ट मेरी ने 'हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर विचारात्मक गद्य' पर तथा डा. जेकब पी. जार्ज ने 'आधुनिक हिन्दी गद्य और गद्यकार' पर शोधकार्य किया है। विषय की गहराई तथा विषय-प्रतिपादन की अपूर्व

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

क्षमता की दृष्टि से ये दोनों शोध-प्रबंध अपने-आप में महत्वपूर्ण शोध-उपलब्धि हैं। डा. फिलिप ने 'भक्ति साहित्य में विरह-भावना', डा. अनन्तरामन् ने भारतेन्दु के नाटक', ड्रा. जी. गोपीनाथन् ने 'केरलीयों की हिन्दी को देन', डा. एन. रवीन्द्रन् ने 'प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी-उपन्यास-साहित्य पर मार्क्सवाद का प्रभाव', डा. पी. के. पद्मजा ने 'स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी-उपन्यास साहित्य पर समकालीन सामाजिक एवं राजनीतिक विचारधाराओं का प्रभाव' और सुशीलाम्मा ने 'हिन्दी भक्तिकाव्य की सामाजिक भूमिका' पर शोधकार्य किया है। डा. एच. परमेश्वरन् तथा डा. वेल्लायणि अर्जुनन् ने भाषाशास्त्रीय अध्ययन के प्रति अपना लगाव दिखाया है। डा. परमेश्वरन् ने रामचरित मानस के भाषाशास्त्रीय अध्ययन पर पी-एच. डी. ली है तो डा. वेल्लायणि अर्जुनन् ने पी-एच. डी. तथा डी. लिट् केलिए क्रमशः 'हिन्दी तथा मलयालम की समान शब्दावली का भाषाशास्त्रीय अध्ययन' तथा 'दक्षिण भारतीय भाषाओं पर हिन्दी शब्दावली का प्रभाव' पर शोधकार्य किया है। दोनों के शोधकार्य नयी दिशा के द्योतक हैं और अवश्य ही महत्वपूर्ण हैं।

उपर्युक्त शोध-प्रबंधों में से बहुत कम ही पुस्तकाकार प्रकाशित हुए हैं। डा. भास्करन नायर, डा. विश्वनाथ अय्यर, डा. क्लेमेंट मेरी, डा. जेकब पी. जार्ज, डा. जी. गोपीनाथन्, डा. एन. आई. नारायणन्, डा. के. एस. मणि, डा. गणेशन्, और डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै के शोधप्रबंध पुस्तक रूप में प्रकाशित हुए हैं।

इस संदर्भ में कुछ अन्य साहित्यकारों के नाम भी स्मरण आते हैं, जिन्होंने हिन्दी अध्ययन-अध्यापन के उषाकाल में हिन्दी सीखने केलिए सहायक पुस्तकों, पाठ्य पुस्तकों, व्याकरण-ग्रंथों आदि की रचना करके विद्यार्थियों तथा अध्यापकों का पथ-प्रदर्शन किया। केरल प्रान्त के प्रारंभिक हिन्दी-प्रचारक सर्वश्री पी. के. केशवन नायर तथा चन्द्रहासन् के प्रयत्नों से वर्षों पहले 'हिन्दी मलयालम स्वबोधिनी' का निर्माण हुआ, जिसने हिन्दी के उत्साही विद्यार्थियों को आकृष्ट किया। डा. विश्वनाथ अय्यर की 'स्वतंत्र हिन्दी बोधिनी' भी लोकप्रिय हुई। छोटी कक्षाओं के विद्यार्थियों को सरल भाषा में व्याकरण सिखाने के उद्देश्य से कई लेखकों ने हिन्दी-व्याकरण की पुस्तकें लिखीं। ऐसे लेखकों में डा. एम. जार्ज, श्री पी. के. केशवन नायर तथा डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै का योगदान उल्लेखनीय है। हिन्दी-व्याकरण लिखने के अतिरिक्त डा. कुट्टन पिल्लै ने सन् 1959 में हिन्दी तथा मलयालम का तुलनात्मक व्याकरण भी लिखा, जो उस दिशा में केरल-भर में पहला प्रयास था और किताब महल, इलाहाबाद ने उसका प्रकाशन भी किया। पाठ्य-पुस्तकों के निर्माताओं में डा. भास्करन् नायर, डा. विश्वनाथ अय्यर, पी. के. केशवन् नायर, प्रो. चन्द्रहासन्, पी. अब्राहाम, डा. सरलादेवी, पी. जी. वासुदेव, डा. रामन् नायर तथा डा. कुट्टन पिल्लै के नाम लिये जा सकते हैं। इसी प्रसंग में बालकोपयोगी जीवनियों की रचना कर ने वाले पी. जी. वासुदेव विशेष स्मरणीय हैं। बच्चों के श्री कुंचन्, बच्चों के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

श्रीचट्टंपी, बच्चों के श्री शंकर आदि पुस्तकें पी. जी. वासुदेव की देन हैं। डा. विश्वनाथ अय्यर ने 'महाकवि रवीन्द्रनाथ', 'विज्ञान योगिनी' तथा 'केरल के प्रथम हिन्दी गीतकार' शीर्षक से तीन जीवनियाँ सरल एवं सुबोध भाषा में प्रस्तुत की हैं। जीवनी-साहित्य लिखने वालों में डा. दामोदर प्रसाद और कुन्नुकुषि कृष्णन कुट्टी ने भी विशेष कार्य किया है। कृष्णन कुट्टी के 'कविवर रवीन्द्रनाथ', और 'स्वाति-तिरुनाळ्' तथा डा. दामोदर प्रसाद का 'स्वतंत्रता के सिपाही' बालकों केलिए शिक्षा-प्रद एवं लाभदायक हैं। कृष्णन कुट्टी का 'स्वातितिरुनाळ्' एक सुन्दर परिचयात्मक ग्रंथ है जिसमें लेखक ने महाराजा स्वातितिरुनाळ् की जीवनी, संगीत एवं साहित्य केलिए उनकी देन आदि पर चर्चा करने के साथ ही उनकी हिन्दी-रचनाओं का संग्रह भी किया है। अतः यह ग्रंथ विशेष महत्व रखता है।

केरल के हिन्दी-लेखकों का ध्यान कुछ इतर विषयों पर भी गया है। पी. के. केशवन नायर तथा प्रो. चन्द्रहासन् ने विद्यार्थियों को दृष्टि में रखते हुए एक हिन्दी-मलयालम कोष का संपादन किया। हिन्दी प्रशिक्षण महाविद्यालय के छात्रों के लाभार्थ प्रो. लक्ष्मीक्कुट्टि अम्मा ने 'शिक्षा-भारती' तथा राजप्पन् नायर ने 'राष्ट्रभाषा शिक्षण' नाम की पुस्तकें रचीं, जो बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुईं। श्रीमती पद्मिनी मेनन् के 'पुराण संदर्भ कोष' का उल्लेख होना आवश्यक है जिसमें आयी पौराणिक कथाएँ विद्यार्थियों केलिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होंगी।

उपर्युक्त मौलिक रचनाओं से हिन्दी की श्रीवृद्धि हुई। पर केरल के हिन्दी लेखक उत्तर-दक्षिण की भावात्मक एकता की कड़ी बने रहने में विशेष गर्व का अनुभव करते आ रहे हैं। इस दिशा में उनके अनुवाद-साहित्य ने आश्चर्यजनक कार्य किया है। केरल के हिन्दी-लेखक एक-साथ दो भाषाओं के विद्वान् हैं और इस ज्ञान का उपयोग वे अनुवाद के कार्यों में करते आ रहे हैं। कई लेखकों ने हिन्दी के श्रेष्ठ ग्रंथों के अनुवाद मलयालम में और मलयालम की श्रेष्ठ कृतियों के अनुवाद हिन्दी में प्रस्तुत किये। ये अनुवाद पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। मलयालम के दो प्रसिद्ध उपन्यास तोट्टियुटे मकन् (भंगी का बेटा) और रंटिटंगषि (दो सेर धान) का अनुवाद श्रीमती भारती विद्यार्थी ने किया। 'युग प्रभात' के सह-संपादक रविवर्मा ने वैक्कम् बषीर के उपन्यास 'एन्टुप्पाप्पाक्कोरु आनयुण्टायिरुन्नु' (दादा का हाथी) का, वेट्टूर रामन् नायर ने 'जीविक्कान् मरन्न स्त्री' (जो जीना भूल गयी) का अनुवाद प्रस्तुत किया। वैसे ही डा. गोविन्द शेनाय, वसुदेवन पिल्लै, अभयदेव, नारायणदेव, श्रीधर मेनोन, जी. नारायण पिल्लै, डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, डा. विश्वनाथ अय्यर आदि ने कई मलयालम-ग्रंथों का अनुवाद हिन्दी में प्रस्तुत किया है। इनमें भी जी. शंकर कुरुप के ओटक्कुषल् (बांसुरी) का अनुवाद तथा मट्टोरु-नचिकेता (और एक नचिकेता) का अनुवाद प्रसिद्ध है। नारायणदेव और माधवन् के संयुक्त प्रयास से मलयालम के महाकवि कुमारन् आशान् के काव्यग्रंथ 'वीणपूवु' (झड़ गया

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पुष्प) का अनुवाद प्रस्तुत हुआ। मलयालम के संत कवि एषुत्तच्छन् की 'अध्यात्म रामायण और 'उत्तर रामायण' का सानुवाद लिप्यन्तरण डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै ने किया और दोनों पुस्तकें भुवन-वाणी ट्रस्ट, लखनऊ से प्रकाशित हो रही हैं।

सुब्रह्मण्य अय्यर ने मलयालम 'महाभारतम्' का सानुवाद लिप्यन्तरण प्रस्तुत किया है, जो भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ द्वारा प्रकाशित भी हुआ है। अनुवाद के क्षेत्र में पी. जी. वासुदेव की देन अविस्मरणीय है। मलयालम की श्रेष्ठ कहानियों, एकांकियों निबंधों का उन्होंने सुन्दर अनुवाद प्रस्तुत किया है। साथ ही विष्णु प्रभाकर तथा डा. धर्मवीर भारती के उपन्यासों का मलयालम-अनुवाद भी उन्होंने किया। डा. विश्वनाथ अय्यर ने मलयालम के प्रसिद्ध उपन्यासकार मलयाट्टूर रामकृष्णन् के उपन्यास 'वेरुकळ्' का अनुवाद 'जड़ें' शीर्षक से किया है। अनुवादकों में लक्ष्मण शास्त्री, हर्षवर्धनन्, रविवर्मा, पद्मिनी मेनन, प्रोफसर लक्ष्मीक्कुट्टि अम्मा, श्रीमती रत्नमयी देवी, एन. के. उण्णित्तान्, परमेश्वरन् नंपूतिरी, सोमवर्मा राजा और नारायण-देव के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

हिन्दी के कुछ श्रेष्ठ ग्रंथ जैसे कामायनी, पंचवटी, गोदान आदि का अनुवाद मलयालम में हुआ। लेकिन पुस्तक-रूप में प्रकाशित अनूदित-ग्रंयों की संख्या कम है। ऐसे अनुवादों में महाकवि वेण्णिक्कुळम् गोपाल कुरुप का तुलसीकृत रामचरित मानस का अनुवाद प्रशंसनीय है। गोपाल कुरुप मलयालम के अनश्वर कवि हैं और हिन्दी-भाषा पर भी उनका समान अधिकार है। इस कारण उनका यह अनुवाद पर्याप्त सुन्दर बन पड़ा है।

सारांश यह कि मलयालम भाषा-भाषी हिन्दी-लेखकों की कमी नहीं है। इन लेखकों ने हिन्दी-साहित्य की विविध विधाओं में कलम चलायी है और उच्च स्तरीय ग्रंयों का सृजन किया है। कई लेखक बहुमुखी प्रतिभा के धनी हैं। किन्तु दुख इस बात का है कि विरले ही सौभाग्यशाली लेखकों को प्रकाशक मिल सके हैं। शेष लेखकों की रचनाएँ अंधकार में पड़ी हुई हैं, जिन्हें प्रकाश में लाने केलिए उत्तर भारतीय प्रकाशकों के सहयोग की अपेक्षा है। अन्यथा असमय में ही इन सृजनशील प्रतिभाओं के मुर्झा जाने की संभावना है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

व[illegible] भव डा. एन.पी. कुट्टन पिल्ल

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE